मंगल भावना

मा मरुधरा के क्रोड से उदित हुआ एक नन्हा सा गृहदीप अगणित आंधियो, झझावातो एव तूफानो के आघातो को साहसपूर्वक सहन करता हुआ ६२ वर्षों जैसी सुदीर्घावधि की अनवरत साधना द्वारा आज अखिल अध्यात्म क्षितिज का कोटि-कोटि सूर्य समप्रभ अलौकिक आलोकपुञ्ज बन विश्व को शान्ति-श्रेयम् का प्रशस्त पथ प्रदर्शित कर रहा है, नर से नारायण बनने की अनुभूत राह दिखा रहा है, उस तपोपूत अध्यात्मयोगी महासन्त आचार्य प्रवर १००८ श्री हस्तीमल जी महाराज साहब के प्रवचनामृत से पूर्ण यह अक्षय अमृतकलश अपने सुधा-सीकरो से इस धरा को साकार स्वर्ग का स्वरूप प्रदान कर जन-जन को अपवर्ग का अधिकारी बनाये, यही मगल-मूल, अमगलहारी प्रभु से प्रार्थना है।

—प्रसन्नमल डूगड

(डूगड प्रतिष्ठान, मद्रास-६०००३१)

गजेन्द्र व्याख्यान माला

[भाग ३]

प्रवचनकार

आचार्य-श्री हस्तीमल जी महाराज

सम्पादक

श्री गजसिंह जी राठोर

श्रीचन्द सुराना 'सरस'

प्रकाशक

सम्यग् ज्ञान प्रचारक मण्डल

जयपुर (राजस्थान)

स्व० श्रीमान् मोहनमल जी दूगड़ की पुण्य स्मृति में

☐ गजेन्द्र व्याख्यान माला
[भाग ७]

☐ प्रवचनकार आचार्य श्री हस्तीमल जी महाराज

☐ पृष्ठ संख्या ३३८

☐ प्रकाशन सहयोग
दुगड प्रतिष्ठान
राउण्ड हाउस
९, स्पर टैंक रोड, चेतपेठ, मद्रास-३१

☐ प्रकाशक
सम्यग ज्ञान प्रचारक मण्डल
बापू बाजार, दुकान नं० १८२-१८३ के ऊपर
जयपुर-३०२ ००२ (राजस्थान)

☐ प्रथमावृत्ति
वि० स० २०३९ भाद्रपद
अगस्त १९८२

☐ स्वाध्याय प्रवृत्ति के प्रोत्साहन हेतु
स्वाध्याय प्रेमियो को सादर अमूल्य

☐ मुद्रक
श्रीचन्द सुराना के निदेशन मे
श्री विष्णु प्रिंटिंग प्रेस
आगरा।

प्रकाशकीय–शब्द

स्वाध्याय से जो प्रत्यक्ष लाभ है, वह है–स्वात्मरमण की सुखानुभूति और प्रशम-रस की अनुभूति। स्वाध्यायशील व्यक्ति से प्रमाद, आलस्य और अविवेक दूर रहते है, तथा जागृति, सचेतनता, स्फूर्ति और सुविवेक—सहज स्फुरित होते रहते है।

आज स्वाध्याय की प्रवृत्ति पहले से कुछ विकसित हो रही है, स्वाध्याय के प्रति रुचि, लगन और उत्साह नजर आ रहा है, इसके अनेकानेक कारण हो सकते है, पर जो मुख्य कारण है वह हमारे विचार मे एक है—स्वाध्याय के आत्मगत लाभ की प्रत्यक्ष अनुभूति।

मनुष्य की वृत्ति स्वार्थोन्मुखी अधिक रहती है, जिस कार्य मे उसे लाभ या फायदा नही होता, उसमे चाहे जितना कोई कहे, वह प्रवृत्त नही होता, पर जिस कार्य मे उसे अपना हित, लाभ, स्वार्थ या फायदा नजर आता है, उस कार्य मे वह धीरे-धीरे रस लेने लगता है, उसकी रुचि स्वय उस ओर बढने लगती है। स्वाध्याय के सम्बन्ध मे भी हमारा यही अनुभव है।

विगत दस वर्षो मे स्वाध्याय की प्रवृत्ति को विशेष रूप से प्रोत्साहन देने मे, स्वाध्याय के प्रयोग, विधि और लाभो से व्यक्तिगत एव सामूहिक रूप से परिचित कराने मे, परम श्रद्धेय, बाल ब्रह्मचारी चारित्र चूडामणि गुरुदेव आचार्य श्री हस्तीमल जी महाराज साहब का अतुलनीय योग रहा है। यह भी कहा जा सकता है कि स्वाध्याय की सुप्त-वृत्ति-प्रवृत्ति को पुनर्जागृत करने का प्रथम श्रेय आचार्य श्री की दूरदृष्टि को ही जाता है। समाज मे आज जहाँ अन्यान्य बाह्य प्रवृत्तियो को विशेष प्रोत्साहित किया जा रहा है वहा श्रद्धेय आचार्य श्री स्वाध्याय–सामायिक–ध्यान जैसी अन्तर्मुखी प्रवृत्तियो को प्रोत्साहन देने मे दत्त चित्त है, सतत श्रमनिष्ठ है।

ग्राम-ग्राम मे स्वाध्याय सघो की स्थापना, स्वाध्यायी जनो मे प्रवचन-भाषण सुनने की उत्सुकता तथा स्वाध्याय-योग्य ग्रन्थो के अनुशीलन की वृत्ति—इस युग का एक शुभ चिन्ह और मगल मय सकेत कहा जा सकता है। आज स्वाध्याय प्रेमियो की बराबर माग आती रहती है कि स्वाध्याय-योग्य सद-साहित्य की पूर्ति की जाय। प्रेरणाप्रद और जीवन निर्माणकारी साहित्य उपलब्ध हो ऐसी व्यवस्था की जाय।

वि स० २०३७ ई सन् १९८० मे मद्रास मे परम श्रद्धेय आचार्य श्री का ऐतिहासिक चातुर्मास सम्पन्न हुआ। इस चातुर्मास मे जहा तपस्या त्याग-प्रत्याख्यान, मैत्री, दया आदि आत्मोन्मुखी प्रवृत्तियो का विशेष रूप से उदबोधन हुआ, वहाँ स्वाध्यायशीलता पर अत्यधिक बल दिया गया, और जन-जन मे सामायिक-स्वाध्याय की एक अपूर्व लहर सी उमड पडी। आचार्य प्रवर के प्रवचनो मे मुख्यतः सस्कार-निर्माण, व्यवहार-शुद्धि और स्वाध्यायशीलता पर ही बल दिया जाता। प्रवचनो मे अपार श्रोताओ की शान्त उपस्थिति इस बात का प्रमाण थी कि वे प्रवचन कितनी शान्ति, तन्मयता और रुचिपूर्वक सुनते हैं। श्रोताओ मे एक अपूर्व आकर्षण था।

मद्रास के श्री सघ ने इन प्रवचनो का सकलन कराया और इन्हे जन-जन के लाभ हेतु प्रकाशित करने की योजना भी बनाई। इन्ही प्रवचनो मे से कुछ प्रवचन (२७ प्रवचन) प्रस्तुत गजेन्द्र व्याख्यान माला भाग ७ मे प्रकाशित किये जा रहे है।

पाठक यह अनुभव करेगे कि आचार्य श्री के प्रवचनो मे एक विशेषता है—कि वे जीवन-स्पर्शी तथा सुसस्कार निर्माणकारी होते है। आचार्य देव की वाणी मे एक सहज प्रवाह है, अनुभव और ज्ञान की ऐसी मिश्रित मधुरता है कि श्रोता सुनते-सुनते भाव-विभोर हो उठता है तो पाठक पढते-पढते अन्त स्फुरण अनुभव करने लगता है। एक सहजयोगी की सी विचार-धारा मन मस्तिष्क को आलोडित करती हुई तदाकार

बना देती है। एक गहरी सुखानुभूति, जिसे स्वात्मानुभूति भी कह सकते हैं। श्रोता और पाठक को प्राप्त होती है, जो हजारों ग्रन्थों के पर्यालोडन से भी शायद न मिले।

इन प्रवचनों का प्रकाशन--धर्मप्रेमी उदारमना सेठ स्व० श्री मोहनमल जी सा दूगड की पुण्य स्मृति में किया जा रहा है—दूगड प्रतिष्ठान द्वारा। दूगड प्रतिष्ठान मद्रास का सत्सहयोग स्मरणीय तथा अनुकरणीय है, पाठकों के लिए आदरणीय भी।

इन प्रवचनों का सपादन किया है, सुविश्रुत मनीषी श्री गजसिंह जी राठौर एव श्रीयुत श्रीचन्द जी सुराना ने। मुद्रण कार्य में भी श्रीयुत श्रीचन्द जी सुराना का आत्मीय सहयोग प्राप्त हुआ है। हम आशा करते हैं कि, भविष्य में भी इसी प्रकार सबका सहयोग प्राप्त होता रहेगा और हम स्वाध्याय-योग्य सत्साहित्य पाठकों की सेवा में प्रस्तुत करते रहेंगे।

उमरावमल ढड्ढा
(अध्यक्ष)

टीकमचन्द हीरावत
[मन्त्री]

सम्यग् ज्ञान प्रचारक मण्डल
जयपुर।

धर्मप्रेमी समाजसेवी उदारमना

स्व० सेठ श्री मोहनमल जी दूगड़

भगवान महावीर ने स्थानाग सूत्र मे कहा है—

पियधम्मे णामेगे दढधम्मे

कुछ व्यक्ति धर्म प्रिय भी होते है, धर्म मे रुचि व श्रद्धा रखते है, धर्म मे प्रेम रखते हैं, पर समय आने पर, बलिदान का वक्त आने पर पीछे हट जाते है, किन्तु कुछ व्यक्ति प्रिय धर्मी भी होते है और दृढ धर्मी भी, वे धर्म से प्रेम भी रखते हैं, और स्वय का बलिदान भी कर सकते है।

मद्रास निवासी सेठ श्री मोहनमल जी साहब दूगड प्रियधर्मी भी थे और दृढ-धर्मी भी। धर्म उनके जीवन के कण-कण मे रमा था और रमी थी गुरुदेव आचार्य भगवान के प्रति अटूट आस्था।

आपका जन्म जोधपुर नगर मे वि० स० १९७८ आसोज सुदि नवमी को हुआ। आपके पिता श्री मनोहरमल जी साहब दूगड भी धर्म प्रेमी श्रावक थे। ५ वर्ष की लघु अवस्था मे वात्सल्यमयी माता का स्वर्गवास हो गया। आप पिता श्री की छत्र छाया मे बडे हो रहे थे कि कुछ समय बाद पिताश्री का भी असह्य वियोग सहना पडा।

आप ९ वर्ष की लघु अवस्था मे ही मद्रास शहर मे आ गये। यहाँ आकर शिक्षा प्राप्त की। धार्मिक रुचि थी, अत छोटी उम्र मे ही धर्म-कार्यों मे भाग लेते, साधु-सन्तो की सेवा करते।

धर्म कल्पवृक्ष तुल्य है, असहारा का सहारा है। आप धर्म के प्रति लगनशील थे। उसी धर्म के प्रभाव से बहुत शीघ्र ही आप व्यापार मे लगकर लक्ष्मी कमाने लगे। प्रामाणिकता, कठोर परिश्रम, बुद्धिमानी और सबके साथ सहयोग की भावना, उदारता, दानवृत्ति, जीवदया—आदि आपमे सहज रूप से थी, और इन सद्गुणो के ...ण ही आपने विपुल लक्ष्मी कमाई, यश और प्रतिष्ठा भी प्राप्त की।

धर्मप्रेमी समाजसेवी उदारमना

स्व० सेठ श्री मोहनमल जी दूगड़
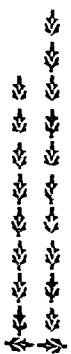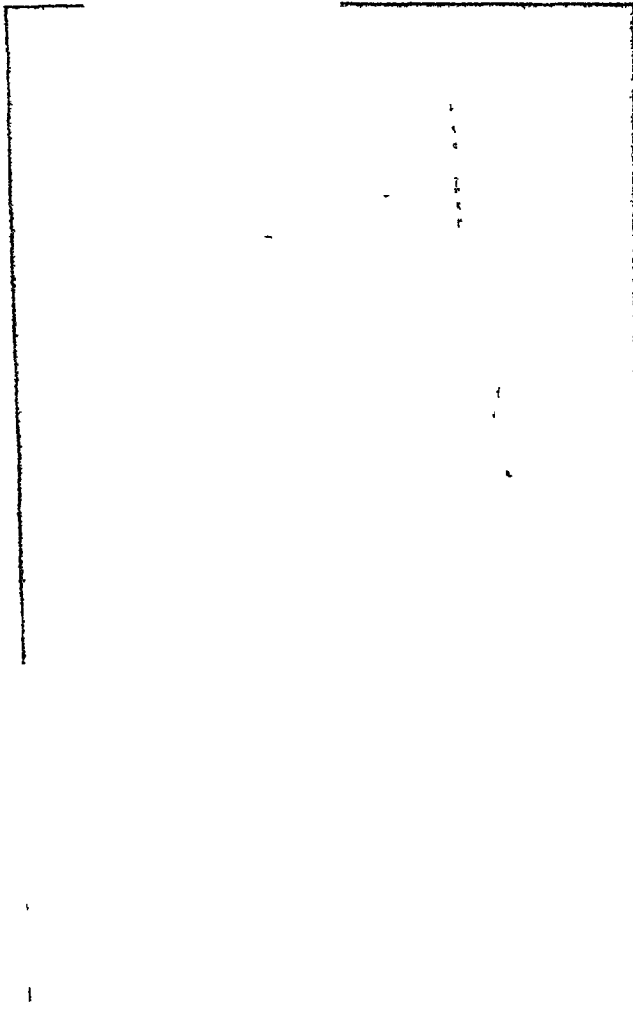
जन्म—
वि० स० १९७८
असोज सुदि ९
जोधपुर।

स्वर्गवास—
१५ नवम्बर, १९८१
मद्रास।

अपने हाथ से लाखो करोडो की सम्पत्ति कमाकर भी आपका स्वभाव वडा दयालु, विनम्र ओर शान्त था। धर्म के प्रति दिनोदिन आस्था वढती गई। साथ ही सामाजिक कार्यो मे सहयोग और आगे वढ कर जिम्मेदारी उठाने की उदारवृत्ति के कारण आपने अनेक सस्थाओ का दायित्व कुशलता पूर्वक सभाला। जैसे—

अध्यक्ष—श्री श्वे० स्थानकवासी जैन श्रावक सघ, साउकार पेठ मद्रास
मन्त्री—श्री जैन हिन्दी प्राईमरी स्कूल, मद्रास
मन्त्री—श्री गणेशी वाई गेलडा स्कूल, मद्रास
उपाध्यक्ष—अहिंसा प्रचारक सघ, मद्रास
उपाध्यक्ष—श्री जैन रत्न श्रावक सघ
अध्यक्ष—श्री जैन महिला सघ,

आचार्य देव वाल ब्रह्मचारी पूज्य श्री हस्तीमल जी महाराज साहब के प्रति प्रारम्भ से ही आपके हृदय मे असीम भक्ति व दृढ आस्था थी। आचार्य श्री के मार्ग-दर्शन एव प्रेरणा से आपमे स्वाध्याय एव सामायिक-साधना मे भी विशेष प्रवृत्ति जगी। धार्मिक पुस्तको के स्वाध्याय का आपको विशेष शौक था। समय-समय पर सघ लेकर आप आचार्य देव आदि मुनि-मण्डल के दर्शनार्थ पधारते, तथा मद्रास चातुर्मास की विशेष प्रार्थना करते। मद्रास चातुर्मास मे आपने वडे ही उत्साह के साथ धर्म सेवा की। आपकी भावना थी कि आचार्य श्री के मद्रास चातुर्मास के प्रवचन पुस्तक रूप मे प्रकाशित हो, आज यही भावना साकार हो रही है।

आप श्री ने सारे परिवार के नाम से एक ट्रस्ट वनाया, ट्रस्ट की आय से धार्मिक एव सामाजिक कार्यो मे सहयोग किया जाता है। श्री मोहनमल ढूगड चैरिटेबल ट्रस्ट मद्रास मे आज सुन्दर सेवा कार्य कर रहा है।

आचार्य श्री के रायचूर चातुर्मास मे आपश्री गुरुदेव की सेवा के लिए पधारे। वैसे हर चातुर्मास मे आपश्री १ महीने गुरुदेव श्री की सेवा करते थे। रायचूर से सेवा करके १४ नवम्बर १६८१ को आप वापस मद्रास पधारे और १५ नवम्बर को अकस्मात् हृदयगति रुक जाने से आपका स्वर्गवास हो गया। समाज का एक देदीप्यमान नक्षत्र अस्त हो गया। आपकी सत्तर वर्ष की अवस्था थी तथा आपने कोसाना चातुर्मास मे आचार्य श्री से श्रावक व्रत भी ग्रहण किये थे। अपने हाथ से लाखो का दान भी किया।

आपकी धर्मपत्नी श्रीमती उगम कँवर बाई दूगड भी आपकी भांति मे बहुत रुचि रखती हैं और बच्चों को सदा धर्म की शिक्षा देती रहती हैं भी यही भावना रहती है कि आचार्य श्री एव साधु-सतियो की सेवा जीवन को धर्म ध्यान मे व्यतीत करूँ। आपका हृदय बडा उदार, स्वभ और सेवा परायण है।

श्री मोहनमल जी साहब आज हमारे बीच नहीं रहे, किन्तु उन आदर्शों को कायम रख कर समाज एव धर्म की सेवा करने वाले उनके सुपु साथ है, और पिता श्री के गौरव मे चार चाँद लगा रहे हैं। अ सुपुत्र है—

१ श्री परसनमल जी दूगड
२ जसवन्तमल जी दूगड
३ सुमेरमल जी दूगड
४ नवरत्नमल जी दूगड
५ रमेशमल जी दूगड

आपका मद्रास व बंगलोर मे फाइनेन्स का व्यवसाय है। आपकी दो है—१ श्रीमती सुशीलादेवी, २ चचल बाला।

प्रस्तुत प्रवचन पुस्तक का प्रकाशन दूगड बन्धुओ के अर्थ सौजन्य से मोहनमल जी दूगड की स्मृति मे किया जा रहा है। आपका यह अनुकरणी सभी को प्रेरणा देगा।

—गौतमर
(हुं

गजेन्द्र व्याख्यान माला

[भाग ७]

अनुक्रम

१

मंगलमय पर्युषण पर्व

प्रार्थना

वीर सर्व-सुरासुरेन्द्रमहितो, वीरं बुधा सश्रिता ।
वीरेणाभिहत स्वकर्म-निचयो, वीराय नित्य नम ।।
वीरात्तीर्थमिद प्रवृत्तमतुल वीरस्य घोर तपो ।
वीरे श्री-घृति-कान्ति-कीर्ति-निचयो, हे वीर भद्रं दिश ।।

मुमुक्षु वन्धुओ !

ससार मे कई प्रकार के त्यौहार आपके सामने आते रहते है और विविध त्यौहारो के उपलक्ष मे आप आमोद-प्रमोद करने के साथ अपने मन को वहलाने का प्रयास करते है। लेकिन उन सव मे अन्तत तन से भी, धन से भी, वल से भी, वुद्धि से भी उनमे क्षीणता का प्रसग ही प्राप्त होता है। किन्तु यह पर्वाधिराज त्यौहार कुछ ओर ही अपनी विशेषता लेकर ससार मे आया हे। न मालूम इस काल मे क्या ऐसे शुभ परमाणु है कि वह सहज ही जन-जन के मन को आह्लादित कर देता है और वक्त मे जो कहने पर भी आने को तैयार न हो, व्रत करने को तैयार न हो लेकिन इस पर्व के दिनो मे वच्चे, वूढे, मातायें, वहने अगल-वगल से दौडे-दौडे आते है और पता नही चलता है कि इतनी जन-मेदिनी कहाँ रहती है, किधर से आ गई।

आज ऐसा लग रहा है कि जैसे जैन समाज सारे नगर मे व्याप्त है। ऐसे चार-पाँच जगह पर श्वेताम्वर समाज की ओर से प्रवचन की व्यवस्था होने पर भी आने वाले लोग पूरी तरह से सन्तोषप्रद स्थान पर वैठ नही पा रहे है। तीन जगह अपने यहाँ व्याख्यान की व्यवस्था है और

दो जगह मन्दिर-मार्ग वालो की ओर से व्यवस्था है, गली कूँचो मे आते-जाते वडी भीड लगी है। मालूम होता है कि गली-गली मे जैन लोग ही रहते है।

पर्युषण-काल मे परमाणु भी पवित्र

यह सारा आकर्षण, यह सारा महत्त्व किन पवित्र परमाणुओ के कारण है ? प्रकृति की ओर से भी इस प्रकार अनुकूलता होने से क्षेत्र के परमाणुओ से पवित्र वातावरण की हवा चलती है जो जन-मन को आह्लादित कर देती है। जव साधारण जन-मन को आह्लादित कर देती है तव प्रकृति का ताप वन्द हो जाता है, प्रकृति के विक्षेप की स्थिति वन्द हो जाती है। ऐसा वातावरण शासनदेव की कृपा से, विश्वहित का सन्देश देने वाले भगवान महावीर की वाणी के प्रभाव से निर्मित होता हे। इस पर्व के समय मे ऐसी वाणी प्रवाहित होती है कि जिसके कारण सर्वत्र शान्ति मिली है और मिलती है। पूरी आराधना की जाय तो यह विश्व मे शान्ति का विस्तार करने वाला पर्व है। मुझे याद है, इन्ही पर्व के दिनो मे भारतवर्ष स्वतत्रता प्राप्त करके स्वाधीनता का आनन्द देख पाया था। यह कितना मगलमय पर्व है।

पर्युषण नामकरण का हेतु

इस पर्व का नाम पर्युषण क्यो है ? दशाश्रुतस्कन्ध सूत्र का आठवाँ अध्याय 'पर्युषणा कल्प' के नाम से है। इसका दूसरा नाम **'पज्जुषणा कप्पो'** है। यह इसका पूरा नाम है। पर्युषण पर्व मनाने की व्यवस्था आठ दिन की की गई है। यह सारी वैज्ञानिक ढग से सोच-समझकर महर्षियो द्वारा की गई व्यवस्था है।

शान्ति के साथ सावधानी भी आवश्यक

मैं चाहूँगा कि भाई लोग शान्ति वनाये रखने के साथ-साथ सावधानी भी वनाये रखे। निद्रा और तन्द्रा से भी कुछ वचाव करें। वोलकर आपके सामने अपने विचार रखने का काम मेरा होगा। वैसे ही शान्ति से और ध्यान से सुनने का प्रयास आपका होगा तो दोनो के प्रयास से काम बन सकेगा। मैं प्रयास करूँ और आपका प्रयास नही हो तो काम नही चलेगा। आप सुनने का प्रयास करे और मै सुनाने का प्रयास नही करूँ तो भी काम नही चलेगा। यह व्यवस्था ढग से होनी चाहिए। मैं यह भी कहूँगा कि कभी-कभी धर्म की दलाली करने के रूप मे मन मे रस आता है तो कभी-कभी दया की दलाली करते हैं, कभी सामायिक कराने की दलाली करते

है, कभी दूसरो को धर्मस्थान मे लाने की दलाली करते है, लेकिन पर्व के दिन जो नये भाई आये है उनको सुनने की सुविधा देने की वात भूल जाते है, उनको वैठने के लिए स्थान देने की वात भूल जाते है और अपनी सीट का रिजर्वेशन कायम रखने की कोशिश करते है। यह नही सोचते कि नये आने वाले भाई भी लाभ के भागी वने। इस वात की ओर हमारे कार्यकर्त्ता कुछ लक्ष्य देते है लेकिन अधिकाश भाई लक्ष्य नही देते है। नतीजा यह होता है कि जो नये पिपासु आते है उनको जितना महत्त्वपूर्ण ढग से लाभ मिलना चाहिए, उतना नही मिलता। इसलिए मैं भाई-वहनो से निवेदन करूँगा कि जो दूर-दूर से उत्सुकता के साथ सुनने के लिए आये है—चाहे वे जैन है या जैनेतर है उनको ठीक ढग से वैठने का मौका दें। आपके अलग-वगल मे जो गाँठे, पेटियाँ पडी हैं, उनको ठीक तरह से रखें। कई समाज के लोगो मे ऐसा देखते है कि घर से ही वस्त्र वदलकर आते है। जो लोग पूजा करने के लिए जाते है वे घर से ही धोती और दुपट्टा वदल कर जाते है। उनको मन्दिर के कमरे मे अपना सामान रखने की जरूरत नही पडती। गाँव से आने वाले लोगो के लिए ठहरने आदि की व्यवस्था की जाती है। ऐसी व्यवस्था आपके पडौसी समाज मे है। हमारी व्यवस्था यह है कि कपडे खोलकर पास मे रखेंगे, सामने रखेंगे, चोरी-चकारी का भय है, कपडे गुम जाने का भय है, इतना त्याग नही है कि कोई गठडी ले गया तो ले गया, वही पहन लेगा। इसलिए वहुत से भाई गाँठ अपने पास मे रखते है। यह भी स्थान की कमी का कारण वन जाता है। व्यवस्था करने वाले भाई इसकी व्यवस्था करेंगे। आप चाहे तो व्यवस्था की ओर ध्यान देने का लक्ष्य दे।

मुझे यह कहना है कि हमारे पर्व के आठ दिन है। पूरा जैन समाज दो भागो मे वँटा हुआ है—एक श्वेताम्वर और दूसरा दिगम्वर। जैन समाज के मुख्य परम्परा-भेद से दो परम्परायें जिनशासन मे चली।

(आप लोग विक्षेप नही करे, शान्ति रखे। समाज मोटा है और जगह छोटी है, लेकिन आपका दिल मोटा होना चाहिए। दिल का सकोच या विस्तार हो सकता है। जगह का विस्तार अभी नही हो सकता। थोडा-थोडा हरेक भाई-वहन दिल को मोटा करेंगे तो आने वाले को ज्यादा लाभ होगा। हमने कई जगह ऐसा देखा है कि सभा-भवन मे वैठने की जगह कम होती है तो कुछ भाई-वहन खडे रहकर भी सुनते है। ऐसे उदाहरण हमारी नजर मे आते है। आप

आराम से वैठे हैं। थोडा सकोच करके वैठे तो वह तकलीफ का नही, लाभ का ही कारण है।)

सतो ने काव्य की भाषा मे कहा है—

यह पर्व पर्यु षण आया, सब जग मे आनन्द छाया रे ।
यह पर्व पर्यु षण आया ।
यह विषय कषाय घटाने, यह आत्मिकगुण विकसाने ।
जिनवाणी का बल लाया रे, यह पर्व पर्यु षण आया ।।

अनेक प्रकार के पर्व

पर्व अनेक प्रकार के है, हर पक्ष और मास मे पर्व आते है। पचमी पर्व होता है, अष्टमी पर्व होता है, एकादशी पर्व होता है, चतुर्दशी पर्व होता है। पाक्षिक पर्व होता है। चौमासिक पर्व भी होते है। सुना है आपने, चौमासी पर्व कव-कव होता है ? आषाढी चौमासी, फाल्गुनी चौमासी और कार्तिकी चौमासी। ये तीन चौमासी पर्व आते हैं। इसी तरह से पाक्षिक पर्व है, चतुर्दशी पर्व है।

पर्यु षण पर्व की विशेषता

लेकिन यह जो आज हमारे सामने पर्व आ रहा है यह पर्वाधिराज पर्व है। हम जिसका प्रारम्भ आज कर रहे हैं, यह है पर्वाधिराज पर्व। इसका दूसरा नाम है 'पजुसणा कल्प'। पजुसणा कल्प क्या ? शब्द का नाम है। यह बडा भाववाही नाम है। यह क्रिया का सचार करने वाला है। यह भौतिक सम्पदा, भौतिक विशेषता, ऊँचा पद, श्रीमताई दिखाने वाला या समाज मे गौरव का रूप दिखाने वाला पर्व नही है। लेकिन आत्मा मे कितना विकास है, आपके आत्म-गुणो मे कितनी चमक आई है, आत्मा कितनी शुद्ध हुई है, विषयो को कितना दूर किया है, कषाय कितने दूर किये है, जीवन वीतराग भाव के कितना निकट आया है यह सब देखने-दिखाने के लिए आज जो यह पर्व आया है, इसका नाम है पर्यु षण।

पर्यु शब्द के विभिन्न अर्थ

सस्कृत मे 'पर्यु षण' शब्द के दो विभाग किये जा सकते है—'परि' और 'उपशमन'। 'परि' का अर्थ है चहुँ ओर से, वाहर और भीतर से कषायो का उपशमन, विकारो का उपशमन हो, जिसमे वाहर से विकारो का उपशमन कर लिया जाय और भीतर से भी उपशमन कर लिया जाय,

ऐसे पर्व का नाम है 'पर्युपशमन'। यह तो उपशमन की दृष्टि से पर्युषण शब्द का अर्थ है।

इस शब्द का दूसरा अर्थ है 'परिवसनम्'। आत्मा के निकट शुभ दशा मे अन्तरग और वहिरग भाव से जीवन को वसाना -- इसका नाम है 'परिवसनम्'।

. इसका तीसरा अर्थ "उप दाहे" है। सस्कृत व्याकरण की 'उष दाहे' धातु का मतलव होता है जलाना। चाहे गुस्से को जलाया जावे, विपय को जलाया जावे, कपायो को जलाया जावे, कर्मवन्धन को जलाया जावे। ऐसे पर्व का नाम क्या है ? यह 'उप्' धातु से वनता है और नाम है पर्युपण। यह कर्मो के कचरे को जलाने वाला है और आत्मा को आत्म-गुण के नजदीक वैठाने के लिए हमारे यहाँ पयुर्षण शब्द का व्यवहार चलता है।

इसका एक और मतलव है 'वसना'। आत्मा के समीप वसना। जिन मनुष्यो की आदत इधर-उधर जाने-आने की है, घूमने-फिरने की है उनको पर्युपण के दिनो मे एक जगह स्थिर वसने का सकल्प कराने के लिए भी यह पर्व है। वर्पावास मे रहे हुए साधु पज्जुषणा मे अपना स्थिर-वास घोपित कर देते है। आज भी जैन साधु ऐसा ही करते है। इस प्रकार पज्जुपणा का एक अर्थ वर्षाकाल मे स्थिर रहना भी है। यह वाह्य निवास नही, भीतरी निवास है।

दो परम्पराएँ

मैं यह कह रहा था कि पर्युषण के सम्वन्ध मे हमारे जिनशासन मे दो परम्पराओ का रूप वर्तमान मे चल रहा है। एक परम्परा श्वेताम्वर के नाम से है और दूसरी दिगम्वर के नाम से हे। भगवान महावीर के समय शासन मे हम कल्प-भेद के रूप से दो परम्परा देखते है—स्थविर-कल्प और जिनकल्प। स्थविरकल्पी साधुओ के लिए १४ उपकरणो का विधान किया गया है। जिनकल्पी सत दो तरह के होते है—एक है पाणि-पात्री और दूसरे है पात्रधारी। पाणि-पात्री को कर-पात्री भी कहते है। वे हाथ मे अन्न लेकर खाते है और जल भी अजलि से पीते है। पात्र-धारी एक पात्र रखते है और कम से कम दो उपकरण रखते हैं – एक रजोहरण और दूसरा मुखवस्त्रिका। ये कम से कम दो उपकरण और ज्यादा से ज्यादा वारह उपकरण रखते है। यह उनकी वेशभूषा का स्पष्टीकरण किया गया है। कपड़े पहनने वाले भी हैं और नही पहनने वाले भी है।

पात्र रखने वाले भी है और नही रखने वाले भी है। ये एक ही सघ के सदस्य के रूप मे विचरण करते है। यह मैने वता दी भगवान महावीर के काल की वात।

भगवान महावीर के निर्वाण के वाद ८ पाट तक भगवान का शासन सुन्दर ढग मे एक छत्र मे एक ही आचार्य के नेतृत्व मे चलता रहा। इसका विशेप विश्लेपण या स्पष्टीकरण करने का अवसर अभी नही है। सक्षिप्त सूचना के तौर पर कुछ वाते वता रहा हूँ, जिन्हे आप ध्यान मे रखेगे।

भगवान महावीर के निर्वाण के वाद ६०९ वर्ष वीत जाने के पश्चात् हमारा जैन सघ दो धाराओ मे वँट गया—एक दिगम्वर परम्परा और दूसरी श्वेताम्वर परम्परा। दिगम्वर परम्परा मे भी चार सघ प्रमुख रूप से हुए है—काष्ठा सघ, मूल सघ, माथुर सघ और गोप्य सघ। सारी वाते तो आप याद रख सके या नही रख सके लेकिन कुछ व्यक्ति लक्ष्य रखे तो वात अलग है। इसलिये लम्वी वात नही कहकर मुद्दे की वात कहने की कोशिश करूँगा। यह भी प्रसग आ गया इसलिए कह दिया।

पर्युषण पर्व मनाने की परम्पराएँ

पर्युपण पर्व दो तरह से मनाये जाते है। एक परम्परा दस दिन मनाने की है और दूसरी परम्परा आठ दिन मनाने की है। इसका कारण क्या है? इसका कारण यह वताया है कि जैन सघ मे दो परम्पराये चल रही है—श्वेताम्वर और दिगम्वर।

श्वेताम्वर परम्परा वाले आठ दिन का पर्युषण पर्व मनाते है जिसको अष्टाह्निक या अठाहि पर्व कहते है। इसको मनाने वाले केवल मनुष्य ही नही है वल्कि असख्य योजन की दूरी से देव और देवियाँ भी मनुष्य लोक मे आते है और वे यहाँ आकर धर्मध्यान के साथ वीतराग भाव का चिन्तन करते हैं और गुणगान करते हुए इस पर्व को मनाते है, लेकिन हमारा सद्भाग्य है कि हम व्रत, नियम एव त्याग-तप भी कर सकते है।

एक परम्परा मे अष्टान्हिक पर्व भाद्रपद कृष्णा १३ को प्रारम्भ होकर भाद्रपद शुक्ला पचमी को पूर्ण होता है और एक मे भाद्रपद कृष्णा १२ को प्रारम्भ होकर शुक्लपक्ष की ४ को पूर्ण होता है। दिगम्वर परम्परा मे भाद्रपद शुक्ला ५ को प्रारम्भ होकर चतुर्दशी को पूर्ण होता है। इसे दशलक्षणी पर्व कहते है।

एक परम्परा की साधना का जो अन्तिम दिन होता है वही दूसरी परम्परा (दिगम्बर परम्परा) का प्रारम्भ का दिन होता है।

जैन परम्परा के अलावा वैष्णव आदि दूसरी परम्पराये भी भादवा सुदी ५ को ऋषि पचमी के रूप मे मनाते है। इस पचमी को धर्म-पर्व के रूप मे सबने मान्यता प्रदान की है। ऋपि पचमी को हमारे यहाँ किस रूप मे कहा जाता है ? सवत्सर वर्ष के हिसाब से इसका नाम सम्वत्सरी पडा है। कभी चतुर्थी की घडियो मे पचमी आ जाती है तो चतुर्थी को भी सम्वत्सरी मनाई जाती है और प्रतिक्रमण भी उसी दिन हो जाता है लेकिन पचमी के मेल के बिना सवत्सरी नही होती।

यह हुई पर्युपण के काल की बात। यह पर्व आठ दिन तक मनाया जाता है और इन दिनो मे अतगड सूत्र की वाचना का चयन किया गया है। श्वेताम्बर परम्परा मे कल्पसूत्र के वाचन को स्थान दिया गया है। कल्पसूत्र का वाचन करके आठ दिन का कार्यक्रम पूरा करते है। इसमे तीर्थंकरो के पचकल्याणक आते है—च्यवन कल्याणक, जन्म कल्याणक, दीक्षा कल्याणक, कैवल्य कल्याणक और निर्वाण कल्याणक।

पर्युषण पर्व का लक्ष्य

हमारे कुछ भाई उत्सवप्रिय है इसलिए पर्युषण के दिनो मे भी उत्सव को महत्त्व दिया जाता है, किन्तु पर्युषण का एकमात्र लक्ष्य है, हमारे कर्मो की बेडी काटना। साधना का मतलब क्या है ? अनन्त-अनन्त काल से यह जीव आठ कर्मो की बेडी मे जकड गया है, पकड गया है। उसको इन कर्मो की बेडी से मुक्त किया जाय। साधना के बिना मुक्ति नही होती। साधना करने के लिए ही पर्युषण के आठ दिन है। कर्म भी आठ प्रकार के है। इन आठ बन्धनो को काटने के लिए कम से कम टाइम भी आठ दिन का चाहिए। बन्धन कटेगे तभी आत्मगुण प्रगट होगे। सिद्धो के गुण भी आठ है। जो सिद्धो के गुण है वे ही आत्मा के गुण है। जब तक आठ कर्म रहेगे तब तक सिद्धो में प्रगटित आठ गुण प्रकट नही होगे। हमको ये आठ गुण प्रकट करने हैं। हमको खजाना प्रकट करना है, अष्ट सिद्धि मिलानी है, नव निधि मिलानी है, चिन्तामणि रत्न मिलाना है क्या ? उपाय बताऊँ ? श्रोता सब दब गये, देखा महाराज मजाक कर रहे है।

तो जब आठ गुण आपको मिलाने है तो आठ गुणो को रोकने वाले कौन है ? आठ कर्म। वे जब तक आत्मा को जकड़े रहेगे, पकडे रहेगे तब तक आठ गुण प्रकट नही होगे।

आपने कथा सुनी है, मानतु ग आचार्य की ? उनको ४४ तालो की कोठडी मे वद कर दिया । मानतु ग एकाग्र होकर वैठे और ऋषभदेव भगवान की भक्तिपूर्वक स्तुति करते गये । एक-एक श्लोक पढते गये और एक-एक ताला स्वयमेव ही उनकी भक्ति के प्रभाव से खुलता गया । एक ताला खुला तो एक वन्धन से वाहर निकल गये । एक ताला खुला, दूसरा ताला खुला, तीसरा ताला खुला । जैसे-जैसे ताले टूटते गये वैसे-वैसे वन्धन खुलते गये । सभी ताले टूटने के वाद वे कारागार से मुक्त हो गये। इसी तरह आत्मा के पीछे कर्मों के ताले लगे हुए है ।

वह तो परीक्षा का रूप था । उसमे वादी और प्रतिवादी का प्रसग था । कवि वाण अपना महत्त्व कायम रखना चाहते थे और उधर मानतु ग को हलका दिखाने का ध्यान था । राजकीय सूत्र का सहारा लिया गया था । किसके पास मे कितना दैवी वल है, कितना चमत्कार है, कितनी शक्ति है । एक को कोढ हो गया, कोढ से मुक्त हो जावे तो समझें कि तेरे मे शक्ति है, ताकत है, तेरा देव काम करने वाला है । इस तरह की शक्तियाँ चलती थी । वह ऐसा ही युग था । मानतु ग वन्धन से मुक्त होकर वाहर कव आये ? जवकि सभी ताले टूट गये ।

यहाँ आपको समझाने के लिए दृष्टात दिया है । मानतु ग का कोठडी मे बन्द होना शरीर का वन्धन था । इसी तरह से आत्मा के पीछे कर्मो का वन्धन है । वे आठ कर्म के वन्धन काटकर आठ गुण प्राप्त करते है ।

गौतमकुमार आदि राजकुमारो ने आठ कर्म के वन्धन काट कर आठ गुण प्राप्त किये । साधना करके कर्मो के वन्धन काटे । यदि कर्मो के वन्धन नही काटते तो क्या मोक्ष पा लेते ?

नेमिनाथ भगवान के शासन मे साधु कितने थे ? आप मे से कोई जानते है क्या ? इतने स्वाध्यायी वैठे है, कोई तो जानते होगे । मास्टर जी के मुँह से अचानक निकल गया कि १८००० साधु थे । स्वाध्यायियो की शान रह गई । १८००० मे से क्या सभी मोक्ष पधार गये ? सभी नही गये । गौतमकुमार भगवान नेमिनाथ के शासन के साधु थे । वे साधना करके आठ कर्मो के वन्धन काटकर मोक्ष के अधिकारी वन गये ।

पहला बन्धन . ज्ञानावरणीय कर्म

आठ वन्धनो मे पहला बन्धन ज्ञानावरणीय है । ज्ञान गुण को प्रकट करने मे रुकावट करने वाला कौन है ? इसमे रुकावट डालने वाला

ज्ञानावरणीय कर्म है। ज्ञानावरणीय कर्मों को काटे विना ज्ञान गुण प्रकट होने वाला नही है। आप ज्ञान का गुण प्रकट करना चाहते है या नही ? तपस्या की शुद्धि कव होगी ? भक्तो की शुद्धि कव होगी ? सामायिक, सवर आदि कव शुद्ध होगे ? हमारा साधपना और आपका श्रावकपना कव शुद्ध होगा, यह सारी क्रिया शुद्ध, निर्मल और तेजस्वी कव वनेगी ? आप कोई वात वता सके तो पूछूँ ? ज्ञानावरणीय कर्म की जव वडी कटेगी। यह है जो विना ज्ञान गुण के प्रकट हुए समाप्त होगी नही। क्रिया पहले या ज्ञान पहले ? यह पहला सवाल है। अव रहा ज्ञान के पहले भी कोई है क्या ?

आज हमारे पर्युषण का पहला दिन है। पहले दिन की दृष्टि से मैं पहली वात कहूँगा। आठ दिनो मे आठ वाते जैसा अवसर होगा, वैसा कहने के भाव रखता हूँ।

साधना का क्रम

आज पहला दिन है तो पहला पाया क्या है ? आठ कर्म के वन्धन कटे, आठ गुण पैदा हो और पूर्ण वनें, इसके लिए किस क्रम से चलना है ? शुरू-शुरू मे एक को पकडकर चलना या सारे के सारे सामूहिक पकड कर चलना या मूल को पकडकर चलना, किसको पकडकर चलना—इस वारे मे मै आप सवसे प्रश्न कर लूँ। आप भक्त है, विनय का आलम्वन लेकर चलते है इसलिए शायद वोलते नही है। मैं नही कहता, भगवान की वाणी कहती है, वह आपके सामने रख रहा हूँ।

णाण च दंसण चेव, चरित्त च तवो तहा।
एस मग्गो त्ति पण्णत्तो, जिणेहि वरदसिहि॥

यह भगवान महावीर की आगम वाणी है। मेरी या मेरे पहले के दो-चार या दस पीढी पहले के आचार्यों की या भद्रवाहु की या स्थविरो की वाणी नही है, लेकिन भगवान महावीर की वाणी है। प्रभु ने पहले-पहल अपनी वाणी मे कहा—"णाण च दसण चेव"। आज पर्व का प्रारम्भिक दिन है इसलिए मैं भी सोचता-सोचता भगवन्तो का स्मरण करके गुरु का ध्यान करते हुए वोल गया। सोचता था कि वोल सकूँगा या नही। लेकिन गुरु-कृपा का अपूर्व प्रभाव है इसलिए कलाक भर के लिए वोलूँगा। ज्यादा वोलने की मेरी मशा नही है और अधिक वैठने की आपकी क्षमता भी नही है। आज पर्व का दिन है, छोटे-वडे सभी लाभ के लिए आये है। व्रत वाले दिन भर पूरा करेगे, कार्यक्रम वना लेगे।

लेकिन वहनो को घर पर वहुत काम रहता है। रसोईघर को सभालना है, वाल-वच्चो को सभालना है, मेहमान आ गये तो उनके लिए भी व्यवस्था करनी है, कपडे और दागीने सम्भालने है, ये सारे काम है। इसलिए उनको चिन्ता आप से ज्यादा ही रहती है। वे आती भी पहले हैं और जाती भी पहले है।

पहला क्रम : श्रद्धा

साधना के आठ गुणो मे यहाँ एक अपेक्षा से पहले ज्ञान को कह गया हूँ, लेकिन उत्तराध्ययन सूत्र के २८वे अध्ययन की वाणी कुछ और कहती है। इसमे कहा गया है कि हे मानव **ना दसणिस्स णाण** विना श्रद्धा के ज्ञान नही होता। गीता मे कृष्ण भी कहते हैं—"**श्रद्धावान· लभते ज्ञानम्।**" जो श्रद्धावान होगा वही ज्ञान का अधिकारी वनेगा और जिसमे श्रद्धा नही है वह ज्ञान का अधिकारी नही वनेगा। इस दृष्टि से पहला गुण क्या चाहिए ? श्रद्धा। श्रद्धा के विना ज्ञान नही होगा।

आप वच्चो के शिक्षण की वात लीजिए, वच्चा श्रद्धावान होता है तो शिक्षक की हर वात ग्रहण करता जाता है। आप भी स्कूल मे गये होगे। आप मे से कई पहली कक्षा से वढते-वढते १४ वी कक्षा पास करके यूनिवर्सिटी के स्नातक वने होगे, लेकिन पहले-पहल क्या पकडा ? मास्टर ने जो कुछ कहा उस पर श्रद्धा की। तो वच्चे ने पहले-पहल श्रद्धा पकडी। जो वच्चा मास्टर के वचनो पर श्रद्धा नही पकडता वह भौतिक और व्यावहारिक शिक्षण मे आगे नही वढ सकता। इसलिए पहला क्रम है, श्रद्धा।

कभी मास्टर और पालने वाली मातायें कह देती है कि वावो आयो। कभी वच्चा किसी चीज के लिए जिद पकड लेता है तो माता महाराज को आया देखकर कह देती है कि वावाजी पकडकर झोली मे ले जाओ। शुरू-शुरू मे माँ-वाप या मास्टर कोई झूठी वात भी कह देता है तो वच्चा उसको सही मानकर चलता है। माँ ने झूठी वात कह दी तो जव तक वच्चे मे खुद मे समझ नही आ जाती, तव तक माँ की वात को सही समझकर ही चलता है। वह सोचेगा कि वावाजी पकडकर झोली मे डालकर ले जायेंगे। हमने ऐसे टावरो को देखा है। तो परिणाम यह निकला कि वच्चे ने सवसे पहले श्रद्धा पकडी। श्रद्धा होगी, उसको ज्ञान प्राप्त होगा।

श्रद्धा सम्यक् हो

लेकिन हमारे यहाँ श्रद्धा के साथ एक विशेषण देकर कहा कि श्रद्धा

कैसी ? सम्यक् श्रद्धा। अध श्रद्धा नही, सच्ची श्रद्धा। श्रद्धा होगी वहाँ ज्ञान का विकास मिल सकेगा और श्रद्धा नही होगी तो ज्ञान नही मिलेगा।

सच्चे देव-गुरु-धर्म

जिन शासन कहता है कि हे साधक ! यदि पर्वाधिराज पर्यु षण के दिनो मे वधन काटकर गुण मिलाना है तो पहला गुण श्रद्धा का पकड। किस पर श्रद्धा हो ? देव पर श्रद्धा, गुरु पर श्रद्धा और शास्त्र के वचनो पर श्रद्धा हो। आपका विज्ञान क्या कहता है, साइस की थ्योरी क्या कहती है, मास्टर क्या कहता है, ये सारे एक तरफ रह जाते है जवकि शास्त्र कह रहे है, देव कह रहे हैं, गुरु कह रहे है। पहली वात शास्त्रो की और गुरु की मानी जायेगी। सच्चे देव और गुरु कौन है ? 'अरिहन्तो महदेवो, जावज्जीवम् सुसाहुणो गुरुणो"। आप की क्या श्रद्धा है, हमारी क्या श्रद्धा है, वच्चे की क्या श्रद्धा है और वडो की क्या श्रद्धा है ? हम प्रार्थना मे वोला करते है—

देव हमारे श्री अरिहत,
गुरु हमारे श्री निर्ग्रन्थ।
सूत्र हमारा सत्य निधान,
धर्म हमारा दया प्रधान॥

अपने देव है श्री अरिहत भगवान जिन्होने राग-द्वेप और काम-क्रोधादि विकारो को नष्ट कर दिया। उन्होने चार घाती कर्मो का क्षय कर जन्म-मरण की बेडी काट दी वे ही हमारे सच्चे आराध्य देव है। ससार के सव देवी-देव उनके चरणो के सेवक है। फिर भी वहुत से भाइयो को विश्वास नही होने के कारण वे इधर-उधर भटकते है। कभी भेरूँजी को मनाते है, कोई माताजी को मनाता है तो कोई पैगम्वर और पितर की मान्यता करते है। उन्हे अरिहन्त देव पर विश्वास नही है।

शास्त्र कहता है कि—"अरिहन्तो महदेवो।"

अरिहत अर्थात् वीतराग जिनेश्वर देव ही हमारे आराध्यदेव है। वे ही सर्वोत्तम मगल और विश्व के शरणदाता हैं।

निर्ग्रन्थ, जिनके पास वस्तुओ की गाठ नही होती—आवश्यक धर्मोपकरण के अतिरिक्त जो किसी तरह का सग्रह नही रखते, वे ही धर्मगुरु है। साधुओ के पास गाँठ हो तो समझ लेना चाहिए कि ये गुरुता के योग्य नही है। कहावत है कि—नीम-ए-हकीम खतरए जान, नीम-ए-मुल्लाह

काहिशे ईमा ।" कच्चा हकीम और कच्चा मुल्लाह—धर्मगुरु खतरनाक होते है । कच्चे हकीम से जान का खतरा और कच्चे गुरु से ईमान को खतरा है ।

देव, गुरु और धर्म पर सही विश्वास होना—श्रद्धा होना पहला गुण है । कोई वात समझ मे नही आवे तो भगवान की वाणी पर विश्वास होना चाहिए । जिनेश्वर देव ने जो कहा है वह सत्य और शकारहित है । जब तक श्रद्धा का पहला गुण प्राप्त नही होगा तव तक आगे विकास करने की स्थिति प्राप्त नही होगी ।

सफलता की कुंजी श्रद्धा

कहा भी है कि—

श्रद्धा है सार-धार, श्रद्धा ही से खेवो पार ।
श्रद्धा बिन जीव ख्वार, निश्चय कर जानिये ।।

श्रद्धापूर्वक काम किया जाय तो मानव के लिए कुछ असम्भव नही । भगवान की वाणी और आत्मा की शक्ति पर विश्वास चाहिए ।

आचाराग सूत्र मे भगवान् महावीर ने स्पष्ट कहा है **'पुरिसा-तुममेव तुम मित्ता, किं वहिया मित्तमिच्छसि'** । अय आत्मन् ! तू ही तेरा मित्र है, बाहर मे किस मित्र की खोज करता है ? आनन्द सागर तेरे ही भीतर लहरा रहा है, अन्तर्मुखी होकर देख आनन्द भीतर है, वाहर नही ।

देश का इतिहास वता रहा है कि सदियो के पराधीन लोग दृढसकल्प और आत्मविश्वास को लेकर चले तो सर्वबलसम्पन्न प्रभु-सत्ता को हटा कर देश को स्वाधीन करा दे । आत्मा को वन्धन-मुक्त करने के लिए भी हमे श्रद्धा चाहिए । श्रद्धा के साथ ज्ञानपूर्वक क्रिया की तो हमे भी गौतमकुमार की तरह वन्धनमुक्त होते देर नही लगेगी ।

पर्युषण पर्व मे करणीय कार्य

आज पर्व का प्रथम दिन है, आठ कर्मो के बधन को गौतमकुमार की तरह काट कर हमे भी आठ गुण पाने है । ये आठ गुण कौनसे है और आठ दिनो का कार्यक्रम क्या है ? जैसा प्रसग चलेगा, वैसी चर्चा आप और हम करेगे । आज से सम्वत्सरी के दिन तक आठ दिन का कार्यक्रम हर भाई-वहिन को ध्यान मे रखना है । अन्य प्रकार का व्रत, नियम, त्याग नही कर सके, उपवास, पोषध नही कर सके तो इतना ध्यान रखे कि सुबह शाम सामायिक-प्रतिक्रमण अवश्य करे, व्याख्यान श्रवण का लाभ

लें। कुशील का त्याग करना है, रात्रिभोजन का त्याग रखना है। इन दिनो मे सिनेमा, चलचित्र, उपन्यास आदि मे समय बिताने के बजाय स्वाध्याय का कार्यक्रम रखे। ज्ञान गोष्ठी करके अपने तथा दूसरो के टाइम का सदुपयोग करे। आठ दिनो तक किसी की निन्दा नही करे, किसी को गालियाँ नही दे। किसी से लडाई नही करे। प्रमाद छोडकर ज्ञान-ध्यान करें।

यदि आप इस प्रकार के कार्यक्रम मे अधिक से अधिक जुटने का प्रयास करेंगे तो यह लाभकारी, शान्तिकारी, कल्याणकारी और विश्व को सही सदेश देने वाला हो सकता है। हर भाई-बहन एक दूसरे के साथ सयम के साथ व्यवहार करने की कोशिश करेंगे तो यह मगलमय पर्व आपके जीवन को मगलमय, कल्याणकारी और शान्तिकारी बना सकेगा। □

जैन भवन, मद्रास
(दिनांक ८-६-८०, प्रात: १० बजे)

ज्ञान, अज्ञान और विज्ञान

प्रार्थना

अविनाशी अविकार, परमरस धाम हैं।
समाधान सर्वज्ञ, सहज अभिराम है।।
शुद्ध बुद्ध अविरुद्ध, अनादि अनन्त है।
जगत शिरोमणि सिद्ध, सदा जयवन्त हैं।।

वीतराग-वाणी के पिपासु वन्धुओ !

आज पर्वाधिराज का द्वितीय दिन चल रहा है। हम प्राथमिक दिवस मे वहुत वडी शान्ति और मगल वातावरण मे पर्व की आराधना कर चके है। हमारी प्रारम्भिक भमिका का निर्माण अच्छे सुन्दर ढग से हुआ है। अभी सात दिन की साधना हमको अवशेष करनी है। प्राथमिक साधना मे हमे श्रद्धा और ज्ञान को जगाना है लेकिन वन्धन को काटने के लिए क्रिया की मजिल और वाकी रह जाती है। क्रिया की मजिल तक पहुँचने के लिए, तपस्या की कसौटी पर जीवन को कसने के लिए पहले ज्ञान और दर्शन को समझ लेना चाहिए।

पर्व के आठ दिन हम लोग सदियो से मानते आ रहे है लेकिन युग के विचार, आचार और विविध प्रकार की शका, काक्षा के अनुसार स्थिति को सामने रखते हुए इन आठ दिनो मे केवल अन्तगड या कल्पसूत्र का वाचन करके ही हम समाप्त नही करते। इसके साथ हर दिन के विशिष्ट कार्य भी अपने सामने लाना उचित समझते है, इसलिए पर्वाधिराज के जो आठ गुण है, जिन आठ कर्मो का क्षय करना है उस क्रम से अपने यहाँ दिनो का भी कार्यक्रम रखा गया है।

या चिपक गये है उनको खोलने के लिये यह पर्वाधिराज पर्व का मौका आया है।

माई के लालो! साधना करो। तुम्हारी ही तरह आठ कर्मो के बन्धन गौतमकुमार आदि के भी थे लेकिन उन लोगो ने प्रयत्न किया, ज्ञान और क्रिया के साथ साधना की और उन्होने उसी जन्म मे आठ कर्मो के वन्धन सर्वथा तोडकर मुक्ति प्राप्त कर ली। मतलव यह है कि जो मार्ग वतलाया जा रहा है वह अनुभूत मार्ग वताया जा रहा है, जिस पर चलकर हजारो लोगो ने सिद्धि प्राप्ति की, वह अनुभवपूर्ण मार्ग आपको बताया जा रहा है।

श्रद्धा मन से करो

आपको वाहर से ही नही अन्तःकरण से विश्वास करना है, इस मार्ग पर विश्वास करना है, इस धर्म पर विश्वास करना है और वह विश्वास तन मे करने वाले तो वहुत है। दूसरे नम्वर मे वाणी से करने वाले भी वहुत है, लेकिन मन से विश्वास करने वाले मेरी नजर मे कम आ रहे है।

आप मेरी वात समझ रहे है, मान भी रहे है, आपको इसमे वनावटीपन नही लगना चाहिये। मैं जैसे अपनी चौकन्नी नजर से देख रहा हूँ उसी तरह से आप भी अपने मन को, अपने जीवन को देखेंगे। आप रात-दिन कहते हो कि हे भगवन्! हे गुरुदेव! आपकी वाणी सच्ची है, सशयरहित है। आपकी वाणी को लेकर अनन्त जन तिरे है, भविष्य मे भी अनन्त जन तिरेंगे। इसके सिवाय कोई तारने वाला नही है। ऐसा कभी आपने वोला है या नही वोला? वोला है, वोलते हो और वोलते रहोगे। लेकिन जव आचरण करने का रास्ता आता है, चलने का रास्ता आता है, अमल मे लाने का रास्ता आता है तव आप अपनी वात पर कितने कायम रहते हो! इसका मतलव यह है कि हमने श्रद्धा वाणी से की, तन से की लेकिन मन से श्रद्धा करनी चाहिये, वह नही की।

आज्ञा की आराधना

भगवती सूत्र मे प्रभु ने कहा है कि कभी-कभी भक्त के मन मे, श्रोता के मन मे काक्षा मोह का उदय हो जाय, मन मे चचलता आ जाय, दिमाग इधर-उधर घूमने लग जाय और इसकी वजह मे वह यह कहने लग जाय कि आप कहते है वह वात तो सच्ची होगी लेकिन अभी मेरी समझ मे नही आया कि निगोद मे, एक सुई के अग्रभाग जितनी जगह मे

आपको सतो के दर्शन होते है, सतो की वाणी सुनने को मिलती है। मैं आप से एक व्यावहारिक वात कह रहा हूँ। आने वाले भाई एक पावडी पर चढे, दो चढे या १४ चढ गये, कम-वेशी जितनी सख्या होगी सभी पावाडियाँ चढ गये तो सतो के नजदीक आ गये। नीचे थे, तव दूर थे। नीचे से एक पावडी चढे तो कुछ नजदीक आये, दूसरी चढे तो और नजदीक आये, चढते-चढते ऊपर के पगोतिये तक पहुँच गये। सेठ खीवराज जी बैठे है, वहाँ तक आ गये तो नजदीक आ गये। ऊपर आने पर मुनियो के दर्शन हो गये तो पावडिये चढना क्या रहा ? सतो के दर्शन करने का और उनकी वाणी सुनने का एक साधन रहा।

इस दृष्टान्त से समझने की वात इतनी है कि पावडिये चढकर इस भवन मे आने वाला हर कोई सतो के दर्शन निश्चित कर लेगा और जो भविजन जीना चढकर हॉल मे आ गया है वह वाणी पूरी सुन लेगा, यह नियम नही है। सुनने की भूमिका तक तो वह पहुँच गया लेकिन सुनने के लिए उसके कान भी सावधान चाहिए, मन भी सावधान चाहिए, दिमाग भी निश्चिन्त चाहिए और घर की चिन्ता, फिक्र, तनाव से मन दूर चाहिए और एकाग्र वनकर यदि बैठा है और ध्यान की स्थिति वाणी की तरफ है तो सुन पायेगा और नही है तो नही सुन पायेगा। जैन भवन मे बैठे हुए भी कई भाई विना श्रवण किये रह जाते है, ऐसा भी होता है। इसी तरह से यह समझना चाहिए कि अक्षर-ज्ञान मे पण्डित वन जाने पर भी और पी० एच-डी० की डिग्री हासिल कर लेनें पर भी वह ज्ञान पा गया है, यह नियम नही है। यदि वह अपनी आत्मा की शुद्धि करेगा, विषय-कषायो को हटायेगा, वीतराग-वाणी का चिन्तन करेगा तो ज्ञान पायेगा। ज्ञान पाने की भूमिका तक आया है लेकिन ज्ञान नही पाया है। उत्तराध्ययन सूत्र के छठे अध्ययन मे एक गाथा मे कहा है—

ण चित्ता तायए भासा, कुओ विज्जाणुसासण।
विसण्णा पावकम्मेहिं, बाला पंडियमाणिणो ।।

मैं मोटे रूप से ज्ञान, विज्ञान और अज्ञान तीन भेद कर रहा हूँ।

मैं ऐसा देख रहा हूँ कि आप थोडे सिकुडकर बैठ सकते है। कल समाज मोटा दिखता था और जगह छोटी दिखती थी लेकिन आज जगह मोटी दिख रही है और समाज छोटा दिख रहा है, दोनो स्थितियो मे दिल मोटा होना चाहिए।

ज्ञान के लिए संतो ने कहा है—

भूखे रहने से कर्मबन्धन नही कटेगे। जरा मेरे शब्द को ध्यान मे रखना। महीना, दो महीना, या चार महीनो तक कोरे भूखे रह गये कि कर्मो के के वृन्द टूट गये, जल्दी मोक्ष के किनारे पहुँचेगे, यदि ऐसा समझेगे तो भूल करेगे। तप ताकतवर है, कर्मों के वृन्द को काटने वाला है। एक आग की चिनगारी हजारो मन घास को जलाकर समाप्त कर देती है। पेट्रोल की टकी के पास जलती हुई बीडी भूल से डाल दे तो कैसा तमाशा हो सकता है। जलती हुई बीडी, सिगरेट का छोटा सा कण गिरा है, कितना खतरनाक हो जायेगा। जैसे आग की चिनगारी मनो भर भूसे को जलाने के लिए काफी है, वैसे ही तपस्या की चिनगारी कर्मो को काटने के लिए काफी है, लेकिन विधि के साथ, ज्ञान के साथ एक उपवास, यो दो, तीन उपवास, तेला, चौला करे तो हमारी तपस्या मे बहुत बड़ी ताकत है।

चदना ने क्या किया था ? तेला किया था। कहाँ किया था ? भौयरे मे, नीचे के तल मे तेला किया था, जिसको देखने वाला कोई नही था, लेकिन उसने तेला किया, चिन्तन किया, ध्यान किया, आवाज ऐसी पहुँची कि स्वय भगवान महावीर खिचे हुए आये सो तो आये ही लेकिन महावीर के आने से पहले देवलोक मे देवो के आसन भी चलायमान हो गये। चदना के हाथो मे हथकडियाँ और पैरो मे बेडियाँ थी। तीर्थंकरदेव आने वाले हो और हाथ मे हथकडियाँ पडी रहे यह भी सम्भव नही। तीर्थंकरदेव आने वाले हो और पैरो मे बेडियाँ पडी रहे, तन खिचता रहे और मस्तिष्क मुडा हुआ रहे यह सम्भव कैसे हो ? एक क्षण मे देवो के आसन हिल गये। धन्ना सेठ गया हुआ था लोहे के बन्धन काटने वाले को लाने के लिए, लेकिन वह आवे उससे पहले ही बन्धन टूट गये। बन्धन की की जगह कगन आ गये। कहाँ से आये ? हीरे वाले की दुकान से या इमिटेशन वाले की दुकान से ? लेकिन क्या कहा जाय, ज्ञान के साथ जो तपस्या है वह तपस्या ऐसी बडी-बडी शक्तियो को प्रकट कर देती है, जिससे मानव का मन हिल जाता है।

अज्ञान-तप—निःसार

भाई-बहन महीने-महीने भर की तपस्या करते है। भूखे-प्यासे रहने वाले कौन है ? उनके लिए एक विशेषण है 'बालो' यानी जो अज्ञानी जन है, ज्ञानरहित है, जिनको सम्यग्ज्ञान नही है, सम्यग्ज्ञान के बिना मास मास तक भूखे रहकर पारणे के दिन डाभ की अणी पर आवे इतना पारणा

ज्ञान क्या : विज्ञान क्या ?

अमरसिंह ने अपने शब्द कोष मे ज्ञान, अज्ञान तथा विज्ञान की परिभाषा दी है । वहाँ कहा है—

"मोक्षे धीर्ज्ञानमन्यत्र, विज्ञाने शिल्पशास्त्रयो ।"

वन्ध, मोक्ष का भेद वताने मे और कर्म काटने मे जो बुद्धि काम आती है, जो बुद्धि कर्म काटने का चिंतन प्रस्तुत करती है उस बुद्धि या चिंतन का नाम 'ज्ञान' है और जो बुद्धि उद्योग-धन्धो मे काम आती है, किस तरह के केमिकल्स से कैसी वस्तु तैयार की जा सकती है, किस तरह के केमिकल्स से कैसी दवाई तैयार की जा सकती है, वस्त्र आदि तैयार करने की जानकारी जिससे मिलती है वह है विज्ञान ।

आज के जमाने मे विज्ञान वढा और ज्ञान घट गया है । पुराने जमाने के लोग जव सन्तो के सामने पहुँचते थे और सन्त उनसे कहते कि तुमको यह त्याग या व्रत करना है, ऐसी साधना के माफक चलना है तो वे विनय से कहते कि वापजी ! म्हारी शक्ति तो इती नही है लेकिन आपको विश्वास हो गयो है कि मैं कर सकू ला तो फरमाओ, पचक्खान करा दो । पुराने आदमी ना नही करते थे । सन्तो की वाणी का श्रद्धापूर्वक स्वागत करते थे । सतो ने मुझे योग्य समझा है और हुक्म फरमा दिया है तो उनकी आज्ञा का पालन करना ही चाहिए ।

लेकिन आज विज्ञान का युग है । आज के जवान भाइयो से या श्रीमतो से कहे कि त्याग, वैराग्य और तप को जीवन मे अपनाकर आगे वढना चाहिए, ऐसी वात कहेगे तो सवसे पहले तो यह कह देगे कि वापजी ! आप केवो वो वात ठीक है, लेकिन व्रत लेकर तोडना महापाप है । आपने भी दोष लागे और म्हाने भी दोष लागे क्योकि मैं व्रत आप जैसा मोटा सतो कने लेवा और नही निभे तो म्हारी वदनामी होवे सो होवे पण आपरी भी वदनामी होवे, इण वास्ते व्रत या नियम तो नही लेवा, लेकिन दिल मे धारणा राखोला और निभेला जिते कोशिश करोला । भाई ! पर्व के दिन आये है कुछ तो करो । वात तो आपरी आछी है, इसे कवूल कर लेगे लेकिन ग्रहण करने के वजाय आना-कानी करेगे । इसलिए सयम और तपप्रधान जैनधर्म आज चमक नही पाता ।

मैंने वचपन से आज तक गुरु कृपा से राजस्थान मे भ्रमण किया, महाराष्ट्र मे भ्रमण किया, राजस्थान के छोटे-मोटे गाँवो मे घूमा, दिल्ली वम्वई और मध्य प्रदेश भी देखा । ६० वर्ष की साधना मे देखा कि

पहले अच्छे-अच्छे नगरो के श्रावक साधुओ को ज्ञान-ध्यान की शिक्षा देने की काविलियत वाले होते थे। नये छोटे साधुओ को ज्ञान-ध्यान देने का योग वरावर नही है तो श्रावक लोग उनको ज्ञान-ध्यान सिखाने मे सहायक वन जाते, ऐसी काविलियत वाले होते थे। दीक्षा लेते ही पहले-पहल मुझे गुरुदेव के साथ वीकानेर जाने का मौका मिला। वाठिया वदनमलजी ३०० थोकडो के जानकार थे। भीनासर के कनीरामजी, हमीरमल जी, सेठिया भैरुदान आदि वडे-वडे श्रावक सत-सतियो को ज्ञान-ध्यान देने मे आगे रहते थे। कालेज का ज्ञान नही, स्कूली शिक्षण नही लेकिन हमारे श्रावक शास्त्रो को पढने वाले, वाँचने वाले, थोकडो के जानने वाले मौजूद थे। वीकानेर की वात कही वैसे जोधपुर मे राम-नारायणजी मोहनोत और किरतमलजी मूथा जैसे व्रती, निष्ठावान श्रावक हो गये जिन्होने वाद मे घर मे रहना ही छोड दिया था। लच्छी-रामजी सोड जैसे श्रावक जो सन्त-सतियो को शास्त्रवाचन मे योगदान दिया करते थे। मद्रास मे तो आपके जैन कालेज भी है, जैन मास्टर मास्टरनियाँ भी होगे। भरत चक्रवर्ती जैसे विद्वान भी हैं। लेकिन जानकार भाई कितने मिलेगे? साधुओ का चौमासा है, हमारे पास दो तीन महीने का टाइम भी है, मैं अपने सन्तो को अध्ययन कराना चाहूँ तो आप इस कार्य के लिए कितने श्रावको को उपस्थित कर सकेंगे? वुजुर्गो के प्रतिनिधि के रूप मे आपसे पूछूँ। आज श्रावक समाज में विज्ञानवान है, ज्ञानवाले प्राय नही। यह स्थिति क्यो आगई? विज्ञान को चिपकाया है, ज्ञान को नही चिपकाया। आज कैसा युग आ गया? हजारो नवयुवक और नवयुवतियाँ है उनमे जैन धर्म के प्रति और वीतराग-वाणी के प्रति श्रद्धा कायम रखनी है तो उनको अज्ञान और विज्ञान से वचाकर सम्यग्ज्ञान मे लगाने के पीछे ताकत लगानी आवश्यक है।

हमारा इतिहास वताता है कि महावीर के निर्वाण के ५०० वर्ष वाद की वात है, आर्य सोम और माता रुद्रा का पुत्र रक्षित १४ वर्ष तक वाहर पढकर पाटलिपुत्र मे दशपुर आया तो नगर के सभी प्रमुख लोगो ने उसका वडा स्वागत किया। जव वह घर मे माता के पास पहुँचा तो माता उस समय सामायिक मे वैठी हुई थी। माता के पास जाकर उसने प्रणाम किया लेकिन माता ने उसकी तरफ देखा भी नही। उसने फिर माता को प्रणाम-नमस्कार किया फिर भी माता वोली नही।

तव वह माता से वोला कि माताजी! मैं और वक्त तो जव घर

आता था तब आप मुझे प्यार करती थी, चुम्बन करती थी, सिर पर हाथ फेरती थी, लेकिन आज आप मेरी तरफ देख भी नही रही हैं, मेरी क्या गुनाह हुई ?

माँ बोली—बेटा ! मैं क्या देखूँ? क्या खुशी मनाऊँ ? तुमने १४ वर्ष लगाकर हजारो रुपये खर्च करके पेट भरना सीखा। तूने आत्मा का ज्ञान तो सीखा ही नही, दृष्टिवाद के विना सारा ज्ञान व्यर्थ है। तूने धर्म-ज्ञान नही सीखा फिर क्या खुशी मनाऊँ ?

आपका लडका एम ए पास होने के बाद डाक्टरेट हो गया तो आप खुशी के मारे फूले नही समायेगे। आप उससे कभी नही पूछेगे कि उसने नवकार मन्त्र भी सीखा है या नही ? यदि सीखा है तो उसका अर्थ भी जानता है या नही ? आप उससे दबे रहेगे। आप कहेगे म्हारो बेटो वहुत तजुरबे वालो है और वहुत होशियार है। उणरे सामने वात कुण कर सके। आप उसको डिगरी वाला बनाकर राजी हो जाते हैं, उसको ज्ञान नही देते। इसलिए उसके सस्कार कमजोर होते है। श्रद्धा मजबूत नही होती। यदि आप चाहते है कि क्रिया का वल आवे, चारित्र अच्छा हो तो उसकी भूमिका बनाइये। चारित्र की बात तो अगले दिन आयगी। आज तो दर्शन और ज्ञान की वात रखी है। सम्यग्ज्ञान और सम्यग्दर्शन को मजबूती से पकडकर हृदय मे निवास कराइये। मन-शुद्धि और चित्त-शुद्धि करेंगे तो आत्मा मे वल एव ताकत आयेगी और कल्याण के भागी वन सकेंगे। इसलिए मुनिजी ने पदावली मे कहा है कि यदि मोक्ष मिलाना है, यदि कर्मो के वन्धन काटने हैं, आठ कर्मों के बन्धन तोडने है तो ज्ञानपूर्वक क्रिया करो। सम्यग्ज्ञान और सम्यग्दर्शन के महत्त्व को समझकर हृदयगम करो। जो आत्मा इस तरह करेंगे वे इस लोक और परलोक मे शान्ति और कल्याण पाने के अधिकारी बनेंगे।

जैन भवन, मद्रास
(दिनाक ८-९-८०, प्रात ९ ४५ बजे)

३

चारित्र की महत्ता

प्रार्थना

अर्हन्तो भगवन्त इन्द्रमहिता, सिद्धाश्च सिद्धिस्थिता ।
आचार्या जिनशासनोन्नतिकरा, पूज्या उपाध्यायका ।।
श्री सिद्धान्त सुपाठका मुनिवरा रत्नत्रयाराधका ।
पंचैते परमेष्ठिनः प्रतिदिन, कुर्वन्तु नो मंगलम् ।।

वन्धुओ !

ससार के समस्त सकटो का नाश करने वाले, जगत के प्राणी मात्र के हृदय मे आत्महित की भावना से ज्ञान की रोशनी प्रगट करने वाले अनन्तज्ञानी वीतराग भगवन्त और वर्तमान जीवन के परम उपकारी, रत्नत्रयदाता आचार्य भगवन्तो के चरणो मे वन्दन करने के वाद।

वीतराग-वाणी मे अभी अन्तकृतदशाग की वाचना आपके समक्ष कही जा रही है, आठ दिनो के इस मगलमय पावन प्रसग पर आठ वर्गो मे ग्रथित और आठ कर्मो का नाश करने वाला अतकृतदशाग सूत्र कहा जा रहा है। सूत्र की विशेपताये, सूत्र की महिमा और सूत्र मे रहे हुए भावो को यदि सक्षेप मे भेद कर वाँटा जाय तो इन सारे भावो को चार भागो मे वाँटा जा सकता है। इन चारो वातो को जो मोक्ष-मार्ग का रूप कहा जाता है, जीवन के निर्माण मे अत्यन्त सहायक कहा जाता है, और आत्मा को निर्मल करने मे परम सहायक कहा जाता है, उन्ही चार भागो को आपके समक्ष रखा जा रहा है।

भव-मार्ग और शिव-मार्ग

तीर्थकर भगवान महावीर ने ससार मे दो मार्गो का कथन किया —एक भव-मार्ग और दूसरा शिव-मार्ग।

भव-मार्ग के लिए, ससार के जीवो को जन्म-मरण के चक्र मे गोता लगाने के लिए, छोटे-वडे किसी भी प्राणी को शिक्षा देने की, प्रेरणा देने की, समझाने की, और जीवन को आगे वढाने की प्रेरणा देने की आवश्यकता नही है। एक छोटा सा कीडा भी जो गटर मे पैदा होता है, खाने-पीने की व्यवस्था वह भी कर लेता है। छोटे से दरार मे पैदा होने वाली चीटी कहाँ से लाना, कैसे लाना, पदार्थ कहाँ है, मेरे अनुकूल क्या है, प्रतिकूल क्या है, अच्छी तरह जानती है, इन सारी वातो की जानकारी उसको भी है। पक्षी मे कहिए, पशु मे कहिए, देव मे कहिए, दानव मे कहिए, आहार सज्ञा, भय सज्ञा, मैथुन सज्ञा, परिग्रह सज्ञा—ये चारो प्रकार की सज्ञा सव मे है। अपने जीवन को चलाना, वाधक तत्त्वो से अलग रहना, साधक तत्त्वो की ओर जुट जाना—इसके लिए किसी को प्रेरणा देने की जरूरत नही है। एकेन्द्रिय कहलाने वाला पेड भी किधर जड छोडता है, पत्थर की चट्टान की ओर जड फैलाने के वजाय उधर जड फैलायेगा जिधर जमीन मे कोमलता है, स्निग्धता है, आर्द्रता है, गीलापन है। इसलिए एकेन्द्रिय जीव को अपनी जड किधर फैलानी चाहिए, कैसे फैलानी चाहिए कोई शिक्षा देने नही आता। इस प्रकार जीवन चलाने के लिए आहार कहाँ से प्राप्त होगा, जल कहाँ से प्राप्त होगा, हमको कैसे जीवन चलाना चाहिए —ये वाते एकेन्द्रिय से लेकर पचेन्द्रिय तक सारे जीव जानते है।

मनुष्य और पशु मे जीवन चलाने की क्रिया समान

जरूरत किसकी पडती है ? जीवन चलाना महत्त्वपूर्ण बात नही है लेकिन महत्त्वपूर्ण वात है जीवन वनाना। जीवन वनाने की कला जानना अथवा हमारे द्वारा मिलाया गया ज्ञान, पाई गई उपदेश की वहुमूल्य धाराएँ उसके लिए प्रेरणावान है, उसके लिए सव कुछ है जिसने इन सवको पाकर जीवन को बनाया है।

चलाने के लिये तो मैं आपके समक्ष पहले कह गया। जैसे आप विविध कलाएँ करते है उसी तरह जानवर भी करते है। वे भी अपना जीवन चलाने मे दक्ष होते है, निपुण होते है। सामने वाले को तेजस्वी देखकर दुम दवाकर भाग जाते है और यदि सामने वाला कमजोर है तो एक कुत्ता भी वच्चे को देखकर, गुरगुराकर, उसके सामने मड कर दो कदम आगे वढकर उसके हाथ से रोटी छीन सकता है। और यदि लाठी वाला वडा आदमी सामने खडा है, उसके हाथ मे लाठी है तो कुत्ता भी जानता ; कि उसके हाथ से रोटी कैसे लेना। वह नीचे लेटेगा पेट दिखायेगा,,

जीव और जड़ का भेद

कल की वात आज क्या कहूँ, सम्यक्दर्शन प्राप्ति हो जाने के पश्चात् भी, श्रावकव्रत स्वीकार करने के बाद भी और व्रती जीवन के मार्ग पर कदम बढ जाने के वाद भी हमने अव तक जड को मित्र माना है। वस्तुत चेतन का सवसे वडा कोई शत्रु है तो वह जड ही है। जड क्या है ? और जड के अन्दर किसको लेना चाहिये ? सीधी भाषा मे कहा जाय तो जीव से जो विपरीत गुण वाला है, उसको जड वोलते है। जीव चेतन वाला है तो जड अचेतन है। जीव उपयोग वाला है तो जड विना उपयोग वाला है। जीव कर्म करता है तो अजीव या जड कर्म नही करता है वरन् कर्म बनता है। जीव सुख-दु ख भोगता है तो जड सुख-दु ख भोगता नही हैं। सीधी भाषा मे कहा जाय तो जड वह है जो आत्मा से विपरीत गुण वाला है।

जड़ के भेद-प्रभेद

जड के भी शास्त्रकारो ने दो भेद किये हैं—एक रूपी और दूसरा अरूपी। धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय को भी जड कहा जाता है। ये अरूपी है। इनमे वर्ण, गध, रस, स्पर्श नही है और जिनमे ये चारो नही होते, वे अरूपी होते है। लेकिन अरूपी पदार्थ दिखाई नही देते और ससार मे जो कुछ दिखाई देता है वह सव क्या है ? रूपी है।

जीव भी अरूपी पदार्थ है इसलिए दिखाई नही देता। वह वर्ण वाला, गध वाला, रस वाला और स्पर्श वाला नही है। अरूपी पदार्थ जो दिखाई नही देता है उसके साथ जड का सम्बन्ध कैसे हुआ, किस तरह हुआ और कैसे यह आत्मा इससे वद्ध होकर आज तक भटकती जा रही है ? बन्धन ससार है और वन्धन को काटने की प्रक्रिया चारित्र है। मुझे आज के दिन ज्ञान पर विशेष नही कहना है, दर्शन पर विशेष नही कहना है लेकिन विशेष कहना है चारित्र पर।

सवसे पहले जीव और जड का ज्ञान कराना, जानना—यह हो गया गया ज्ञान। जानने के पश्चात् इसके वन्धन कैसे काटे जा सकते है, किस तरह काटे जा सकते हैं ? किस कारण से काटे जा सकते है ? इस सम्वन्धी जानकारी करके उस पर श्रद्धा करना, उस पर विश्वास करना—यह हो गया दर्शन।

अव ज्ञान है, दर्शन है, जानना है और मानना है लेकिन जीवन मे उनका आचरण नही, क्रिया नही है तो कहना चाहिए कि कुछ भी नही

है । एक पुरानी कहावत है, शायद आपने भी कभी श्रवण की होगी—

काम क्रोध मद लोभ की, जब लग मन मे खान ।
तुलसी पण्डित मूर्खा, दोनो एक समान ॥

जानने के वतौर जानने वाले वहुत है, मानने वाले भी वहुत है, समझने और समझाने वाले भी वहुत है । एक एक विषय को या एक-एक सब्जेक्ट (Subject) को इस तरह से प्रतिपादित करते है कि सामने वाले के गले उतर जाता है । मैं ही नही कह रहा हूँ, आपका भी कभी वोलने वालो मे नम्वर आ जाय और खडे हो जायँ, गोठी जी, भण्डारी जी खड़े हो जायँ अथवा और कोई भाई खडे हो जायँ तो अपने-अपने क्षयोपशम के अनुसार हर व्यक्ति अपनी जानी हुई वात को, समझी हुई वात को दूसरो को कहने मे समर्थ है, होशियार है लेकिन वात अडती कहाँ है ? अडती वहाँ है, जहाँ आचरण करना होता है ।

चारित्र का लक्षण

चारित्र का अर्थ करते हुए शास्त्रकार ने कहा 'चयस्य रीक्ति करण' संचित हुए कर्मो के मूल को जो क्रिया मन, वाणी और काया के योग से खत्म करती है, काटती है, खाली करती है, उसका नाम है चारित्र । सीधी भाषा मे यो कहा जाय कि जीव को जड से अलग करना चारित्र है । गदले पानी मे से मिट्टी को अलग करना चारित्र है । दूध और पानी की मिलावट को जैसे हस अपनी चोच से अलग करता है उसी तरह से हमारी जो क्रिया, साधना या आचरण कर्मो के समूह को नष्ट करते है, अलग करते है, उसको क्या वोलते है चारित्र ।

लेकिन आज चारित्र की वात कैसी है ? चारित्र अपने आप मे कितना महत्त्व वाला है और ज्ञान कितना महत्त्व वाला है, अपेक्षा से दोनो का महत्त्व होते हुए भी चारित्र के विना किसी भी काम मे सिद्धि नही होती । जव तक जीवन मे चारित्र नही है, जव तक जीवन मे सयम नही है, जव तक जीवन मे आचरण नही है, तव तक कहना चाहिए कि हमारा वह ज्ञान, हमारी समझ और हमारे भीतर की विशेष प्रकार की जो कला है, वह कला हमारे लिए भारभूत है, वोझ रूप है । अध्यात्म की और शास्त्रो की वडी वात कह लेना और साग मे नमक कम आ गया तो लड़ने वैठ जाना क्या है ?

क्रिया बिन ज्ञान . भार समान

ऐसा देखने मे आता है कि भगवती के भांगे वडी गिनती के साथ गिना देते है । गागे अणगार के भागे और भगवती सूत्र के भागे पढते समय

इस प्रकार तल्लीन हो जाते है, उसमे इस प्रकार रमण कर जाते है कि पता ही नही चलता कि एक सामायिक आई है या दो आई है लेकिन ज्यादा भागे पढने वाले, उपयोग लगाने वालो के सामने जब चाँदी आती है, पैसा सामने आता है तब एक नम्बर के बजाय दो नम्बर भी कर जाते है। कौन ? शास्त्र का ज्ञान हासिल करने वालो की बात कर रहा हूँ। शास्त्र का ज्ञान नही करना चाहिए, भगवती नही पढना चाहिए यह कहने का मेरा उद्देश्य नही है। मेरा मतलब यह है कि ज्ञान मे इतने रग जाते है लेकिन उनके जीवन मे चारित्र नही, आचरण नही, व्यवहार-शुद्धि नही है तो वह ज्ञान ऊँचा उठाने के बजाय नीचे गिराने वाला बन जाता है। वह ज्ञान जीवन ज्योति जगाने के बजाय उसको खुद को भी और धर्म को भी बदनामी की ओर ले जाने वाला हो जाता है। इस धर्म की रोशनी को उस पर कालिमा पोत कर डुबाने वाला है, यदि व्यक्ति के जोवन मे ज्ञान तो है लेकिन आचरण नही है।

महिमा चारित्र की ही

चारित्र की क्या महिमा है, क्यो चारित्र को सर्वोपरि माना जाता है। क्यो इसका इतना गुणगान किया जाता है ? धर्मक्रिया की दस बोलो की प्राप्ति मे दसवे नम्बर पर इसे क्यो लिया गया है ? दस बोल मे मनुष्य जन्म, उत्तम कुल आदि के बाद पुरुषार्थ को सर्वोपरि गिना है। पुरुषार्थ कहता है कि मेरा नम्बर चोटी पर है, मै सबसे ऊँचा हूँ। यदि तुमने तलहटी पार कर ली, मध्य भाग पार कर लिया, उससे भी ऊपर चढ गये लेकिन चोटी पर नही पहुँचे तो भी काम बनने वाला नही है। जब तक चोटी पर नही पहुँचोगे, तब तक चढते रहो उतरते रहो, लेकिन तुम्हारा चढना-उतरना बन्द होने वाला नही है। इसलिए शास्त्रकार ने कहा है कि भाई समय-सार का निचोड निकाल लेना बहुत सरल है। श्वेताम्बर परम्परा क्या मानती है, दिगम्बर परम्परा क्या मानती है, स्थानकवासी परम्परा क्या मानती है, तेरापथी क्या मानते है ? वे जन उपयोगी मूल शब्दो मे क्या कहते है ? यह जान लेना जितना सरल है, कदम बढाकर चलना उतना ही मुश्किल है। जीव और जड की चर्चा करने वालो, कषायो पर चर्चा करने वालो के सामने, जब माँगने वाला खडा होता है, अपमान की एक बात कह देता है तब ज्ञान का सारा पिटारा बन्द हो जाता है।

ज्ञान दूसरो के लिए

क्या कहूँ, बहुत वर्षो पहले जब बलोतरा मे चातुर्मास था तब

आचार्यदेव ने एक दृष्टान्त फरमाया कि आज का ज्ञान किस तरह का है।

एक अन्धा आदमी रात्रि मे वाहर जाने को तैयार हुआ तव घर वालो ने उसके हाथ मे एक लालटेन दी। अन्धे आदमी के हाथ मे लालटेन इसलिए दी गई कि रात का समय है, यह तो अन्धा है, इसके लिए तो रात और दिन एक समान है लेकिन सामने से आने वाला कोई सूझता आदमी आयेगा तो लालटेन के प्रकाश मे उसको दिख जायेगा और वह इससे टक्कर नही खायेगा।

वह घर से हाथ मे लालटेन लेकर वाहर निकला लेकिन हुआ क्या कि उधर से एक प्रज्ञाचक्षु और आया। उसके हाथ मे भी लालटेन थी। एक अधा व्यक्ति इधर से जा रहा था और दूसरा अधा व्यक्ति सामने से आ रहा था। एक अन्धा लकडी इधर वजाता था और दूसरा उधर वजाता था। आपने भी देखा होगा कि अन्धा आदमी जव चलता है तव लकडी को इधर-उधर फैलाता है। एक-दो कदम पर जानवर खड़ा हो तो मालूम हो जाता है। रास्ता वदलता है तो भी उसको मालूम हो जाता है। दोनो एक साथ लकडी वजाते हुए आमने-सामने आगे वढे लेकिन दोनो आपस मे टकरा गये। दोनो की लालटेन भी टकराई। एक ने पूछा—भाई! क्या हुआ? मेरे हाथ मे दीया था, वह वुझ गया क्या?

दूसरा वोला कि दीयो तो म्हारे कने भी हो, वुझियो नही है लेकिन तू वता कि दियो किण वास्ते रखियो हो?

वह वोला कि दिया म्हारे वास्ते नही, थारे वास्ते रखियो हो।

तो वन्धुओ! मै क्या कह रहा हूँ? अधा आदमी ससार को कह रहा है कि आज का ज्ञान अपने लिए नही दूसरो के लिये है। यदि किसी के यहाँ कोई गमी हो जाय, कोई मर जाय, दु ख हो जाय तव अडोसी-पडोसी जाते है, भाई जाते है, साथी जाते हैं और उसको समझाते हैं कि जो आया है वह तो जायेगा ही। अपने साथ उसका इतना ही सयोग था। यह काल की वात है। इस पर न किसी राजा का जोर चला, न किसी चक्रवर्ती का जोर चला, न किसी तीर्थंकर का जोर चला। जुवानी भी ऐसी वाते कहते है और कागज मे भी इसी तरह के सात्वना के शब्द लिखे जाते है कि श्रीजी के आगे किसी का जोर चले नही। मैं पूछता हूँ कि कल जो समझाने गया था, कल तक जो धैर्य वँधा रहा था, यदि आज लड़का गुजर जाय तो क्या वह रोयेगा नही? वह भी रोयेगा। तो वह ज्ञान

किसके लिए था ? वह ज्ञान बन्धन काटने के लिए था या दूसरो को समझाने के लिए था। एक की लडकी गुम हो गई, कोई ले गया। दूसरा उसको कहेगा कि चिन्ता करने से कुछ नही होगा। पुलिस मे रिपोर्ट करो, उसको ढूँढने का प्रयत्न करो, साथियो का इधर-उधर जाल फैला दो। किसको कह रहा है ? उसको कह रहा है जो रो रहा है। खुद को रोने का मौका आवे तब क्या होगा ?

आचरण से ही ज्ञान की सार्थकता

मैं यह कह रहा हूँ कि इस तरह से ससार मे ज्ञान की हालत बडी विचित्र है। दूसरो की चुगली नही खानी चाहिए, सज्जनता के साथ व्यवहार करना चाहिए। भाई-भाई के साथ प्रेम रहना चाहिए। सबके साथ प्रेम रखना चाहिए। मेरे सब भाई है। हमारे देव, गुरु और धर्म सब कुछ एक है। हमको एक दूसरे के दु ख-दर्द मे काम आना चाहिए। यदि केवल उपदेश देने की बात है तो मेरी तरह कितने दे सकते है। किसको खडा करूँ ? मैं कह रहा हूं कि ज्ञान को ज्ञान के लिए समझा जाय, बन्धन काटने के लिए समझा जाय, उपदेश देने के लिए नही समझा जाय। ज्ञान से पूरा प्रकाश हो। ज्ञान अपने भीतर भी उजाला करता है और दूसरो के भीतर भी उजाला करता है। इसकी महिमा विशेष रूप से है लेकिन वह ज्ञान भी तब सार्थक होता है जब जीवन मे आचरण आता है।

मैंने आपके समक्ष कहा था एकेन्द्रिय वायुकाय के जीवो पर दया करने वाले, कीडियो पर दया करने वाले, तपस्या के बाद जब पारणा करने बैठते हैं तब क्या होता है ? यदि दूध गर्म मिलने के बजाय ठण्डा मिल जाय, मुँह साफ करने के लिए यदि पापड सिका हुआ नही है तो क्या होगा ? उबल पडेगे। जो जीवन के साथ बाजी लगाकर चल रहे है, तबीयत खराब हो गई, उल्टियाँ हो गई, १० या १५ या २५ का तप करने की मन मे धारणा है, आज २५ है, तबीयत खराब हो गई तो कहते है कि मुझे दवाई या खाना मत देना, सथारा करा देना। लेकिन जब पारणा करने का टाइम आ गया तब जो अपने जीवन को अर्पण या समर्पण करने वाले व्यक्ति है, थोडी सी बात मन के विपरीत हो गई तो भावना बदल जायेगी।

ज्ञान है, श्रद्धा भी है लेकिन चारित्र के मार्ग मे कदम बढाना चाहिए था, आचरण मे ज्ञान को उतारना चाहिए था, वह उतरा नही। नतीजा क्या होगा, जो कर्म के बन्धन टूटने वाले थे, ममता घटने वाली

है क्या ? रावण के पास सोने की लंका थी ? आप की रानियाँ कितनी है ? दो वाले भले ही कोई मिल जाये लेकिन रावण के १६ हजार रानियाँ थी ? वैदिक पुराणो के अनुसार उसके पलग के पायो पर चन्द्र और सूर्य बँधे रहते थे, जैसा वह चाहता उस गति से उनको चलाता था। ऐसे रावण का नाम लेने के लिए कोई तैयार नही है। क्या वात है ? ज्ञान और राजनीति मे रावण इतना वढा-चढा था कि स्वय राम ने लक्ष्मण को उसके पास राजनीति की शिक्षा लेने के लिए भेजा था।

ज्ञान मे, ऋद्धि मे, सिद्धि मे, वल मे, वुद्धि मे वह वहुत वढा-चढा था। सव कुछ होते हुए भी आज लोग उसका नाम लेने के लिए तैयार क्यो नही है ? कुछ जगह की परम्पराये ऐसी भी है कि जहाँ राम का निरादर किया जाता है और रावण की पूजा की जाती है। ऐसा मानते हुए भी आज रावण नाम वाले व्यक्ति कितने मिलेगे ? मैं कह रहा हूँ कि रावण के पास ज्ञान था, ऋद्धि थी, सम्पदा थी लेकिन उसमे चारित्र नही था, इसलिए आज कोई उसका नाम रखने को तैयार नही है। तो सवसे वडी चीज क्या है ? चारित्र।

आपमे चारित्र कव आयेगा ? गुण है, इच्छा है और जानते भी हैं कि इसके विना मुक्ति मिलने वाली नही है। काले से धौले हो गये तव भी नही आया तो क्या धौले से काले होगे तव आयेगा ? जिस चारित्र की वात कर रहा हूँ वह कैसा है, एक छोटी सी झाँकी कराकर अपनी वात समाप्त करूँ।

"त्याग बिना कोई मोक्ष न जावे, त्याग कियो पातक रुक जावे।
कर्म खपाने हो तो भैया त्यागी वनो, प्यारे त्यागी वनो॥"

जिस त्याग की यह महिमा है, विना जिसको स्वीकार किये, विना आराधना किये आदमी को मुक्ति की डिग्रियाँ प्राप्त नही होती, मजिल प्राप्त नही करता, ऐसा चारित्र आज हमारे जीवन मे, अच्छा जानते हुए भी, मानते हुए भी नही आ रहा है।

आधुनिक काल मे चरित्र का पतन

चारित्र की वात क्या कहूँ, जव नीति का ही पता नही है। मिलावट, रिश्वतखोरी, अन्याय, अत्याचार से जव चरित्र भी खराव हो गया। चरित्र के साथ ससार की वात कहूँ तो ससार मे चरित्र नाम की कोई चीज नही रह गई है।

देश का चरित्र चिन्तनीय

आप के देश की सबसे बडी सभा लोकसभा है जिसमे सबसे ज्यादा पढे-लिखे डिग्री याफ्ता लोग लाखो लोगो के द्वारा चुने जाकर एक-एक क्षेत्र के सैकडो गाँवो के प्रतिनिधि बनकर वहाँ आते है। आज उनकी भी यह हालत है कि गुस्सा आ जाय तो कुर्सियाँ तोड दे, माइक तोड दे। क्या यह देश का चरित्र है ?

रावण ने तो सती सीता का हरणमात्र किया था। उनके साथ व्यभिचार नही किया था। ऐसे रावण आज हमारे अपने देश मे कितने है ? उसने जो गलती की थी उसका दण्ड तो उसको उसी समय दे दिया गया, उसका शीश उतार लिया था लेकिन आपके मन मे शान्ति नही हो पायी, इस-लिए हर साल उसको जलाते है। लेकिन आज देश मे रावण के भी बडे भाई बैठे है जो आज बलात्कार तक करते है। किस जगह करते है, कहाँ करते हैं और कैसे सदाचार पर डाका डालते है ? देश के चरित्र की बात, उनके खाने-पीने की बात, उनके रहन-सहन की बात, उनके बोलने और व्यव-हार की बात क्या कहूँ ? इस सम्बन्ध मे आज देश का चरित्र कैसा है, स्थिति कैसी है, इस बारे मे सोचते है तो दुःख होता है।

चरित्र नही है तो चारित्र कैसे होगा ? चरित्र आने के बाद एक लाइन और बढाते है, 'आ' की मात्रा लगाते हैं, तब चारित्र आता है।

कायर मत बनो

महापुरुषो का युग कैसा था, वे हलुकर्मी थे। जिनको एक निमित्त मिला और ज्ञान हो गया। उनकी भी बात कहूँ जिन्होने एक शब्द सुन-कर चारित्र ग्रहण कर लिया—

कायर तू तो जननी रो दूध लजायो ।। टेर ।।
स्नान कराते धन्नाजी ने सुभद्रा चेतायो।
कहवा और करवा के बोल पर, कह्यो सो कर दिखलायो।
कायर तू तो जननी रो दूध लजायो ।।
श्वेत केस एक लखकर दसरथ समझ गयो काल आयो।
थारो माथो धोलो हो गयो, पर वैराग्य न आयो।
कायर तू तो जननी रो दूध लजायो ।।
देवागना-सी आठ नारियो ने, जम्बू सुमार्ग लगायो।
नर होकर तू नारी सूं हार्यो, थें भोगो मे भान भुलायो।
कायर तू तो जननी रो दूध लजायो ।।

आसान नही है। मेरा भाई एक-एक छोडता है लेकिन आप तो इन आठ को छोडकर बतावे। बात सुनते ही धन्नाजी ने क्या कर दिया ? आठो को छोडकर रवाना हो गये।

एक बात मैंने यहाँ भी सुनी थी कि ज्ञान सीखने के लिए २५ आयेंगे। लेकिन अगले दिन देखा तो २५ के बजाय ५ ही आये, दूआ गायब हो गया। उससे अगले दिन देखा तो तीन गायब हो गये, दो ही मिले। कहने की बात के लिये दुनिया सब तैयार होती है और जब करने की बात आती है तो सभी आगा-पीछा करते है। इस तरह से चारित्र नही होता।

बतलाने के लिए तो इन तीन दिनो मे ज्ञान, दर्शन और चारित्र की बात बतला दी। यह चारित्र जीवन के बन्धनो को काटने वाला है। तप का वर्णन कल किया जायेगा। चारित्र की बात सुनकर इसे जीवन मे उतारने का प्रयत्न करना। सुनते तो आप हर साल है और आगे भी सुनेगे। लेकिन आप अपने जीवन मे व्रत, नियम और चारित्र को अपनाएँगे तो जीवन मे आनन्द और शान्ति पाकर करने के मार्ग पर आगे बढेगे।

आज ससार मे चरित्रवान मानवो की अति आवश्यकता है। हजारो मे एक चरित्रवान भी ससार को चमका देता है। चरित्रवान मानव नमक हैं, जो सारे ससार की सब्जी का जायका बदल देते है। अत आज चारित्रवान महापुरुषो के साथ चरित्र वाले पुरुषो की भी अति आवश्यकता है। कहा है—

> धन धान्य गयो कछु नाय गयो, आरोग्य गयो कछु खो दीनो।
> चारित्र गयो सर्वस्व गयो, नर जन्म अकारथ ही लीनो ॥

जैन भवन, मद्रास
(दिनाक ६-६-८०, प्रातः ६ ४५)

४
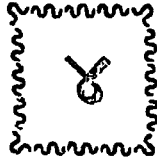
तप : सतत करणीय कर्तव्य

प्रार्थना

जो देवाण वि देवो, जं देवा पंजलि नमंसंति ।
त देव-देव महिय, सिरसा वदे महावीरम् ॥
एगो वि नम्मुक्कारो, जिणवरवसहस्स बद्धमाणस्स ।
ससार-सागराओ तारेइ, नर व नारिं वा ॥

धर्म प्रेमी वन्धुओ !

वदना से आगे आचरण

अनन्त काल से भवभय से सन्त्रस्त मानव को ससार के त्रय-ताप से वचाने वाले जिनेश्वरदेव के चरणो मे भक्तिपूर्वक वन्दन करना, अपना परम कर्तव्य है। जव कभी भी सोते, जागते, उठते, बैठते जव-जव भी हम वीतराग का स्मरण करेगे, ध्यान करेगे, चिन्तन करेगे, वह एक-एक क्षण हमारे लिए परम लाभकारी-कल्याणकारी होगा, जन-जन के त्रय ताप को दूर करने वाला होगा। उनकी वाणी का चिन्तन-मनन करने से पहले उनके स्वरूप का ध्यान करना, अभिवादन करना हम अपना परम कर्तव्य समझते है। इसलिये पहले भगवान के चरणो मे वन्दन करते है। अव वन्दन करने से हमने अपने मन को, वाणी को और तन को शुभ योग मे लगाकर कुछ पुण्य का सचय किया, कुछ निर्जरा की, कुछ आराधना की, लेकिन इससे आगे भी हमको कदम वढाना है। यह तो अनुमोदना हुई गुणो की। उनके प्रति प्रमोद भावना हुई। लेकिन दूसरी तरफ प्रमोद भावना करके व्यक्ति रह जाय, कुछ आचरण नही करे तव तक कर्मो का वन्धन नही कटेगा। इसलिये आचरण करने के लिए प्रभु ने कहा—

संबुज्झह किं न बुज्झह, सबोही खलु पेच्च दुल्लहा ।
नो हु उवणमंति राइओ, नो सुलभं पुणरावि जीवियं ।।

—सूत्रकृताग १।१

प्रभु ने कहा कि हे मानव ! इतना उच्च जन्म पाकर, इतनी बढिया सामग्री पाकर तू बोध क्यो नही करता ? मुक्ति के मार्ग का सबोध कर। किस लापरवाही से बोध नही कर रहा है। क्या तेरे को पता नही है कि जो रात्रियाँ चली गई है, वे फिर से आने वाली नही है ? चाहे कितनी ही मेहनत कर ले, इन्द्र, महेन्द्र को मना ले तो भी गई हुई रात्रियाँ पुन. वापिस आने वाली नही है।

वे रात्रियाँ चली गईं, जो मूल्यवान थीं। जिन रात्रियो मे हमें कभी याद करना होता तो चार पाच बार बोलने से याद हो जाता था, लेकिन आज दस बार याद करने पर भी कभी कामयाब होते है, कभी नही होते है। हम चाहे कि वह टाइम फिर आ जाय, बचपन का समय फिर से आ जाय, दो-तीन बार बोलने से याद हो जाय, क्या वह समय फिर आ सकता है ? मुनिजी कह गये कि असभव है।

प्रयास से असम्भव भी सम्भव

कदाचित् वह असम्भव भी सम्भव हो सकता है, मैं यह मानकर चलता हूँ। वह असम्भव कदाचित् सम्भव हो सकता है, साधना के बल से हो सकता है, औषधि के प्रयोग से हो सकता है, दैवी प्रसाद से हो सकता है।

विक्रम काल मे एक मुनि हो गये, जिनका नाम मुकुन्द मुनि था। वे वृद्ध वय मे दीक्षित हुए। बुढापे मे दीक्षा ली तो पढाई चढती नही थी। जब याद करने बैठते तो रटते-रटते थक जाते। दूसरे सुनने वाले भी थक जाते और कहते कि महाराज माथो क्यो पचावो हो ? तुम्हारा काम तो बनता नही, फिर हमारी नीद क्यो खराब करते हो ? यह बात उनको बहुत बुरी लगी।

एक बार, दो बार, चार बार याद करने पर भी पढाई चढती नही। उन्होने सकल्प कर लिया कि विद्या कैसे नही आयेगी ? जब तक ज्ञान नही आयेगा तब तक तप करता रहूँगा। उन्होने आयम्बिल करना शुरू कर दिया। नतीजा यह हुआ कि वाणी का अधिष्ठायक देव प्रसन्न हुआ और ज्ञानावरणीय कर्मो का भी परिश्रम से क्षयोपशम हो गया, वे

वृद्धवादी वन गये। मुकुन्द मुनि की जगह वृद्धवादी सिद्ध सारस्वत वन गये। गये हुए दिन आ गये। अव वे जीवन मे जो याद करना चाहते थे, तुरन्त याद हो जाता था।

आन्तरिक शक्ति आवश्यक

असम्भव को सम्भव वनाने के लिए वाहर का सहारा लेना पडता है, दूसरो की इमदाद या मदद लेनी पडती है। लेकिन जव पुण्य का वल सहायक हो तभी वाहर का सहकार काम दे सकता है। याद रखिये कि वाहर के सहकार मे भीतर का सहकार और ताकत होनी चाहिये। भीतर की ताकत के विना वाहर की ताकत का कोई सहयोग नही होता।

आप को राजस्थानी कहावत याद होगी—"घर दीया तो मसीद दीया" घर मे अधेरा हो गया तो देखा कि मस्जिद मे दीपक जल रहा है, वहाँ वैठकर काम ले लेगे। जव मस्जिद मे गया तो देखा कि वहाँ भी दीया नही है, अधेरा है। तव सोच लिया कि म्हारे घर मे दीयो नही है तो मस्जिद मे भी दीयो नही है। अन्त करण मे ताकत नही होगी तो वाहर की कोई ताकत काम नही आयेगी।

आन्तरिक शक्ति जगाने के साधन

अव अन्दर की ताकत को कैसे जगाना ? इसके दो साधन है—एक तो है आचार-वल और दूसरा है तप-वल। आचार-वल को हमारे यहाँ चारित्र के नाम से कहते है और तप-वल को तपस्या कहते है। ये दो मोक्ष-मार्ग है। आत्म-शक्ति को जगाने वाले है।

ज्ञान के साथ आचरण भी

ज्ञान के द्वारा वोध होता है लेकिन वोध मात्र से काम नही चलता। वोध से रास्ता मालूम हो जाता है। रास्ता किधर जाता है, कहाँ तक पहुँचना होता है, यह जानकारी हो जायगी। लेकिन गाँव मे पहुँचेगा कव ? रास्ता जान लेने से पहुँच जायगा क्या ? रोज वोलते रहे कि मोक्ष के मार्ग चार है। गोठीजी अभी वोल गये—सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र और तप। दान, शील, तप और भावना। ये क्या है ? ये मोक्ष के मार्ग है। रोज आप वोले और चारो काल मे वोले—सुवह भी वोले, दोपहर भी वोले, सन्ध्या के समय मे भी वोले और अर्द्ध रात्रि के समय भी वोले। चारो काल भी वोले तव तो काम वन जायगा क्या ? एक आदमी तो सिर्फ वोल रहा है और एक आदमी चुपचाप चल रहा है। इन दोनो मे से किसका काम वनेगा ? चलने वाला चुपचाप रास्ते पर चल

रहा है,किसी से बोल नही रहा है। सोचता है कि बोलने से विक्षेप होगा, कोई रास्ते मे रोक देगा। रास्ता तय करना है तो रास्ते मे किसी से बात नही करेगा। कोई वात करना चाहेगा तो उससे कहेगा कि मुझे रुकने का समय नही है, तू भी मेरे साथ चल। अपन दोनो बात भी करते जायेगे और रास्ता भी तय करते जायेगे। आपको क्या करना है ? बाते ही करनी है या काम भी करना है ?

मोक्ष-मार्ग के दो प्रकार : आचार और विचार

तो हमको अपने जीवन मे कुछ काम भी करना है। यह साधना का जो क्षेत्र है, उसमे चार मार्गो मे से दो विचार सम्बन्धी और दो आचार सम्बन्धी है। मोक्ष-मार्ग के दो उपाय सम्यक्दर्शन और सम्यक्ज्ञान विचार सबन्धी है। इन दो का प्रधानता से सम्बन्ध विचार से है, दिमाग से है, श्रद्धा से है, जानने से है, लेकिन पीछे के दो मार्गो का सम्बन्ध आचार से है। अब आचार से जिनका सम्बन्ध है, उन दोनो मे से एक के बावत कल मुनिजी ने अपना कुछ शिक्षण, कुछ सन्देश और कुछ उपदेश सुनाया है मैं उसका पुनरावर्तन नही करता। अब रहा दूसरा आचरण के क्षेत्र मे वह क्या है, पहले के वाद दूसरा आता है। जब तक चारित्र नही है, जब तक सयम नही है, जब तक पाँच आश्रवो का निरोध नही है, चाहे देशरूप से हो अथवा सर्वरूप से हो। हम मुनियो का जो आचरण है वह सर्वरूप से है और गृहस्थो का देशरूप से है। देशरूप से चारित्र के भी दो भाग कर ले। एक तो जीवन भर के लिए कर चुका है, अणुव्रत धारण कर लिये है वह तो आजीवन देशव्रती हो गया लेकिन आजीवन व्रत नही धारण नही किया है, तीन दिन के लिए तेला किया है या आठ दिन के लिए अठाई की है या पन्द्रह दिन के लिए उपवास किया है, जितने दिन तक तपस्या है उतने दिन तक आश्रव का सेवन नही करेगा। यह क्या हो गया ? यह उसकी देशचारित्र की अल्पकालीन अराधना हुई। एक आजीवन आराधना और दूसरी अल्पकालीन आराधना।

गृहस्थ भी मुनिवत् आचरण करे

हमारे आचार्यो ने वहुत वडी दया की। उन्होने ससार के लोगो को मुनिधर्म का प्रयोगात्मक (Practical) अभ्यास कराने के लिए सोचा कि गृहस्थो को भी मुनिधर्म का अभ्यास करना चाहिए। उन्होने पौषध व्रत, दया व्रत, उपधान आदि के रूप से व्रतो की रचना करके समाज को रास्ता वताया कि अमीर-गरीव, वच्चा-वूढा, जवान ५ दिन से लेकर ५०

दिन तक की आराधना कर सकता है। गृहस्थ भी मुनिवत् आचरण करे। नमूना देखना हो तो आपके यहाँ वाहर से आये, हुए वन्धु, आप ही के धर्मी भाई ललवाणी शकरलालजी है। वे गृहस्थ हैं, साधु नही है। वाल-वच्चो वाले है लेकिन उन्होने सकल्प कर लिया कि अषाढ सुदी १० से लेकर भादवा सुदी १४ तक ६० दिन की सवर साधना करना। अपने परिवार से और ससार के पाँच आश्रवो से सम्वन्ध हटाकर मौन साधना के साथ सवर साधना के लिए धर्मस्थान मे आसन जमा दिया। गृहस्थ होकर इस प्रकार की व्रत साधना क्या हुई ? यह मुनिवत् साधना हो गई। चौमासा लगने के वाद इन्होने दाढी नही वनाई, वाल नही वनवाये, नहाये नही, सावुन नही लगाया, तेल भी नही लगाया। यह तो हुई शारीरिक साधना। इसके अलावा इन्होने क्या हिंसा की, क्या झूठ वोला, जव वोलना ही वन्द है तो झूठ वोलने का तो प्रश्न ही नही है, गाली देने का सवाल नही है, कुशील-सेवन का सवाल नही है। लेन-देन, धधा वगैरह सारे काम छोडकर इस तरह अपने आपको एकान्त धर्मस्थान मे साधना मे लगाना मुनि-जीवन का अभ्यास है। अन्य भाई भी इनकी तरह साधना करने के लिए तैयार हो तो अच्छा है।

तो, मतलव यह हुआ कि भगवान महावीर ने क्रियात्मक साधना के दो मार्ग वताये उनमे से पहला है चारित्र का। देशविरति के भी दो भेद है। अभी पर्युषण के दिनो मे पचरगी, सतरगी, नवरगी तपस्या की वात है। ऐसा भी होना चाहिए कि जितने दिन का तप किया, उतने दिन की पोषणा करके बैठे। ऐसी वाह्य आराधना चारित्र के साथ तप की आराधना, आस्रव-त्याग के साथ जो आराधना होगी वह दो गुनी (Double) ताकत वाली होगी। विना आस्रव-त्याग के जो तपस्या होगी, उसकी आधी ताकत कम हो जायगी।

तपस्या की महिमा आस्रव-त्याग से

आज का दिन है तप-दिवस। लेकिन तप दिवस के कर्त्तव्य का परिचय देने से पहले उसकी भूमिका के रूप मे चारित्र की वात कह गया। हमारे यहाँ तपस्या की महिमा सयम के साथ है। चारित्र के साथ, आस्रव-त्याग के साथ तपस्या की महिमा है। जो जैन भाई भूले हुए है, वे फिर याद कर ले। कभी आनन्द या शिवानन्दा का नाम सुना है ? और भी श्रावक-श्राविकाओ का नाम सुना होगा। प्राचीन युग का ऐसा कोई आरा-धक या श्रावक नही मिलेगा जो अट्ठम या तेला करके घर मे घूम रहा

समझिये कि उपवास करना ही तप है। यदि उपवास करना तप कहा जाय तो सैकड़ो भाई-वहिनो का नाम तप की लिस्ट से निकल जायेगा। सैकडो क्या हजारो का निकल जायगा।

लेकिन महावीर कहते है कि हर जीव तप करने का अधिकारी है और हर जैन भाई-बहिन रोज तप की साधना करते है। वच्चे भी तप कर सकते है, जवान भी कर सकते हैं और बूढे भी तप कर सकते है। रोज खाता-पीता भी तपस्या कर ले, ऐसा मजूर करेंगे क्या ? या नही करेंगे ? रोज खाता-पीता तप कर लेगा। जो वाई कुटुम्ब परिवार की, वच्चे-वच्चियो की सार सभाल कर रही है, आने वाले २०, २५ मेह-मानो की भी सार-सभाल करती है, खुद दिन मे १२ वजे या १ वजे खाती है, रात मे चौविहार होता है तो भी आधा पेट खाकर रह जाती है तो क्या वह तपस्या नही करती है ? तो हमारे जैन धर्म का तप वहुत गभीरता के साथ वताया गया है।

बारह प्रकार का तप

भगवान महावीर ने कहा है कि १२ प्रकार की तपस्या होती है। टाइम थोडा है फिर भी कहने की कोशिश करूँगा ताकि जवान भाई, वच्चे, बूढे, प्रौढ और बुद्धिवादी लोग तपस्या को समझकर अपने जीवन मे उतार सकें, इसलिए १२ प्रकार के तप का थोडा-थोडा परिचय दूँगा।

पहला तप है **अनशन तप**। एक दिन से लेकर ६ महीने तक की तपस्या कर सकते है। आप मे से कितने भाई अनशन तप मे नाम लिखा सकते है ? अनशन का नाम आवे तो विचार मे पड़ जाऊँगा, क्योकि मैं अनशन तप मे अपना नाम नही लिखा सकता।

लेकिन दूसरा तप है **ऊणोदरी तप**। यह मैं रोज कर सकता हूँ। ऊणोदरी का मतलव क्या ? सामने भोजन आया है, चार-छ रोटी की खुराक है। उसमे से एक या आधी रोटी निकाल दोजिए। चार साग मे से दो या एक साग निकाल दीजिए। एक कतली पूरी ले रहा हूँ, और लेने की इच्छा है, लेकिन कह दिया कि पर्युषण है और लोग तो अठाई, मासखमण आदि तपस्या कर रहे है और मैं मीठे पर हाथ फेरूँ, **'अप्पाण वोसिरामि'**। एक ही कतली खाऊँगा। दया कर रहा हूँ, भाई आज ज्यादा नही खाऊँगा, ऐसा विचार करके ऊणोदरी तप करना चाहिए।

कल्पना कीजिए, किसी को शुगर की बीमारी है, किसी को ब्लड प्रेशर की बीमारी है लेकिन मेहमान बनकर जाते है सेठो के यहाँ। सेठो के यहाँ तो मिठाई पहले आवे। मिठाई नही आवे तो सेठ रो घर नही। आप केवो तो लेनी पड़े। आपने भी राजी राखणो पडे। चोखी लगी तो दो री बजाय चार खा गया। यह क्या हुआ? अब यहाँ तप नही करने से क्या हुआ? दो दिन लगातार मीठा खा लिया इसलिए शुगर की मात्रा बढ गई। डॉक्टर आया और उसने पूछा कि क्यो क्या हो गया, कैसे हो गया? थोड़ी भूल हो गई, मिठाई ज्यादा खा ली।

महावीर ने पहले ही बता दिया है कि ऊणोदरी करो। यदि महावीर के बताये माफिक ऊणोदरी आदि तप करने लगे तो समझ लीजिए कि लोगो की आधी बीमारी कम हो जाय।

ये सेठ-सेठानियाँ जो अधिक खाते है उनमे से किसी को ब्लडप्रेशर की बीमारी है, किसी को शुगर की बीमारी है, किसी को हार्ट की बीमारी है। इन बीमारियो की जड़ कहाँ है? जरा खोजो तो सही।

भूखा रेवणवालो बीमार नही पडे. मै कहूँ सो लिख लीजो। भूखा रहने वाले गरीब घर के भाई-बहिन बीमार नही पडते। लेकिन ज्यादा खाने वाले, जबरदस्ती हाथ फेरने वाले ज्यादा बीमार पडते है। देखा कि कतली तो ताजी है, ऊपर चमचमाते वर्क लगे है, तो माई के लाल का मन चल जायगा और हाथ भी चल जायगा। हाजमो कमजोर है, मेहनत होवे कोनी, सेठानी जी दिन भर गादी माथे बैठा रेवे है। सेठ साहब भी दिन भर गादी माथे बैठा रेवे है। पाणी भी दूसरा लाकर पिलावे। पहलेरो खायोडो तो हजम हुओ नही, और फेर मीठा माथे हाथ फेर दियो। ओ तो महावीर को भलो होइजो कि पर्युषण रे दिनो मे तपस्या करणरी बात बतादी। पर्युषण मे तपस्या करण वाला भाई बहिन बीमार नही पडेला। सर्दी जुकाम भी ठीक हो जावे। जो तपस्या करे उणारे उदर को मल जल जावे। तपस्या सू विकार भी जल जावे।

टाइम आ रहा है १० मिनट मे समाप्त करने की कोशिश करूँगा। एक कवि ने ठीक ही कहा है—

> तप से इन्द्रिय-विषय क्षीण हो जाते।
> उदर रोग भी विविध नष्ट हो जाते॥
> शान्त और निष्काम भाव से धारो।
> विविध लाभ है ज्ञानी कथन विचारो॥

सनी ले लेंगे। उपवास करना सरल है, वेला, तेला, अठाई कर लेवेला लेकिन आ सौगन्द शायद कोई नही करेला। बापजी ! आप रो केवणो ठीक है, ध्यान राखोला। कठेई मौको आ जावे तो थोडो ज्यादा खाइज जावे। कई लोग ऐसे भी हैं जो कहते हैं कि खावण ने नही बैठा जद तक तो ठीक है, लेकिन खावण ने बैठां पछे अधूरो नही खाइजे। मनवार मानकर बैठ जाओ पछे अधूरो क्यो खाओ ? कहावत है—"मारियो कूटियो एक नाम, खायो पीयो एक नाम।" तपेदिक का बीमार है. क्षय रोग चल रहा है। डाक्टर की हिदायत है फिर भी जीमणने जावे तो अधूरा नही खावे।

भगवान महावीर कहते हैं कि देखो इससे शरीर को नुकसान है और आत्मा को भी नुकसान है और पदार्थ का भी नुकसान है।

तो पहला तप अनशन, दूसरा तप ऊणोदरी। तीसरा तप है वृत्ति-संक्षेप। इसका दूसरा नाम है भिक्षाचरी। साधु है तो अभिग्रह धारण करके भिक्षा के लिये घूमे और गृहस्थ है तो वृत्ति का संक्षेप करे। यह मन मे धार ले कि इतनी चीजों से वेशी (अधिक) नही खाऊँगा। खाना है, पेट भरना है तो दुनिया भर की चीजो की जरूरत नही है। १०, १५ चीजे हैं या २० चीजें है, यह ख्याल जरूर रखिये कि कल कितनी चीजे खाने के काम मे आई थीं। उसके अनुसार १५ चीजे खानी हैं तो एक ज्यादा रख ले, १६ रख ले, २५ रखने की जरूरत नही है। घर मे १० चीजें भी नही लागे परन्तु सौगन्द करने का टाइम आवे तो २५ रखने का कहेगा। ऐसा करने से संयम नहीं होगा।

चौथा तप है रस-परित्याग। सुपारी खा ली, इलायची खा ली, पान का मसाला खा लिया। पान की कुट्टी मिली तो वह भी खा ली। पर्युषण के दिनो मे हरिया पान तो खावे कोनी, सूखा पान खा लिया।

आजकल के लोग चतुर है। इधर-उधर की हवा लगने से बाइयो में भी विकार आने लगा है, वे भी पान खाने लगी हैं। लेकिन भगवान कहते है कि ऐसी चीजे लगी हुई है तो इन ८ दिनो में उन्हे छोडने का अभ्यास करे। तबोल की चीजे १० लगती है, तो सोच लो कि आज दो ही खायेंगे। यह तप हो गया। कितना सस्ता हो गया।

पाँचवाँ तप है काया-क्लेश। व्याख्यान मे आये हैं, सामायिक मे बैठे हैं तो इतना संकल्प कर ले कि जब तक व्याख्यान होगा तब तक आसन नही बदलेंगे। दूसरो को आड़ो नही लायेंगे। ८ दिन तक व्याख्यान मे बैठे है तब तक दूसरो को जगह देने के लिये आसन को फैलायेंगे नही।

जब तक महाराज नही उठेंगे तब तक हम भी नही उठेंगे। यदि ऐसा करेंगे तो यह भी तप है। नींद आने लगे तो खड़े हो गये। यह भी काया कष्ट तप है। इससे सामायिक शुद्धि भी हो जावेगी और नींद भी उड़ जावेगी। एक घड़ी भर खड़े-खड़े व्याख्यान सुने, खड़े-खड़े स्वाध्याय करे। यह भी तप है। न अन्न छोड़ना पड़ा, न पानी छोड़ना पड़ा।

छठा तप है प्रतिसंलीनता। अपनी इन्द्रियो और योगो का गोपन करके रखे। गाने की तरफ कान जा रहे है, रूप देखने की तरफ आंख जा रही है, पांचो इन्द्रियो का संवरण करके रखे। घड़ी भर को कोई अप्सरा आ जाय तो भी उसकी तरफ नजर उठाकर नही देखे।

ये ६ बाहरी अथवा शरीर के तप है। इनका असर शरीर पर पड़ता है। यदि घण्टा भर तक एक आसन लगाकर बैठेगे तो शरीर को जोर पड़ेगा। आत्मा पर इनका सीधा असर नही पड़ेगा।

इनके अलावा ६ भीतर के तप हैं जिनका असर आत्मा पर पड़ता है। इनमे से पहला तप है प्रायश्चित्त। साधना करने वाले से छिपी गलती हो सकती है। गलती के डर से साधना नही छोड़नी है। व्रत लेकर छोड़ेगा तो कायर कहलायेगा। व्रत करते-करते गलती हो गई तो उसको छिपाकर नही रखे। यह नही सोचे कि महाराज से कहूंगा तो मेरी हंसी करेंगे, और यह कहेंगे कि स्वयं ने सौगन्द लिया और पालन नही कर सका। महाराज से छिपाकर रखना भी कायरता है। महाराज के पास जाकर गलती को मजूर कर लो, और वे जो प्रायश्चित्त दे उसे स्वीकार कर लो और शुद्धि करके फिर से आत्मा को उजाल दिया तो कायर कहलायेगा या शूर?

आठवाँ तप है विनय। छोटे-बड़े गुरुजनो का, साधु-साध्वियो का, धर्मी बन्धुओ का, श्रावक-श्राविकाओ का, तपस्वी भाई-बहनो का विनय करना तपस्या है। यदि किसी गुणी के लिये सकट झेलना पड़े तो झेलना चाहिये। उनको आदर और बहुमान देना चाहिये।

नवाँ तप हैं वैयावृत्य। एक भाई तपस्वी है, खखार आ गया, उसकी शक्ति उठने की नही है, उसको खंखारिया चाहिए, तो है कोई माई का लाल खखारिया देने वाला। अपने दादा, परदादा, दोस्त, सगे-सम्बन्धी है उनके लिए तो सब कुछ करने को तैयार है, लेकिन कोई नया आदमी आया है जिसकी ज्यादा पहचान नही है, लम्बी तपस्या की है, कमजोरी आ गई है, तो ऐसे आदमी की सार सभाल करने वाले थोड़े है।

भगवान कहते है कि यह भी तपस्या है। यदि उसका भला तेरे से नही होता तो जीवन मे कोई तप नही कर सकेगा। तप करने वाले की सेवा करो। किसको क्या चाहिए, उसको गर्म पानी की आवश्यकता है या विस्तर की आवश्यकता है, आसन करने की आवश्यकता है, या शरीर पर मालिश करने की आवश्यकता है तो विवेक के साथ उसकी सेवा करनी चाहिए। यह हो गया नवाँ तप। कितना आसान है।

दसवाँ तप है **स्वाध्याय**। स्वाध्याय भी पाँच प्रकार का वताया गया है—वाचना, पृच्छा, परावर्तन, अनुप्रेक्षा और धर्मकथा आदि। घटा दो घटा भगवान की वाणी का अध्ययन किया, दूसरो को सुनाया। यह भी स्वाध्याय तप है।

ग्यारहवाँ तप है **ध्यान**। आज के जमाने मे हमारा एक ही धर्म-ध्यान चलता है, शुक्लध्यान नही है। आर्तध्यान, रौद्रध्यान का चिन्तन नही करना चाहिए। धर्मध्यान का चिन्तन करे, ध्यान करे।

वारहवाँ तप है **व्युत्सर्ग** अर्थात् शरीर से ममत्व का त्याग।

इस प्रकार १२ तरह की तपस्या वताई है।

तपस्या सबके लिए

हर वच्चा, बूढा जवान तपस्या कर सकता है। जैन सिद्धान्त का मार्ग तपमय है। सदा तप होना चाहिए। पर्युषण के वाद भी तप होना चाहिए। आचार्यो ने खाते-पीते तप की व्यवस्था की है। हर समय तप होना चाहिए। आप पाँच कपडे पहनते है तो उसके वजाय दो या तीन पहनिये। कोट नही पहनूँगा, गर्मी का मौसम है, मलमल का कपडा नही पहनूँगा, ऐसा सकल्प कर लिया तो यह भी तप है। कम खाना तप है, कम पहनना तप है। वहनो के पास दो दो गोखरू की जोडियाँ घर मे है, लेकिन होते हुए भी कह दे कि मुझे गोखरू नही पहनना। पाँचो अगुलियो मे अगूठी पहनने के वदले एक ही अगूठी पहनिये। आनन्द ने केवल एक ही नामाकित मुद्रा पहनने के लिए रखी थी जवकि १२ करोड सोनैयो का मालिक था। आज आप लोग उल्टे चलते हो। पर्व के दिन नही पहनने के लिए कहने पर भी पहन कर आयेगे। यदि समाज के सामने प्रदर्शन करना हो तो पर्व के अलावा एक दिन ऐसा रख लीजिए तो दूसरी वात है। ससार को वैभव का प्रदर्शन करने के लिए अनेको अवसर है। जन्म, मरण, दीवाली, दशहरा आदि, उनमे प्रदर्शन किया जा सकता है।

लेकिन पर्युषण और व्रत के दिनों में जितनी सादगी रखोगे, परिग्रह का बोझ जितना कम रखोगे, उतना ही अच्छा रहेगा। इससे मन में शांति रहेगी, परिवार में शान्ति रहेगी। राग-द्वेष घटेगा। इस तरह से सदा तप कर सकते हो। हर बच्चा, बूढ़ा, जवान भाई भी ऐसा तप स्वीकार करें। अपनी इन्द्रियों की वृत्तियों को नियन्त्रित करना, वश में रखना है। पर्युषण के दिनों में और अन्य दिनों में भी तप करें तो बहुत उत्तम है। विधिपूर्वक की गई इस तपस्या के द्वारा भव-भव को सुधार सकते हो। यदि इस प्रकार तप करोगे तो साधनामय सुन्दर जीवन का निर्माण होगा। जो इस तरह तप करेगा वह इस लोक में एवं परलोक में सदा आनन्द, कल्याण और शान्ति पायेगा।

एक सूचना देनी है कि पर्युषण के दिनों में प्रातः अन्तगडसूत्र का और दोपहर में कल्पसूत्र का वाचन होता है। भगवान महावीर का जन्म-दिन वैसे तो चैत्र शुक्ला १३ को है लेकिन कल्पसूत्र के वाचन की दृष्टि से भादवा सुदी १ को भगवान के जन्म का वाचन होता है। इस दृष्टि से आज वाचन रखा गया था। लेकिन मद्रास में ऐसा रिवाज रहा है कि पर्युषण के पांचवे दिन जन्म का वाचन होता है। इसलिए यहाँ की परम्परा के अनुसार भाई-बहनों को व्यवस्था में सहूलियत हो इस दृष्टि से आज के बजाय कल जन्म का वाचन रखा है। हमारे यहाँ भगवान के आदर्श जीवन को सामने रखकर पवित्र वातावरण को लेकर त्याग वैराग्य की भावना को अपनाना है। इस बात को पूर्ण रूप से ध्यान में रखें।

जैन भवन, मद्रास

(दिनांक १०-९-८०, प्रातः १० बजे)
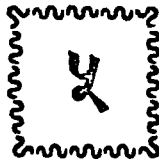
संयम : भवभ्रमण-नाशक

प्रार्थना

वीर सर्व-सुरासुरेन्द्रमहितो, वीरं बुधा' सश्रिता: ।
वीरेणाभिहत स्वकर्मनिचयो वीराय नित्यं नम ।।
वीरा-तीर्थमिदं प्रवृत्तमतुलं वीरस्य घोरं तपो ।
वीरे श्री द्युति-कान्ति-कीर्ति-निचयो हे वीर भद्र दिश ।।

वीतराग वाणी के रसिक वन्धुओ !

आज पर्वाधिराज का पचम दिवस साधना का अपने सामने चल रहा है। चार दिनो मे मुक्ति मार्ग के साधनो के चार पायो पर विचार किया गया। हर मुमुक्षु अन्त करण से यह अवश्य जानना चाहेगा कि मेरी आत्मा अनन्त काल से जिन वन्धनो से जकडी हुई, पकडी हुई भटक रही है, वे वन्धन किस तरह से काटे जायँ। वन्धन कटे तो उसके लिए कुछ साधन, कुछ उपाय, और कुछ मार्ग भी ग्रहण करने होगे। ज्ञानावरणीय आदि चार घाती कर्मो के वन्धन को काटने के लिए तथा चार गुणो को प्रगट करने का लक्ष्य लेकर सम्यग्दर्शन, सम्यक्ज्ञान, सम्यक्चारित्र और तप की साधना का सन्देश दिया गया।

ज्ञान-दर्शन गुण प्रगट होने की प्रक्रिया

ज्ञानावरणीय का वन्धन किससे कटेगा ? ज्ञान की आराधना से ज्ञानावरणीय कर्मों का वन्धन कटेगा। ज्ञानावरणीय और दर्शनावरणीय ये दोनो उपयोग गुण के अवरोधक है, इनके क्षयोपशम से ही ज्ञानगुण प्रगट होता है।

उपयोग दो तरह का है। एक साकार उपयोग और दूसरा अनाकार उपयोग। दर्शन अनाकार उपयोग है और ज्ञान साकार उपयोग। इनको प्रगट करने के लिये ज्ञानावरणीय और दर्शनावरणीय कर्म का क्षयोपशम आवश्यक है। यदि हम ज्ञान गुण को प्रगट करने के लिये श्रुतज्ञान की आराधना सम्यक् रूप से करेगे तो हमारी ज्ञान-चेतना और दर्शन-चेतना दोनो का पर्दा हट जायगा और ज्ञान गुण प्रगट होगा।

सम्यक्त्व गुण कैसे प्रगट हो ?

दर्शन का दूसरा अर्थ सम्यक्त्व भी है। सम्यक्त्व गुण किससे प्रगट होता है ? ध्यान मे नही आया होगा। दर्शन गुण को प्रगट करने के लिए दर्शनमोह का क्षयोपशम आवश्यक है। मोहकर्म के दो भेद है—एक एक दर्शनमोह और दूसरा चारित्रमोह। दर्शनमोह की कितनी प्रकृतियाँ हैं, कोई माई का लाल वता सकता है ? दर्शनमोह की प्रकृतियो पर कहूँ उससे पहले यह वता दूँ कि चारित्रमोह की २५ प्रकृतियाँ हैं। उनमे से चार अनतानुवन्धी है वे दर्शनमोह के साथ सम्वन्धित है। इसलिए कहना चाहिए कि दर्शन गुण को आवरण करने वाली सात प्रकृतियाँ है। इसको लम्वा नही करना है। लेकिन दर्शन कव प्रकट होगा ? थोडा ध्यान लगाकर सुनेगे तो ध्यान मे आयगा। सात प्रकृतियो का उपशम या क्षय करते प" सम्यग्दर्शन गुण प्रगट होता है ?

मोह-नाश के लिए चारित्र-साधना

अब चारित्र की साधना किसलिए है जो तीसरे दिन आपके सामने कहा गया, वह है मोहकर्म का पर्दा, जो अनन्त काल से हमारी आत्मा पर पर्दा है। उस पर्दे को दूर करने के लिए किसकी साधना की जाय ? चारित्र की।

तप से वेदनीय कर्म का नाश

उसके वाद रहा वेदनीय का जोर। अब वेदनीय कर्म को मिटाना है, निरावाध सुख पाना है। तो वेदनीय कर्म को मिटाने का साधन है तप। तप मे वेदना सही जाती है। मन आपका अच्छी तरह से लगा है या नही लगा है, मुझे शका है। मैं अभी आपके चित्त की एकाग्रता को वरावर नही समझ रहा हूँ इसलिए थोडा रुककर कह रहा हूँ। बात आगे की कहनी है। अब इस पर्व के चार दिन हो चुके है। इनके चार गुणो को हमने चिन्तन मे ले लिया। इन्हे प्रकट तो करना है।

ज्ञान की आराधना करेंगे तो ज्ञानावरणीय-दर्शनावरणीय का क्षय-उपशम होगा। यदि सम्यग्-दर्शन की आराधना करेंगे तो दर्शनमोह का क्षय-उपशम होगा। यदि चारित्र की आराधना करेंगे तो आप की मोह-भावना घटेगी। तप की साधना करेंगे तो आपकी वेदना का जोर कम हो जायेगा। १० दिन बीमार रहकर तकलीफ सहन करेंगे उसके बदले तीन दिन के तेले की कठिनता को सहन कर ले। जो कष्ट सहन किया उससे आपकी वेदना समाप्त हो गई। यह सकाम निर्जरा की साधना है, इस प्रकार चार गुणो के प्रकटीकरण की बात कही।

संयम की साधना : आयु कर्म का विनाश

अब पाँचवाँ कर्म क्या है ? आयु, और पाँचवाँ गुण है अटल अव-गाहना। यह जो विभिन्न तरह का शरीर मिला है किसी को बावना, किसी को लम्बा, किसी को दुबला, किसी को टेढा, किसी को कुबडा, टेढा-मेढा शरीर मिला है, यह सारा का सारा जाल नामकर्म का है। शरीर मे बँधा रहना, आयु का फल है। शरीर, आकृति, गौर-वर्ण, श्याम-वर्ण वगैरह नाम कर्म से सम्बन्धित होगा। लेकिन शरीर मे बँधा रहना, आत्मा का रुका रहना आयुकर्म का फल है और रुका नही रहना, भव-बन्धन काटता पाँचवाँ गुण है। इस पाँचवे गुण को पाने के लिए किसकी साधना की जाय, पाँचवाँ गुण कैसे प्राप्त हो इसके लिए सन्तो ने अपने अनुभव की स्थिति से कहा कि जीवन मे असयम भव-भ्रमण कराता है। भव-भ्रमण कराने वाले असयम से बचकर सयम की साधना की जाय तो चारो गतियो का बन्धन कटेगा, भव-भ्रमण कटेगा वहाँ पाँचवाँ अटल अवगाहना गुण पा सकेंगे।

इसलिए आज पचम दिन तपस्या के बाद चिन्तन मे लेने की बात क्या है ? सयम। आज आप को और हमको सयम पर विचार करना है। तपस्या ताकतवर कब होती है, तपस्या का तेज अधिक कैसे चमकता है और हमारा जन्म-मरण का बन्धन कैसे कटता है, इसकी साधना क्या है ? सयम। आप कहेगे कि यह सम्बन्ध कैसे जोडा जा रहा है ? महाराज कही आप की बात का कोई आधार भी है या कोई इधर-उधर का टिप्पा लगा रहे है, ऐसी शका कोई जिज्ञासु नही करे इसलिए थोडी आधार भूमिका भी बता दूँ।

तप के साथ संयम की आराधना

आपने कभी पौषध तप का पच्चक्खाण किया है। पौषध तप का पहला सकल्प आता है, असण पाणं खाइम साइम पच्चक्खामि। यह क्या हुआ ?

के द्वारा दो चार दिन के लिए खाना वन्द करने का मौका आता है। आपने देखा होगा कि कुछ ऐसी बीमारियाँ होती है जिनमे कि खाना बिल्कुल वन्द कर दिया जाता है। कुछ पेय पदार्थों को छोडकर अन्न बिल्कुल नही दिया जाता। बीमारी के कारण डाक्टर ने आपका खाना बिल्कुल वन्द कर दिया और आपने खाया नही तो क्या वह तप हो गया ? कभी किसी को निकाला निकल जाय और उसमे अन्न दे दिया जाता है तो निकाला विगड जाता है, इसलिए पाँच या सात दिन के लिए खाना वन्द कर दिया। खाना वन्द करने के कारण सात दिन तक भैया भूखा रहा तो क्या यह उसका तप हो गया ?

तप मे संयम आवश्यक

आप पोरसी करने वाले को देखिये। व्याख्यान मे ११ वजे के लगभग का समय आ गया, २ पोरसी जल्दी ही आ जायेगी इसलिए उसने दो पोरसी का पचक्खाण कर लिया तो यह उसका तप हो गया और टाइ-फाइड वाले ने सात दिन तक कुछ नही खाया फिर भी उसकी गिनती तप मे नही आयी, इसका क्या कारण है ? कारण यही है कि इसमे सयम नही है। इसलिए हम लोगो को, भगवान महावीर के भक्तो को तपस्या करने से पूर्व सयम करने का पाठ सिखाया गया है। सयम के साथ तप ज्ञान-तप है और असयम के साथ तप अज्ञान-तप है।

कद खाकर दिन और वर्ष गुजारने वाले लोग भी है। सकरकद का हलवा खाकर और ऐसे कई कद खाकर दिन गुजार रहे है, ऐसे कुछ व्रती आपने नही देखे क्या ? सुवह शाम को दो वक्त पानी के हौज मे बैठ जाते हैं और दो वार दिन मे स्नान करते है और फिर तुलसी के पत्ते और ठाकुर जी का चरणामृत ले लेते हैं, ऐसे भी कई भाई-वहन देखे-सुने या नही। उनका तप आपके एक उपवास के तप से कम है क्या ? वे दस-वीस दिन तक तुलसी के पत्तों के अतिरिक्त कुछ नही लेते, वे क्या कम है ? हम उनको कम इसलिए कहेगे कि उनका तप ज्ञान-पूर्वक और सयम-पूर्वक नही है। इसके साथ ही उन्होने असख्य जीवो के पीलन का काम किया है, उनके तप मे असख्य जीवो का हनन होता है।

इसलिए भगवान् महावीर ने कहा कि हे मानव ! यदि तप करना है, तप की ताकत वढानी है तो तप के पूर्व सयम कर।

गृहस्थ और साधु दोनो ही संयम-पालक

हमारे यहाँ सयम का रूप गृहस्थ जीवन मे भी होता है और साधु-

जीवन तो सयम की आराधना वाला है ही। केवल साधु ही सयम का पालन करते है ऐसा नही समझे। लेकिन गृहस्थ भी देश-सयम का पालन करने वाले होते है। सयम का मतलब है इन्द्रिय निग्रह, मन की वृत्तियो का निग्रह। उपवास के बाद पारणा किया और पारणा करते समय खाने के लिए बैठे। क्या खाना-पीना उचित है तथा क्या अनुचित है, क्या हितकर है और क्याअहितकर है इसका खयाल नही करके हरेक चीज मुँह मे धर ली तो यह असयम है। तप तो तकलीफ देगा सो देगा लेकिन शरीर भी तकलीफ देगा।

सत्रह प्रकार का संयम

भगवान महावीर ने सयम १७ प्रकार का बताया है। ५ आश्रवो का निरोध करना, पाँच इन्द्रियो को वश मे करना—ये दस हो गये। चार कषायो को काबू मे करना। क्रोध न आने दे, मान मत आने दे, माया का सेवन तपस्या मे नही करे और तपस्या के समय मे लोभ-लालच की मन मे लहर मत आने दे। जरा स्वजन-सम्बन्धी और ज्ञाति-जनो को समाचार हो जायेंगे, ससुराल वालो को समाचार हो जायेंगे, मेरे दोस्त आ जायेंगे। बड़े नगर मे पारणा करूँगा तो नगर वाले अच्छा बहुमान कर देंगे। तप करता है गाँव मे और पूर के लिए आ जाता है शहर मे। कभी-कभी ऐसे भाई-बहन देखने मे आते हैं। उनकी क्या भावना है, भगवान जाने। यदि यह भावना है कि नगर मे बडे सघ के सामने होगा तो अभिनन्दन होगा, कीर्ति होगी, इस भावना से कोई तप का पूर बडी जगह करता है तो वह सयम होगा या असयम ? असयम होगा। तो ये १४ हो गये—पाच आश्रवनिरोध, पाच इन्द्रिय-निग्रह, चार कषाय का जय। इनके अतिरिक्त एक शुभ मन, शुभ वचन, और शुभ काया को रखना अर्थात् मन समाधारणता, वचन समाधारणता और काय समाधारणता। ये १७ प्रकार के सयम होते है। इस तरह सत्रह प्रकार के सयम को जीवन मे धारण करना है।

एक कवि ने कहा है—

> अन्य नहीं है शिव-सुखदाता, शिव-सुखदाता सयम है।
> जन्म मरण का, मोह व्याधि का मूल मिटाता संयम है॥
> जग के सारे रिश्ते झूठे, सच्चा नाता संयम है।
> स्नेही, प्रेमी, भाई-भगिनी, मात-पिता सब सयम है॥
> मानो या मत मानो कोई, भाग्य विधाता सयम है।
> विषय-विकारों की बूँदो से रक्षक छाता सयम है॥

सयम नही होना आपका सामाजिक प्रदर्शन है। आपको अपनी दूषित वृत्तियाँ दिखाने का खयाल है। यह मानव-मन को, भाई-बहनो को तपस्या मे भी परेशान करता है।

भगवान महावीर कहते है कि भाई यदि तेरे को तप का सही लाभ लेना है और वेदनोय कर्म को काटना है, अपने जोवन को ऊँचा उठाना है तो तप के साथ मे सयम की आराधना चाहिए।

संयम के तीन भेद

सयम भी तीन प्रकार के है। एक तन का सयम होता है, दूसरा वाणी सयम होता है और तीसरा मन का सयम होता है। तन-सयम तो वहन या भाई ने खाना-पीना छोडा तब से कर लिया। अव रहा वाणी-सयम। वोलने मे, वतलाने मे सत्य वोलना, हितकर वोलना, प्रिय वोलना, कडवा नही वोलना, वाणी सयम है। सोचे-समझे विना वोलना असयम है और सोच-समझ कर वोलना वाणी-सयम है। जैसे तन-संयम किया वैसे ही वाणी-सयम का खयाल रखना चहिए। हम को तप की पूरी ताकत मिलानी है तो वाणी का सयम करके जो तप की साधना की जायगी उसकी ताकत चार गुणा, दस गुणा ही नही शत गुणा होगी। एक जन्म नही अनन्त जन्मो के वन्धन को काट देगी। इसीलिए सत ने कहा कि यह सयम हमारा सच्चा मित्र है, सच्चा परिवार का वन्धु है। माता है, पिता है, शिक्षक है। जिसको भगवान महावीर ने पाच समिति और तीन गुप्ति के रूप मे कहा, यह अष्ट प्रवचनमाता है।

संयम से संवर

सयम होगा तव एक वात का अन्तर पड जायगा। परिग्रह का वेशीपन (अधिकता) आदमी को सतायेगा नही और सयम नही होगा तो परिग्रह की कमी सतायेगी। फिर सयम नही होगा। सयम जितना कम होगा और असयम जितना ज्यादा होगा उतने कर्म के वन्धन भी ज्यादा होगे। असयम को ज्यादा वढाना ही सयम को वन्द रखने का वडा कारण है। जहाँ सयम है वहाँ सवर है और असयम है वहाँ आश्रव है।

सयम से निर्जरा

आवश्यकसूत्र मे हम सातो के लिए मूल पाठ मे आता है "पडिक्कमामि एकविहे असजमे"। भगवान ने कहा कि असयम से निवृत्ति करो, असयम जीवन को गिराने वाला है। इसलिए मैंने एक तरह से असयम को

धर्म को आगे लाना चाहेगे तो मै समझता हूँ कि आप कभी आगे नही ला सकेगे। आप धर्म-स्थानक के सामने या मन्दिर के सामने जलसा करेगे तो वह एक जगह, दो जगह या चार जगह होगा। लेकिन दूसरे समाज वाले गली-गली मे करेंगे, बाजार मे दस जगह देवता बैठायेगे। बिजली के साथ हाथी, घोडे, रथ आदि सजाकर निकालेगे। आप उनके मुकाबले मे किस सीमा तक दौडेगे ? क्या आरम्भ मे दया है, आरम्भ मे धर्म है ?

मैं आज एक दूसरी गली से जगल के लिए निकला तो दिन मे इलेक्ट्रिक की रोशनी मे देव आसन लगाये हुए देखे। कल और तरह का दृश्य एक गली मे मिला था लेकिन आज तो गली-गली मे मिल रहा है।

जैन धर्म की यथार्थ प्रभावना सादगी से ही सम्भव

मेरा अनुभवी मन कहता है कि बाहरी प्रदर्शनो से जैन धर्म दुनिया के सामने अपना गौरव नही बता सकता। जैन धर्म तो आडम्बरविहीन रहने की बात कहता है। देव, दानव, मानव मे पश्चिम के लोग ज्यादा आडम्बर कर सकते है। लेकिन धर्म कहाँ है, यह भूल मत जाना।

यह शरीर पर विविध रग के कपडे, आभूषण, दाग-दगीने पहन-कर निकलते है, सजकर दीवाली के दिन रामा-सामा के लिए निकलते है या पर्युपण के बाद खमतखामणा के लिए निकलते है। उस दिन की बात और होती है। जैसे सवत्सरि के दूसरे दिन आप निकलेगे उसमे आपकी सामाजिक चेतना है, रुतबा है, समाज कितना बडा है, समाज मे कितने ऊँचे-ऊँचे स्तर के लोग है, यह रूप तो देखने वालो की नजर मे आयेगा लेकिन आपका त्याग, वैराग्य, बन्धु-प्रेम और धर्म-क्रिया देखने मे नही आयेगी। लेकिन अभी आप जिस रूप में बैठे हो उस रूप मे नगर की फेरी कर दे तो ? कई समझिया ? म्हारी बात समझिया या नही ? अभी जिस रूप मे बैठे हो, इस सवर-सामायिक का रूप, तपस्वी का रूप, रजोहरण हाथ मे लेकर, मुखवस्त्रिका बाधकर कपडे का दुपट्टा लेकर बच्चे भी, बूढे भी, जवान भी इस तरह नगर मे निकले तो वह प्रभावना ज्यादा होगी या पचास घोडो को लेकर निकले तो वह प्रभावना ज्यादा होगी ? शायद आप जवाब नही देगे।

राजस्थान का किस्सा मुझे मालूम है। एक बार गुरु महाराज का चातुर्मास अजमेर मे था। सेठ उम्मेदमल जी लोढा कोटि-पति श्रीमन्त ओसवाल समाज मे प्रमुख थे और सेठ भागचन्दजी सोनी सरावगी समाज मे प्रमुख थे। सेठ उम्मेदमलजी ओसवाल समाज के प्रमुख

व्यक्तियो के साथ लाखन कोटडी के धर्मस्थान से नगे सिर, विना जूते पहने, चद्दर ओढकर मोती कटला मे गुरुमहाराज के दर्शन करने के लिए दरगाह वाजार के बीच मे होकर इस वेश मे आये। रास्ते मे लोगो ने देखा कि सेठजी आज इस तरह कहाँ जा रहे है? किसी जानकार ने कहा कि सेठजी का आज व्रत है, गुरु महाराज के दर्शन करने के लिए जा रहे है। चार घोड़ो की वग्घी मे चढने वाले, पचासो अगरक्षक जिनके पास रहते थे वह व्यक्ति इस वेश मे पैदल चल रहा है तो इससे धर्म की प्रभावना होगी या नही होगी?

सही रूप मे धर्म की प्रभावना कैसे होती है, यह समझने की वात है।

राजा सम्प्रति आचार्य सुहस्ती के समय मे हुए जिन्होंने जैन धर्म को और जिनशासन को ऐसा दिपाया कि वैसा उदाहरण इतिहास में मिलना कठिन है। वे चाहते तो अच्छे मेले और जलसे कर सकते थे, उनमे सव तरह का सामर्थ्य था लेकिन उन्होने सोचा कि धर्म की प्रभावना का सही ढग और है। उसने अपनी वच्चियो को शिक्षण दिया और सोचा कि हमको धर्म के लिए सयम करना चाहिए, प्रचार के लिए सयम करना चाहिए। महलो मे रहकर धर्म की वात पूरी नही होगी। इतिहास कहता है कि राजा सम्प्रति ने अपनी लडकियो को श्वेत वस्त्र पहनाकर धर्म-प्रचारक वनाकर भेजा। जिस तरह से आज आप को ईसाई सदर्स देश-विदेश मे प्रचार करती हुई दिखती है उसी तरह से सप्रति की लडकियो ने प्रचारक वनकर अनार्य देशो मे जाकर जैन धर्म का प्रचार किया।

लाला साहव! ऐसे धर्म का प्रचार होता है, ऐसे धर्म की प्रभावना होती है। पहले खुद के अग पर सयम आवे तव होता है। जव तक ठाट-वाट, राग-रंग छोड़ने मे नही आवे, विलास नही छूटे तव तक तप सही रूप से नही होगा। जितना असयम ज्यादा होगा, जीवन मे उतनी ही हिंसा ज्यादा होगी।

कभी-कभी लोग प्रभावना करते है तो उपाश्रय के वाहर कही नारियल के टुकडे विखर जाते है, कही शक्कर या मिश्री विखर जाती है जिसके कारण चीटियें आ जाती है और आने-जाने वालो के पाव से दव कर मर जाती हैं। वह प्रभावना किसी के पेट मे भी नही गई और देने वालो के पास मे भी नही वची। एक तरफ तो कीडी अनजान मे पाव के नीचे दव कर मर जावे तो उसके लिए प्रायश्चित्त लेते है। सत्यानाश नही करने

वालो ने कैसा हाल खडा कर दिया, नारियल के टुकडे और मिश्री के कण विखेर कर। अरे भाई ! दान का भी तरीका होता है, उसमे भी विवेक होता है, संयम होता है। आज जैन समाज मे दिखावा इतना वढ गया है कि देखकर विचार आता है। क्या इससे जैन धर्म अपना नाम ऊँचा करेगा, समझ मे नही आता।

शृंगारिक हिंसा से बचिये

मैं कुछ आप को आप की गलती वताने के लिए या आप के ऊँचे स्तर को गिराने की वात नही कह रहा हूँ। आपके मन को, आपके जीवन को, आपके व्रत को, आपकी साधना को उज्ज्वल करने के लिए सही रास्ते की वात कह रहा हूँ। यदि आप सयम स्वीकार करे, माताएँ तपस्या के साथ सयम करे, वेश-भूषा और देन-लेन मे सयम करे तो हजारो लाखो जीवो की हिंसा उनके सयम से वच सकती है। कपडे पहनने मे होने वाली हिंसा, शृंगार की टीकी-टिकडी मे होने वाली हिंसा, यदि सयम किया जाय तो कितनी हिंसा वचेगी। क्रूम के चमडे से बनी हुई चीजे कोमल होती हैं। जिन्दे जानवरो को मार कर नर्म गर्म चमडा और कपडे वनाये जाते है। हमारे वहन-भाई भी उन चमडो के कपडो को और शृंगार की विन्दियो इस्तेमाल करते है।

पहले कुमकुम से भाल सजाया जाता था लेकिन आज कुमकुम की जगह कितनी प्रकार की चीजे इस्तेमाल मे आती है, मै उनका पूरा नाम नही जानता। पहले हाथ रगने के लिए पिसी हुई मेहदी भिगोकर काम मे ली जाती थी फिर उससे हाथ माडे जाते थे लेकिन आज हाथ रगने के लिए, नख रगने के लिए, टीकी लगाने के लिए कितने प्रकार के रग, न मालूम किन-किन चीजो से तैयार किये जाते है और इनके लिए कितने जानवरो की हिंसा की जाती है ? आज आप कितने असयमी हो गये है ?

उपवास, वेला तेला, पचोला, अठाई आदि उग्र तप करने वाली वाई के हरेक घर मे ऐसी डिविये मिलेगी। इसमे कितना आरम्भ होता है, कितनी हिंसा होती है, कितनी हिंसा को प्रोत्साहन मिलता है ?

एक तरफ तो चोरड़ियाजी आये और कहने लगे कि आज इतने जानवरो को छुडाया है, हजारो की तादाद मे पकडी हुई चिडियो को और पक्षियो को छुडाकर उडा दिया है। इस तरह की वात वोलने लगे। मैंने समझा कि यह तो जानी-मानी दया है। एक तरफ पशु-पक्षियो को छुडाते

६

सुख का साधन : दान

प्रार्थना

वीर सर्व सुरासुरेन्द्रमहितो, वीर बुधा सश्रिताः ।
वीरेणाभिहत स्वकर्म-निचयो, वीराय नित्यम् नम. ।।
वीरा-त्तीर्थमिद प्रवृत्तमतुलं वीरस्य घोर तपो ।
वीरे श्री-धृति-काति-कीर्ति निचयो, हे वीर भद्रं दिश ।।

धर्मप्रेमी वन्धुओ !

परम मगलकारी, सकल भव भयहारी भगवान जिनेश्वर देव को नमस्कार करने के वाद ससार की आधि, व्याधि, उपाधि से सत्रस्त प्राणियो को परम् कृपा करके जिन्होने कल्याण का मार्ग वतलाया उन देवाधिदेव महावीर का हम किन शब्दो मे अभिवादन करे, उनकी गुण-गाथा किन शब्दावलियो से कहे, यह समझ मे नही आता । अत शब्दावली से उनका गुण, उनका महत्त्व, उनके तप और त्याग की महिमा गाने की वजाय उन्होने हमे क्या सदेश दिया, क्या उपदेश दिया और किस रास्ते पर चलने पर हमे शान्ति पाने का पथ प्रदर्शन किया उसी पर थोडा चिन्तन करना ठीक समझ रहा हूँ ।

गुणगान के तरीके

एक तरीका है, गुणवान के गुणो का वहुमान करने से और गुणगान मे कर्मो की कोटि खपाई जाय तो यह कहा गया है कि उत्कृष्ट रसायन आने पर तीर्थंकर गोत्र का वन्ध होता है । लेकिन इसका नाप नही किया जा सकता कि गुणगान करने वाले की किस रसायन को उत्कृष्ट मानेगे और किस को मध्यम मानेगे और किसको जघन्य मानेगे । इसलिए भूल-

भुलैया मे आ जाते है। यह कहकर सन्तोष करते हे कि भगवान् का गुण-गान करके हम इतने मस्त हो जाते हे कि उसमे भी थोडा आनन्द आ जाता है। इसलिए गुणगान का जो उत्तम मार्ग हे उस पर सर्वदा के लिए आलवित होने के वजाय गुणगान का एक तरीका यह भी है कि उन गुण वालो ने जीवन खोजने का, जीवन वनाने का जो मार्ग दर्शन दिया है उसको पकड ले, यह उनका वहुत वडा गुणगान हो जाता है।

कुल-कन्या के समान आचरण करें

मै कहता हूँ कि मेरा और महापुरुषो का हजार वार जय-जयकार वोले, उसके वजाय उस कुल कन्या की तरह रहे जो अपने पति का नाम नही लेती। पति को सर्वस्व मानते हुए भी अपने मुँह से अपने पति के नाम का उच्चारण नही करती जव कि उसके अडोस-पडोस के लोग दिन मे वीसियो वार उसके पति का नाम लेते है।

अव मै आपसे पूछू कि पति का वहुमान नाम न लेने वाली कुल-कन्या के मन मे ज्यादा है या दोस्तो के मन मे ज्यादा है, जो वार-वार नाम ले रहे है? वे कभी सेठ को धन्यवाद दे रहे हैं, कभी उसका जय-जयकार कर रहे हे, कभी उसकी महिमा गा रहे हैं। लेकिन ऐसा जय-जयकार करने वाले और धन्यवाद देने वाले कभी-कभी वचना भी कर जाते है।

अपने दोष निकालो

मुझे मेरे गुरु ने यह नसीहत दी है कि धन्यवाद करने वालो के और जय जयकार करने वालो के फुसलाव मे कभी मत आना। इसमे कभी ठगाई हो सकती हे। धन्यवाद देने वालो और जय-जयकार के नारे लगाने वालो मे फुसलना मत, लेकिन यह सोचना कि सचमुच मे ये जो कह रहे है उसमे कहा तक सच्चाई हे, और मै कहां तक वढा हूँ और मेरे मे जो कमी हे उसको निकालने-वनाने मे प्रयत्नशील वन सकू। यह भगवान महावीर का वताया सच्चा रास्ता है। अत मै यह कह गया कि प्रभुवर महावीर परम उपकारी वीतराग और सर्वज्ञ है, उनके गुणो को शब्दावली मे वताने के वजाय प्रेक्टिकल रूप मे मुझे कुछ मिले, समाज को कुछ मिले, आपको कुछ मिले—इस वात का चिन्तन रखना चाहता हूँ।

पर्वाधिराज पर आप अपना ध्यान केन्द्रित करे। मै कह रहा हूँ कि शब्दावली से उस महाप्रभु के गुणगान का मार्ग छोडकर उनका वताया हुआ मार्ग क्या है, उस पर मुझे कितना चलना है, साधु समाज को कितना

चलना है जिससे हमारा भी कल्याण हो और विश्व का भी कल्याण हो।

जैन धर्म सर्वकल्याणकारी

लोग आरोप लगाते है कि जैन धर्म व्यक्ति का स्वार्थ साधता है, समाज-हित की बात नही कहता। वह व्यक्ति मे स्वार्थीपन की भावना जगाता है। वह हर आदमी को, अपनी आत्मा का कल्याण करो, अपना जीवन वनाओ, यह शिक्षा देता है। जैन धर्म समाज-हित की बात नही कहता है। लेकिन वस्तुत ऐसा कहने वाले भाइयो मे इस सम्बन्ध का सही ज्ञान नही है। वे वास्तविक मूल रूप को नही समझ रहे है। भगवान् महावीर केवल व्यक्ति के व्यक्तिगत जीवन को ऊँचा उठाने की बात ही नही वह रहे है, लेकिन वीर-वाणी व्यक्ति का अपना जीवन सुधारने के साथ विश्व-कल्याण का सदेश देती है। यह थोडा सा फर्क है। व्यक्ति अपना व्यक्तिगत जीवन निर्मल करता हुआ दूसरो के जीवन को निर्मल वनाता है।

दुनिया के कई दूसरे मत, सप्रदाय, पार्टियो या राजनीतिक टुकडियो, वे जहाँ पर अपना लोक हित, जन उपकार करने के मार्ग मे व्यक्ति के व्यक्तिगत जीवन को निर्मल करना भुला देते है, वहाँ हमारी जैन परम्परा कहती है कि पहले खुद का ख्याल रखो, ऐसा नही होगा तो पददलित हो जाओगे। विश्वकल्याण की वात करते जाओ, लोकहित की वात करते जाओ, कही ऐसा नही हो कि दूसरो के हित की वात करते हुए घर मे अन्धेरा ही रहे।

महावीर का कल्याण-मार्ग

महावीर अपना स्वय का निर्माण करने के साथ-साथ दूसरो का निर्माण करने की वात कहते हैं।

वात तो मुझे दूसरी कहनी है लेकिन एक छोटी सी कडी याद आ गई—

> सामायिक से जीवन सुधरे जो अपनावेला।
> निज सुधार से देश जाति, सुधरी हो जावेला।
> कर लो सामायिक रो साधन, जीवन उज्ज्वल होवेला।

यह है भगवान् महावीर का कल्याण मार्ग। एक छोटा सा नमूना जो महावीर के कल्याण मार्ग का वताया गया, वह यह है कि अपने को वनाते हुए दूसरो का कुछ हित करो। अपने को सुधार कर दूसरो का

अज्ञान दूर करो, मिथ्या श्रद्धा दूर करो तो स्वय के साथ पर-कल्याण भी कर सकते हो। कारण कि जब तक चारित्र और तपस्या की प्रवृत्तियाँ और समाज के विविध धर्म की प्रवृत्तियाँ, उनके पीछे यदि ज्ञान और विवेक का दीपक नही होगा, ज्ञान और विवेक की ज्योति नही होगी तो किस समय कैसा काम करना चाहिये जो हमारे लिये, समाज के लिये अधिक कल्याणकारी हो सके, यह बात बिना विवेक के आदमी नही समझ सकता। विवेक होगा तभी उसको समझ आयेगी।

आत्मा के मुख्य गुण का पहले दिन ज्ञान के तरीके विचार करना चाहिये था किन्तु दर्शन और उसकी भूमिका एक होने के कारण पहले दर्शन पर विचार किया गया, दूसरे दिन ज्ञान पर विचार किया गया, तीसरे दिन चारित्र पर विचार किया गया, चौथे दिन तप पर विचार किया गया और पाँचवे दिन सयम पर विचार किया गया। आज दौडते-दौडते छठा दिन आ गया और ऐसा मालूम हो रहा है कि पर्युषण पर्व की शुरुआत अभी-अभी हुई हो। काल इतनी तेजी से जाता है कि पता नही लगता, अब मात्र दो दिन रह गये।

पर्युषण का लाभ लो

पुर्युषण पर्व आने वाला है यह सोच रहे थे किन्तु अब दो दिन बाद पर्युषण सम्पूर्ण होकर चले जायेगे। तपस्या की बात भाइयो के मन मे है तो कर ले, वे सोचेगे जितने मे तो पर्युषण समाप्त हो जायेगे, करना हो सो कर लीजिए। बहनो मे तपस्या की होड लग रही है, एक दूसरे से आगे बढने का प्रयत्न हो रहा है। भाइयो मे भी त्याग-तप की कुछ न कुछ श्रद्धा उमडती है, मन मे कुछ न कुछ लहर भाइयो मे भी उठती है। युद्ध की जब भेरी बजती है तो कायरो मे भी मर्दानगी आ जाती है। इसी तरह पर्युषण की भेरी बजती देखकर जो कमजोर बूढे आदमी है, जिनके मन मे कमजोरी थी, 'म्हासू नही होवे' सोचते थे, वे लोग भी थोडी-थोडी हिम्मत करते है। अमीर घर के लडके भी सोचते है कि पर्युषण के दिनो मे प्रतिक्रमण करना चाहिये। सामायिक करनी चाहिए। वे लोग भी सामायिक-प्रतिक्रमण मे हाजिर होगे। रणभेरी बच चुकी है लेकिन उसकी आवाज सुनकर कमजोर बाजे लेकर ढील-ढाले चलेगे, हाथ मे हथियार लेकर और ढील-टाले चले तो थोडी तपस्या की और दूसरे दिन टीले पड गये, बाजे बजे और ढील्ले हो गये, तो समाज मे तेजस्विता नही आएगी, ताकत नही आयेगी, धर्म की प्रभावना नही होगी। करना

धन : ग्यारहवाँ प्राण

लेकिन मुझे ताज्जुब है कि अन्न जैसी प्यारी चीज को तो जैन छोड सकते है लेकिन आपका ग्यारहवाँ प्राण अलग है। पैसा या धन ग्यारहवाँ प्राण है। जब धन-त्याग की बात आती है समाज के हित मे, तो बडा कठिन हो जाता है। ज्ञान का क्षेत्र है, दर्शन का क्षेत्र है, चारित्र का क्षेत्र है, समाज के भाई-बहनो को सहारा देने का क्षेत्र है, अधर्मियो को धर्मी बनाने का क्षेत्र है, इन क्षेत्रो मे धन को पानी की तरह बहाने का मौका आवे तो कितना धन-त्याग किया जायगा ? पर्युषण के ६ दिन पूरे हो रहे है, कितना दान इकट्ठा हुआ ? मै आपके शहर की बात कर रहा हूँ। एक एक घर मे तपस्या का प्रसग आवे तो एक बाई की तपस्या के पच-क्खाण मे हजारो रुपये पूरे हो जाते है। जीमणवार हो तो और भी अधिक खर्चा हो सकता है।

पचक्खाण की सामूहिक शैली विचारणीय

हमारे समाज मे रिवाज है कि वे सामूहिक पचक्खाण करने नही आते लेकिन अभी एक नमूना देखा। सौराष्ट्र के भाई-बहन सामूहिक रूप से पचक्खाण करने आये। उनके यहाँ ऐसा रिवाज है कि वे सामूहिक रूप से निकलते है। चाहे मूर्तिपूजक हो, चाहे स्थानकवासी हो, एक साथ निकलते है और पचक्खाण के लिए जाते है। मारवाडी समाज मे भी ऐसा रिवाज हो जाय तो कैसी प्रभावना हो, यहाँ भी चार-छ मासखमण करने और अठाइयो की गिनती ही नही की गई, अगर पचक्खाण का सामूहिक रूप होता तो ज्यादा प्रभावना होगी और खर्च मे भी फर्क पडेगा। अलग अलग करने मे अलग-अलग सगे-सम्बन्धी बुलाना चाहता है। लेकिन होता क्या है कि हर एक आदमी अलग-अलग नाम चाहता है। समय के अनुसार इस पर विचार किया जाय, इसकी अपेक्षा है।

दान गृहस्थ का आवश्यक कार्य

तप के पहले सयम चाहिए और तप के बाद दान चाहिए। गृहस्थ का छठा कर्तव्य दान बताया गया है। सद्गृहस्थ वह है जो सद्पात्र को रोज दान देवे। दान देने के बाद भोजन करे। जो सद्गृहस्थ बारह व्रत-धारी श्रावक नही है उसे भी हर रोज ६ कर्तव्यो की साधना करनी चाहिए। पाचवाँ कर्तव्य तप बताया है और छठवा दान बताया गया है। देव भक्ति, गुरु सेवा, स्वाध्याय सयम, तप और दान—ये गृहस्थ के षट्-कर्म बताये गये है। दान के लिए ऐसा कहा है—

भाइयो मे झगडा होता है, परिवार के बीच मे झगड़ा होता है तो साधु उनको उपदेश देकर भाई-भाई का खार मिटाकर प्यार कराता है। उसका यह दान कभी खूटे क्या ? उसका यह दान ले ले तो १० दिन बाद या लम्बे समय बाद भी नही खूटेगा। साधु ऐसा दान देगा कि आप लोग धन्य-धन्य कहेगे। साधु ज्ञान दान देगा, आप को सुखी बनाने के लिए वह चारित्र दान देगा। साधु १०-२० मासाहारी व्यक्तियो को उपदेश देकर साधु बना सकता है, उनको शाकाहारी बना सकता है। ऐसा दान देना आप सीख जाओगे तो इस दान के आगे आपका द्रव्यदान हजारवाँ या करोडवाँ भाग भी नही है।

लेकिन यह ज्ञान सब गृहस्थ नही दे सकते।

गृहस्थ का दान द्रव्य दान : साधु का दान, भवदान

गृहस्थ के दान देने की व्यवस्था इस तरह से द्रव्य दान देने की है और मुनि का दान भाव दान है।

साधुओ को देने योग्य चौदह वस्तुएँ

द्रव्य के त्यागी साधु को देने के लिए शास्त्र मे १४ वस्तुएँ बताई है। पोषा करने वाला पोषध का पारणा करने से पहले यह सोचेगा कि यदि भाग्य से सत, महात्मा, त्यागी, महाव्रतधारी आवे तो उनको पहले देकर फिर पारणा करूँ। साधु को देने के लिए चौदह प्रकार की चीजे होती है। आज तो हजारो धर्मी बन्धु और सत्सग प्रेमी बन्धुओ मे से ५, १० के घरो मे भी ये १४ चीजे देना तो दूर भी मिलना भी मुश्किल होगी। ये १४ चीजें क्या है, जरा ध्यान मे ले लीजिए। (१) असण (२) पाण (३) खादिम और (४) स्वादिम ये चार प्रकार का आहार। चार प्रकार के वस्त्र बताये है—(१) वस्त्र (२) पात्र (३) कबल और (४) रजो-हरण ये चार हो गये। आपके घरो मे इनमे से क्या-क्या देने को मिलेगा ?

आजकल सिनेमा की चाल के रगीन कपड भाई-बहन पहनते है। उनको कभी साधु-साध्वियो को वस्त्र देने का मौका मिल सकता है क्या ? आप की सफेद चद्दर है, यदि कभी किसी साधु की चद्दर जर्जरित हो रही है, उसका कपडा फट गया है या गुम हो गया है तो आपकी सफेद चद्दर काम आ सकती है। लेकिन केशरिया रग की चद्दर है तो वह काम नही आ सकती। पूर्व के जमाने के गृहस्थ भाई-बहन श्वेत कपडे इसलिए पहनते

थे और घर मे इसलिए रखते थे कि आवश्यकता पडने पर सहज मे सन्त महात्माओ के पात्र मे भी दान दे सके।

आज के जमाने मे वस्त्र और पात्र तो मिले नही। चादीरो कटोरो महाराज लेनो चाहे तो मिल जावे। पर महाव्रतधारी को यह लेना नही। चाँदी को, सोने को प्यालो छोटो-मोटो चाहिए तो मिल सके है। ताँवा, कासा, पीतल का वर्तन भी आजकल कही-कही शायद मिलेगा। लेकिन साधु के काम आने वाले काष्ट का पात्र शायद नही मिलेगा।

कोई-कोई भाई या कोई वहन कभी-कभी दान का लाभ लेने की भावना वाले हो तो उनके यहाँ ऐसा भी साधन मिल सकता है। वह सोचता है कि कभी कोई वैरागी दीक्षा ले तो एक दो जोड उसको वेरा देंगे, ऐसी कोई वहन या कोई भाई व्यक्तिगत रूप से मिल सकते हैं। सामान्यतया जनता के यहाँ पात्र नही मिलेंगे। क्योकि आप काम नही लेते।

आठवाँ है रजोहरण। मैं समझता हूँ कि जैन भवन के विशाल प्रागण मे १००-२०० पोपा करने वालो के लिये २५-५० रजोहरण तो मिलेंगे ही अभी आपके यहाँ 'सैकडो भाई सामायिक किये बैठे है उनसे मैं पूछूँ कि पूँजणी कितनो के पास है, अगर वे पूँजणी को हाथ मे लेकर हाथ ऊँचा करे तो पता लग जायगा। वाइयो से क्या कहूँ, उनके पास गोखरू मिल जायेंगे लेकिन पूँजणी रखने मे उनका नम्वर भाइयो से भी नीचा है। तप करने मे तो वे आगे रहती है। थोडा वाइयो को भी भाइयो से पीछे रहने दीजिये। (सभा मे आमोद की लहर फैल गई।)

चार प्रकार का अन्न कहा गया, चार प्रकार के कपडे या वस्त्र हो गये। अव रहा पीठ और फलक। आपके हर घर मे कुर्सियाँ तो मिल सकती है लेकिन चौकी या वाजोटिया और ऐसा लम्वा पाटा नही मिलेगा। यदि कभी वडा चौमासा हुआ, हम तो १० साधु है, लेकिन १० की जगह २० आ गये और उनके लिये पाट की जरूरत है, हवेलियो मे जाकर मागे तो कितने पाट मिलेंगे ?

पहले के जमाने मे ब्रह्मचर्य का पालन करने वाले भाई-वहन और दीक्षा लेने वाले खाट या पलग पर नही सोया करते थे, गादी पर नही सोया करते थे। चोरडियाजी की तरह वडे-वडे लोग जो पलग पर नही सोते थे ओर जमीन पर भी नही सोते थे इसलिये उनके यहाँ ऐसे लम्वे पाट मिल जाया करते थे। यही हाल शय्या, सथारा का है।

व्यवस्था करने का दायित्व भी नगर का है। कही पैसा नही होने पर काम अटका हुआ है, कही पर प्रेरणा नही होने से काम अटका है तो कही मत-भेद होने से काम अटका है। लोगो मे भावना हो और सोचे कि धर्मरक्षा भी हमारा कर्तव्य है, तो समाज का रक्षण हो सकता है। क्षेत्रो को सभालने और उनमे प्रचार करने के लिये समय-दान और द्रव्य-दान दोनो आवश्यक हैं। विचार-दान से भी वहुत सा काम हल हो सकता है। पर्वाधि-राज पर्युषण के दिनो मे समाज के हजारो भाई-वहन इकट्ठे होते है। यदि दान का उचित उपयोग करे तो समाज मे देने वालो की कमी नही है।

दान का महत्व

दान की कितना महत्त्व है, इसको अपने शरीर से समझिये। भोजन ग्रहण करने वाले दोनो सन्ध्या शरीर से मल का विसर्जन नही करे। मल का त्याग नही करे तो क्या शरीर स्वस्थ रहेगा। आपको यह कह दिया जाय कि १५ दिन तक शौचालय मत जाओ तो क्या आपको मजूर होगा ? कम से कम उपवास के दिन तो त्याग कर लो, आज तो शौच को नही जाना चाहिये। शरीर की तदुरुस्ती कव रहती है जव कि आहार के साथ नीहार वरावर हो।

इसी तरह एक आदमी धन कमाता तो है लेकिन विसर्जन नही करता, त्यागता नही है तो उसका आत्मिक जीवन स्वस्थ रहेगा या वीमार पडेगा ? इसलिये गृहस्थ के लिये दान देना जरूरी है। जैसे हड्डी का भाग नख द्वारा वाहर निकलता है, केस आने वन्द हो जायँ, आँखो मे गीड आना वन्द हो जाय, नाक से मलवा निकलना वन्द हो जाय, कान मे ठेठी नही आवे, मल और मूत्र आना वन्द हो जाय तो क्या आप ज्यादा सुखी रह सकेगे ? नही। इसी तरह यदि प्राप्त द्रव्य का त्याग नही करेगे, किसी को पानी या रोटी नही देगे, दान नही करेगे और जो आवे सो तिजोरी मे भरते जायेगे तो इस रास्ते पर चलने वाले आदमी सुखी नही रहेगे।

सुखी रहने का सच्चा मार्ग : दान

सुखी रहने का रास्ता क्या है ? हजार मिलाने वाला आदमी हजार के अनुपात से त्यागे और लाख मिलाने वाला आदमी लाख के अनुपात से त्यागे और करोड मिलाने वाला करोड के अनुपात से त्यागे। यदि इस तरह से द्रव्य का उचित मार्ग से त्याग होगा तो समाज मे अहिंसा तथा ज्ञान, दर्शन, चारित्र के प्रचार-प्रसार के जो क्षेत्र है, साधु-साध्वियो के उप-

कार का क्षेत्र है, और भी कई नये क्षेत्र हैं, सब व्यवस्थित चलेंगे ? पैसे वाले भाई सोचते है कि पैसे की जरूरत है तो हमारे पास माँगने के लिए आओगे, तब देंगे । हमारे पास आकर अर्ज करो, चार आदमियो के बीच मे मांगो तो थोडा एहसान करते हुए देगे । अरे भाई ! देने का यह तरीका नही है ।

भगवान महावीर ने मुक्ति का मार्ग दान, शील, तप और भाव चार प्रकार का कहा है ।

दान के विभिन्न क्षेत्र

आज दान का दिन है । समय अधिक हो गया । लम्बी बात नही कहनी है थोडे मे सोचिये कि हर आदमी को मुक्त हाथ से, खुले दिल से शुभ खाते मे, ज्ञान, दर्शन, चारित्र, जीव-दया, साधर्मी बन्धुओं आदि जो उत्तम क्षेत्र है, ऐसे पचासो क्षेत्र है जहाँ दिया हुआ द्रव्य बहुत ही लाभ का कारण हो सकता है, दान देना चाहिए ।

आप द्रव्य का त्याग करेंगे तो ममता घटेगी । दूसरी बात यह होगी कि समाज मे त्याग की परिपाटी कायम रहेगी । तीसरी बात यह होगी कि त्याग करने से समाज दुर्बल और पराश्रित नही रहेगा, अपने पैरो पर खडा रह सकेगा । हर क्षेत्र मे समाज चाहेगा कि कोई भी काम हो, हमारे पास आवे, हमारे पास शक्ति है । हम चाहे तो बडे से बडा पुस्तकालय खोल सकते है, धार्मिक शिक्षा की व्यवस्था कर सकते है । हम चाहे तो पचासो विद्वान खडे कर सकते है । हर जगह एक-एक भाई साहस करने वाले मिल जायेंगे । जलगाँव के भाई सुरेश जी ने व्यक्तिगत ताकत से यह साहस किया कि जितना खर्च होगा स्वाध्यायशाला मे धार्मिक शिक्षण की स्वतन्त्र व्यवस्था करूँगा, छात्रवृत्ति दूँगा । आज महाराष्ट्र मे २० गाँवो को सभालने वाले लोग तैयार हो गये । मुझे उनके उत्साह की भावना को देखकर प्रमोद होता है । मै चाहता हूँ कि जलगाँव की तरह मद्रास मे, बेंगलोर मे हमारे बडे लोग जहाँ जहाँ पर है वे अपने कर्तव्य की ओर ध्यान दे, सघ की जिम्मेदारी लेवे । हर शुभ काम मे सिंचन करना है, ममता घटाने से कर्म की निर्जरा होती है ।

समाज-सेवा करना हर व्यक्ति का कर्तव्य है । धन वाले धन देकर सेवा करे, दिमाग वाले दिमाग से सेवा करे । जो बोलना और प्रचार करना जानते हो वे शुभ कार्य का प्रचार करे । ऐसी मिली-जुली ताकत से आप अपनी शक्ति का दान करेंगे तो समाज सुखी रहेगा, आप तप से

बढेगे। अहिंसक सस्कृति सही रूप मे वढगी तो भगवान् की सच्ची सेवा होगी, हमारे जैसे सत को भी प्रमोद होगा। मैं चाहूँगा कि कोई भी भाई-वहन अपनी-अपनी शक्ति के अनुसार दिये बिना नही रहे, हर कोई त्याग करे, दान दे।

दान से ज्ञान-दर्शन-चारित्र की वृद्धि

एक वार जोधपुर मे प्रमुख सतो का चातुर्मास था। पू० आचार्य श्री गणेशीलाल जी महाराज वहाँ विराजमान थे, व्याख्यान वाचस्पति श्री मदनलाल जी महाराज वही विराजते थे। वहाँ पर एक प्रसग चला और उन्होने कहा कि हर जैनी भाई इतना सोचे कि मैं अपने द्रव्य का एक हिस्सा ज्ञान, दर्शन, चारित्र की अभिवृद्धि के लिये दूँगा, विसर्जन करूँगा, ममता छोड़ूँगा तो इससे समाज की कितनी आवश्यकताओ की पूर्ति हो सकती है।

सत तो वाणी से इशारा करते है। केशी महाराज से श्रावक व्रत ग्रहण कर लेने पर राजा प्रदेशी ने राज्य की आय का चतुर्थाश दानशाला के लिए निकालने की प्रतिज्ञा की। कितनी ममता घटाई।

श्रावको का काम है कि वे इस प्रकार के इशारे को गृहण करे और अमृत की बूँदो का सग्रह करे तो समाज की, ज्ञान-दर्शन-चारित्र की समृद्धि वढेगी और धर्म-शासन की प्रभावना के साथ लोक-कल्याण होगा। जो ऐसा करेगे वे इस लोक और परलोक मे आनन्द, शान्ति और कल्याण पायेगे।

जैन भवन, मद्रास
(दिनाङ्क १२-६-८०, प्रात १० बजे)

महावीर ने दिल की दिवाली का एक पर्व हमारे सामने रखा है। यह पर्व अब बहुत दूर नही रहा, बिल्कुल नजदीक ही आ गया है।

छोटे-मोटे घर की दिवाली के लिए भी तैयारी करनी पडती है। कितने दिन पहले से इधर-उधर सारा सामान उथल-पुथल कर देते हो ? दुकान की सफाई के लिए व्यावसायिक कार्यक्रम भी या तो एक दिन के लिए वन्द रखना पडता है, अथवा रात को जागरण करना पडता है। इतना आवश्यक समझते है कि कोई जगह सफाई हुए विना रह न जाय। लोग मानते है कि कम से कम दुकान और मकान, जिसमे हम रहते है, उसमे तो दिवाली की सफाई होनी ही चाहिए। मकान की सफाई होनी चाहिए, दुकान की सफाई होनी चाहिए, तो क्या दिल की सफाई नही होनी चाहिए ? वेश-भूषा मे सफाई आनी चाहिए, कपडो मे सफाई आनी चाहिए। मातायें दिवालो के दिन कैसे कपडे पहनती है, और आप भी कैसे कपडे पहनते है और वाहर निकलते हैं, दुकान पर शो कैसा लगाते है, कैसी सजावट करते हैं ? जहाँ दुकान मे एक दो बिजली के वल्व रहते है, उसके स्थान पर कितनी जगमगाहट होती है।

ताज्जुब तो यह है कि घर और दुकान की दिवाली शान से मनाना चाहते है लेकिन जिसके साथ अनन्त काल से सम्बन्ध है, उस आत्मा की दिवाली और दिल की दिवाली को भूल जाते है।

जानकर भी अनजान बने तो समझाना कठिन

भूले हुए लोगो को समझाना सन्तो का काम है। लेकिन एक तो भूला हुआ वह है जो जानता ही नही और एक भूला हुआ वह है जो जानकर भी अनजान वन रहा है। जो जानता ही नही उसको तो जनाया जा सकता है, थोडे श्रम से समझाया जा सकता है, जगाया जा सकता है, लेकिन जान-बूझकर अनजान वन जाय तो मामला मुश्किल है। आपने कैसे जाना है, यह तो आप अपने दिल से पूछे; मैं सवका फैसला दूँ यह भी उचित नही। लेकिन समस्या जरूर है, ज्वलन्त प्रश्न जरूर है कि हम कही जाने हुए भी अनजाने तो नही वने है।

ज्ञान के अनुकूल आचरण आवश्यक

अभी दो वच्चो के सवाद के रूप मे, मद्रास मे वच्चे वोलने वाले नही थे इसीलिए प्रौढ स्वाध्यायी वोल गये। सवाद था वच्चो का लेकिन वोल गये तरुण। सवाद में भी उन्होने शिक्षाप्रद वात कही और नेत्र-

बनूँगा, वासुदेव को दीक्षा नही आती, वासुदेव महाव्रती नही वनते, सयम ग्रहण नही कर सकते। यह वात जव कृष्ण ने सुनी तो उनके मन को वडी ठेस लगी। खुशी हुई या दुख हुआ? क्योकि भगवान् ने अपने ज्ञान से कह दिया कि तुम्हारे सयम का योग नही है तो इस पर दुख होना ही था।

आपके वास्ते मैं कह दूँ कि आपके दीक्षा को जोग नही है तो आप केबेला कि म्हारी तो भावना है, लेकिन आप फरमा दियो कि दीक्षा आवे नही तो घर मे ठीक हा। क्यो सुरेश बाबू, क्या विचार है? तो यह वडा सहारा हो जाता है। यदि कोई ज्ञानी कह दे कि तू यह काम नही कर सकेगा। एक तो पहले से ही नही करना है और दूसरा कोई ज्ञानी निर्णय दे दे कि भाई तेरे योग नही है तो फिर आप बिना योग के निर्भय हो जाओगे, कहोगे कि म्हारो तो मन है लेकिन आपने मना कर दी। ६० वर्ष का कोई भाई दीक्षा लेवण ने आवे और म्हे मना कर दा तो वो आइज केबेला कि म्हारो तो मन हो लेकिन महाराज दीक्षा देवण ने तैयार नही तो कोई वात नही। आप नही के रया हो तो नही लेऊँला।

भगवान नेमिनाथ ने श्री कृष्ण से कहा कि बासुदेव के पद पर रहने वाला सयम को ग्रहण नही करता, दीक्षा ग्रहण नही करता, उसके लिये तुम खेद मत करो। कृष्ण सोचते है कि भगवान नेमिनाथ खुद तो सारा वैभव छोडकर दीक्षित हो गये, मेरे पुत्र जाली, मयाली, प्रद्युम्न भी दीक्षित हो गये और मै बैठा हूँ। शायद आप भी सोचते होगे कि आप मे से कइयो के भाई, भतीजा, किसी की वहन दीक्षा ली होवेला, किसी की पत्नी दीक्षा ली होवेला तो वह कहेगा कि वाप जी म्हारे तो परिवार मे से पहले कई लोग दीक्षा लीओडा है। अरे भाई! कृष्ण के परिवार मे से नेमिनाथ दीक्षा ले चुके है, फिर वे क्यो दीक्षा लेना चाहते है? अरे, वापजी! वे तो भगवान थे, महारथी योगी थे। आपके मन की स्थिति का हाल देखा जाय तो कितना शोचनीय है।

श्री कृष्ण को जव मालूम पडा कि मैं दीक्षित नही हो सकता तो दीक्षा के सिवाय अन्य काम तो कुछ कर सकता हूँ। उसने सोचा, ऐसा क्या काम करूँ? तीन खड का मुझे राज्य मिला है, समाज मिला है, ताज मिला है, यह सव कुछ मिला है तो मै धर्म की कुछ सेवा, कुछ आराधना इस जीवन मे कर सकता हूँ, इससे मुझे वञ्चित नही रहना चाहिये। ऐसा नही हो कि मैं खाली हाथ रह जाऊँ क्योकि द्वारिका द्वीपायन ऋषि के कोप के कारण जलने वाली है।

से भी ठोकर नही मारेगे, टकरायेगे नही। यदि हमारे सभासद इतना सा भी सकल्प कर ले तो मैं कहूँगा कि इससे समाज का बडा हित हो सकता है। बात बहुत छोटी सी है।

ईसाई धर्म की मूल प्रेरणा : मानव-सेवा

ईसाई या क्रिश्चियन मिशनरियो के लोग अपने धर्म-प्रचार का कार्य करते है। वे आपकी तरह एक दिन, दो दिन या आठ दिन या महीना भर के लिये व्रत करके बैठने वाले नही है, क्योकि व्रत की परम्परा उनको सिखलाई नही गई है। उनको मानव-सेवा की परम्परा सिखाई है। आप किसी चर्च मे जाकर देखे तो वहाँ पर हमारे भाई और बहनो के जैसे उपवास करके बैठने वाले नही मिलेगे। हमारे यहाँ जैसी मासखमण की झडियाँ लग रही है, वैसा किसी चर्च या गिरजाघर मे नमूना देखने को नही मिलता। आपकी तरह उपवास करने का अभ्यास उन्होने नही किया। यह परम्परा भी उनको नही मिली है कि आपकी तरह वे घण्टो भजन करने के लिये बैठे रहे। भजन करने का शिक्षण भी उनको नही मिला। आपकी तरह दो-तीन दिन के लिये हरी सब्जी नही खाने का या रात्रि मे नही खाने का भी शिक्षण उनको नही मिला। आपके जैसे आत्म-सयम, त्याग-वैराग्य और तप—यह तीन प्रकार का शिक्षण भी उनको नही मिला।

उनको शिक्षण मिला कि देखो भगवान यीशु का सन्देश है कि कोई भी छोटी जाति का हो, हरिजन हो, ऊँचे कुल का हो, अमीर हो, गरीब हो, कोई भी हो लेकिन जो मानव है वह तुम्हारा भाई है, बन्धु है। वह यदि कीचड मे पड जाय और तुम नये कपडे पहनकर जा रहे हो तो भी तुम कीचड मे उतरकर उसको निकालो और कपडे गन्दे हो जावे तो भी परवाह नही करो। हमारे ईसाई भाइयो को केवल यह एक शिक्षा मिली है कि मानव-दया करो।

जैसे किसी ने पशुओ को पकड लिया है, पक्षियो को पिंजरे मे पकड लिया है, उन पर दया करके आप उनको छुडाते हो, आपका मन उनके लिये तडफता है ऐसा हमारे चर्चवासी ईसाई भाइयो का भी मन पशु-पक्षियो के लिये तडफता है क्या ? हजारो पशु-पक्षियो को छुडाने के लिये और हजारो गाय बछडे जो इधर-उधर मारे जाते है, मरे पडे हैं उनके लिये जैन समाज के भाइयो के मन मे जैसा दर्द ईसाइयो के मन मे नही आता। ईसाई इसको गौण समझते है। यदि किसी के समझ मे आजायगी तो वह पशु को भी कन्धे पर उठाये फिरेगा।

एक फ्रांसीसी संन्यासी का दाखिला मिलता है। उसकी एक भेड वीमार पड गई तो उसको कधो पर उठाकर इलाज के लिए फिरता रहा, ऐसे व्यक्तिगत दाखिले मिलते रहेगे। लेकिन अपने यहाँ पशु-पक्षियो को छुडाने वाले भाई-वहन हजारो मिलेगे और उपवास करने वाले लाखो मिलेगे। छोटी-मोटी तपस्या और मासखमण तक करने वाले भी हजारो मिलेगे। तो इसका मतलव यह हुआ कि जैन धर्म मानव-दया ही नही करता वल्कि पशु-दया, पक्षी-दया और प्राणी मात्र पर दया करने का सदेश हमारे जिनेश्वर देव ने दिया है।

भगवान महावीर ने कहा है कि सवसे पहले तू अपने जीवन को निखार। जैन धर्म ने दो तरह की दया वताई है—एक द्रव्य-दया और दूसरी भाव-दया। हमारे सात समुद्र पार रहने वाले भाइयो को द्रव्य-दया का पाठ पढाया है, फलस्वरूप वे मानव-सेवा के लिए निकल पडे। हमारे कमजोर वर्ग के लोगो को वेंगलोर, कर्नाटक, आन्ध्र, असम आदि देश के अन्य भागो मे लाखो लोगो को उन्होने ईसाई वना दिया है। सैकडो जगह उन्होने चर्च खडे कर दिये। वे यहाँ के जाये नही, जन्में नही, पले नही, पोषे नही, यहाँ उनकी जमीदारी नही, कुछ नही, फिर भी वे लोग यहाँ पर विदेश से आकर काम करते है। उन्होने सोचा कि भारतवर्ष की भूमि मे हजारो गरीव रहते हैं। उनको पुचकारने वाला कोई नही है। हिन्दू समाज वाले उनसे परहेज करते है, जैन समाज मे उनको कोई रखने वाला नही है। इसलिये ईसाई धर्म के प्रचार के लिए यहाँ मच अच्छा है। ऐसा समझकर अमेरिका से, ब्रिटेन से और अन्य-अन्य देशो से यहाँ आकर लाखो करोडो रुपये अपने धर्म-प्रचार के लिये पानी की तरह वहाते हैं। उन गरीवो की उन्होने सहायता की, सव तरह की उनके लिये व्यवस्था की। आपने भी कोई भूमि देखी है या आपको भी भूमि देखना जरूरी लगता है। यह तो उनकी द्रव्य व्यवस्था है। लेकिन जैनो के लिये तो द्रव्य-दया के साथ भाव-दया भी वताई है।

सौराष्ट्र से आई अन्धी वालिकाये आप के सामने है। ऐसे मद्रास की भूमि के इर्द-गिर्द अधे, गू गे, वहरे, लगडे, लूले सैकडो-हजारों लोग मिल सकते है। आप मे से कई भाई समय-समय पर उनको भोजन पहुँ-चाने वाले और दवाई पहुँचाने वाले श्रीमत मिलेगे। लेकिन किसी ने यह भी सोचा कि इन अधे, गू गे, वहरो का जीवन वना दे। ये दुर्गुणी न रहे। दूसरे भी शरावी, कवावी, दुर्गुणी न रहे, वीतराग मार्ग के भक्त वन जायें;

ऐसा भी दान का तरीका दाताओ ने सोचा है ? क्या इन बडे नगरो मे, इतने वडे समाज मे आप इस ओर भी देखेंगे।

सातवां दिवस दया-दि

यह पर्वाधिराज पर्व का सातवा दिन दौडता आ गया है। आज पर्व की प्राथमिक भूमिका का सातवाँ दिन है इसलिए दया पर भी आपका कुछ चिन्तन हो। सातवे दिन के वाद दया पर विचार करना है।

तत्त्वार्थसूत्र मे आचार्य उमास्वाति ने कहा कि व्रती कौन होता है ? एक छोटा सा सूत्र है "नि शल्यो व्रती" जिसके मन में शल्य नही हो, वह व्रती है। चाहे उपवास हो, आयम्बिल हो, त्याग हो, तप हो, या समाज मे उच्च सेवा का काम हो, इन व्रतो को कौन स्वीकार कर सकता है ? जिसके मन मे शल्य का काँटा नही है। वही व्रती होता है।

शल्य के तीन भेद है—माया, मिथ्यात्व और निदान। पहला शल्य है माया।

यह कैसी विडम्बना

दान करना, तप करना, उपवास करना, व्रत करना, नियम करना, मन मे कुछ रखना, वाणी और क्रिया मे कुछ रखना, व्यवहार मे कुछ और रखना। अरे साहव आप तो वड़े भाई है। गुरु के पास जाने पर कहता है कि "मैं तो आपने ही गुरु समझूँ हूँ, मैं तो आपरो चेलो हूं, मैं आपके हुकुम से वाहर जा सकूँ काई ? अव आप फरमाओ, आप कहो जो करण ने तैयार हूँ।"

और जव वापजी हुकुम फरमावे, छोटी सी त्याग री वात केवे, कोई वात सामने रखी जावे तो कहता है कि 'आप म्हारी सामर्थ्य या ताकत देखकर फरमाओ। आप आ वात कैसे फरमा दी, आ वात म्हारे सू हो सके काई।' क्या हुआ, सारा सफाया हो गया।

गजव हो जाता है हम लोग सुनकर दग रह जाते हैं और सोचते है कि यह भाई कितनी ऊँची विनय की वात कह गया। कहने के वक्त तो कह गया कि वापजी जो हुकुम फरमावो करण ने तैयार हूँ और जव उससे कोई वात कही जाती है तो कहता है कि वापजी आ नही दूजी फरमाओ, आ तो नही हो सके। फिर उसका 'जो हुकुम' कहना, कहाँ रह गया ? यह वडी समस्या है।

बहुत बड़ा आश्चर्य

जैन धर्म जैसा ऊँचा धर्म पाकर आप हम पिछडे रह गये, तो इससे ज्यादा कोई आश्चर्य की वात नही होगी। पुराने सतो ने अपनी वाणी मे एक वात कही है :

"मोय देखत आवे हाँसी रे, पानी मे मीन पियासी"

सत ने कहा कि यह वडे ताज्जुव की – हँसी आवे जैसी वात है कि कोई जानवर प्यासा होता है वह पानी के पास जाकर अपनी प्यास वुझाता है, लेकिन एक मछली ऐसी है जो चौवीसो घटे पानी मे रहती है फिर भी प्यासी की प्यासी है। मछली पानी मे डुवकियाँ लगाती रहती है, फिर भी प्यासी रह जाती है। आप बुरा नही मानेंगे, ये मछलियाँ तो प्यासी रहे या न रहे, मद्रास के एरिया मे वे प्यासी न भी मरे, लेकिन मुझे ताज्जुव है कि जैन धर्म के क्षीर समुद्र में रहकर हजारो लोग प्यासे क्यो रह गये। जैन धर्म जैसा विशाल धर्म पाकर भी आप लोग विपय-कपायों मे दवे कैसे रह गए ?

श्रीकृष्ण की धर्म-दलाली

श्रीकृष्ण जैसे तीन खंड के नाथ भगवान नेमिनाथ की वाणी सुनकर जग गये। राज्य के लोगो की चिन्ता छुडाने के लिए उन्होंने कहा कि भगवान की शरण मे जो कोई जाना चाहे वे जा सकते है। वे अपने पीछे की चिन्ता को छोडे, पीछे की चिन्ता मैं करूँगा, जाने वाले किसी वात की चिन्ता न करे। आप मे से कोई भगवान की सेवा मे जाने वाला है तो उसकी फिक्र मै करूँगा।

उल्टी मति है, आज के लोग सोचते है कि वच्चो चल्यो नही जावे, तिजोरी चली नही जावे, सेठाई चली नही जावे, कार, वगला या कोठी चली नही जावे। अभी १०, १५ वर्ष निकाल लेंगे। गाडी जितनी गुड़के उतनी तो गुडकाये जाओ, नही गुड़केगी तव देखेंगे। अभी तो चलने दो। जो समय को जानने वाले है, सरकार के रुख को पहचानने वाले है उनमे से वहुत से लोग जानते है कि सेठाई वाप-दादो के जमाने मे वरकरार रही लेकिन इससे आगे रहने वाली नही है, ऐसा सभी लोग जानते है लेकिन व्यवस्था करेंगे क्या ? सेठाई को वनाये रखने की व्यवस्था करेंगे या लडने की व्यवस्था करेंगे, जाने वाली चीज तो जायगी।

कृष्ण ने सोचा कि मुझे क्या करना है। आप आश्चर्य करेंगे कि अतगड सूत्र मे विचार मिलता है कि वे इतने वहादुर और कर्मशूर व्यक्ति

ऊपर एहसान करे कई। बाहर का आदमी होवे तो सम्मान भी देवा। समाज के अगुआ उनको सम्मान देवे नही और काम करने वालो का नाम आवे नही। नतीजा यह होता है कि काम करने वाले, बाहरी समाज में काम करेंगे। आर० एस० एस० का काम करेंगे, कांग्रेस का काम करेंगे लेकिन समाज का क्षेत्र खाली रह जायगा। समाज के पच्चीसों कार्यकर्ता मेरे ध्यान मे है जो आर० एस० एस० मे काम करते है। घर की दृष्टि से सम्बन्ध किनारे कर गये हैं। कभी-कभी ऐसे लोग जेल की यात्रा भी कर आते है।

मुझे याद है कि इमरजेन्सी के समय मे कई लोग जेल मे बैठकर आयम्बिल कर रहे थे, स्वाध्याय कर रहे थे, आपस मे विचार कर रहे थे। एक वक्त मुझे भी प्रवचन सुनाने के लिए जेल मे निमत्रित किया गया था। ऐसा एक भाई जोधपुर के कारावास मे बन्द था। उससे कहा गया कि तू माफी माग ले। उसने कहा कि माफी किस बात की मागू।

मै यह सोच रहा हूँ कि इस तरह जो सार्वजनिक क्षेत्र मे काम करते हैं, जीवन देते है। कई स्वतन्त्र कार्य भी करते है। क्या वे हमारी समाज मे सेवा करने को आगे नही आ सकते ? उनको प्यार से निकट लाना है ताकि ऐसे लोग समाज की सेवा के लिए आगे आवे जो समाज के लिए जीवन अर्पण करने वाले हैं, ऐसे भाई-बहन पर्व के दिनो में आगे आवें और माया शल्य को निकाल कर, मिथ्यात्व शल्य को निकाल कर आगे आवे तो समाज को आगे बढते देर नही लगेगी। लेकिन आज शल्य अटक रहा है। दिखावे मे कुछ और है, मन कही और जगह जा रहा है, "पानी तेरा रग कैसा" वाली कहावत चरितार्थ हो रही है।

जीवन को निष्कपट बनायें

हमारे यहाँ एक पुरानी कहावत है कि मानव सबसे पहले व्रत में, साधना मे सफलता मिलाना चाहे तो माया को सबसे पहले निकाल दे। एक कडी कहकर मैं समाप्त कर देता हूँ—

> समझ मन माया दु ख दाता रे,
> माया के परसग पलक मे टूट जाय नाता रे,
> निपट कपट कर झपट पराया, धन जो ठग खाता।
> सो नर दिव शिव सुख से वचित, हो दुर्गति जाता ॥

आप चाहे तप कीजिए, दया कीजिए, चाहे शीलव्रत धारण कीजिये।

चाहे दान दीजिये, जो कुछ भी कीजिये लेकिन सबसे पहले निष्कपट भाव से, सरल मन से कीजिये। ऐसा नही हो कि मन मे कुछ और है और वाहर कुछ और है।

सरल हृदय से आलोचना करने वाला जीव यदि भूल जाय तो उसे केवलज्ञानी भी वता देते हैं कि तू भूल रहा है। लेकिन आलोचना करने वाला मन मे छिपाकर कोई वात रखे तो उसे केवली भी नही वताते। कपट करने वाला धर्मी वनने लायक नही होता। आपको, हमको, वहन को, भाई को अपना आगे का जीवन और साधना सफल वनानी है, पर्व की सही आराधना करनी है तो तन से, मन से, जीवन मे कपट को हटाकर साधना के मार्ग मे आगे आना होगा। भाई-भाई से गले मिलाकर सरल मन से गुस्से की वात है तो गुस्से की वात कह दीजिए, सत्य वात है तो सत्य वात कह दीजिये। मन मे गाँठ वाँधकर रखोगे तो जव तक गाँठ खुलेगी नही तव तक साथ मे काम करने वालो की गाडी आगे नही चलेगी, गाडी अटक जायगी।

मै भगवान महावीर का संदेश धर्मप्रेमी वन्धुओ के मन पर पहुँचाना चाहता हूँ, जिससे कि उनका जीवन साधना के मार्ग पर आगे वढे तो आपका जीवन इस लोक एव परलोक मे आनन्द शान्ति और कल्याण का अधिकारी वनेगा। द्रव्य-दया और भाव-दया करके जीवन सदा के लिए अमर वना सकें, यह भगवान महावीर की शिक्षा है। कल का दिन आत्म-शुद्धि करने का है, उसके लिए आप अपनी तैयारी करेंगे ही।

—जैन भवन, मद्रास
(दिनाङ्क १३-६-८०, १० वजे प्रातः)

८
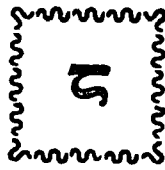
निर्मलता । पर्व : पर्युषण

प्रार्थना

वीर सर्व-सुरासुरेन्द्र महितो, वीर बुधा सश्रिता।
वीरेणाभिहत स्वकर्म-निचयो, वीराय नित्य नमः॥
वीरात्तीर्थमिद प्रवृत्तमतुल, वीरस्य घोर तपो।
वीरे श्री-धृति-कान्ति-कीर्ति-निचयो हे वीर भद्रं दिश॥

परम कल्याण की कामना वाले धर्मप्रेमी वन्धुओ !

यह मगलमय विश्व-कल्याण का सन्देश देने वाला पर्वाधिराज पर्युषण का आज अन्तिम दिवस आ गया है। हम इस वावत वहुत सतोषानुभव करते है। आपके इस नगर मे देव, गुरु, धर्म की कृपा से पर्युषण पर्वाधिराज का अष्टान्हिक कार्यक्रम वहुत मगल और निरावाध ढग से सम्पन्न हो चला है। किसी प्रकार की वाधा, किसी प्रकार की पीडा या किसी प्रकार की कुदरती विघ्न की स्थिति से हम वाधित नही हुए और किसी प्रकार का विघ्न अनुभव नही करते हुए कान्ति के साथ मगलमय पर्व की आराधना कर पाये। यह उन वीतराग जिनेश्वर के मंगलकारी प्रवचनो का और उनके सन्देश का प्रभाव है कि आज भी लाखो की सख्या मे जनता ने भगवान महावीर के अहिसा-सन्देश को लेकर विश्व-शान्ति का पाठ पढने को यह मगल-आदर्श प्रस्तुत किया है।

आज का दिन सर्व-सम्मत अहिंसा पर्व

सारे विश्व मे आज का दिन धार्मिक पर्व के नाम से, अहिसा पर्व के नाम से या आत्म-शुद्धि पर्व के नाम से माना जाता है। जैन धर्म ही नहीं

अपने प्रसग की वात जो हम धर्माचार्य लोग आप से कहा करते हैं, एक राज्य के उच्चतम अधिकारी राज्यपाल महोदय भी मित्र-भाव से आप के सामने वड़ी सुन्दर वात कह गये।

पर्व की प्राकृतिक निर्मलता

हमारा यह पर्व ठोस पहलू से दो वातो को लेकर आया है। पहली वात तो आज के लिए आलोचना अथवा आत्म-शुद्धि की है और दूसरी वात पूर्ण अहिंसा की है। प्राकृतिक रूप से ही इस अहिंसा-दिवस के दिन कैसी निर्मलता और पवित्रता रहती है, कैसे परमाणु है कि जिसके कारण छोटे-वडे हर मानव मे सहज अहिंसा की भावना और अहिंसा के प्रति उसके मन मे श्रद्धा और निष्ठा जागृत होती है।

प्रकृति प्रदत्त सुविधा

जैन शास्त्रों मे कहा है कि जव अवसर्पिणी काल पूर्ण होकर उत्सर्पिणी का प्रारम्भ होता है तो भूमि के रस-कस और वर्णादि मे अनन्त गुणो की वृद्धि होती है। फिर भी उत्सर्पिणी काल का पहला आरा अवसर्पिणी के छट्ठे आरे के समान होता है। २१ हजार वर्ष के वाद दूसरा आरक चालू होता है। उसमे सात-सात दिन के ५ मेघ होते हैं। पुष्करसवर्तमेघ, क्षीरमेघ, घृतमेघ, अमृतमेघ, और रसमेघ। सात-सात अहोरात्र इन मेघो वर्षा के पश्चात् भरतक्षेत्र की भूमि वृक्ष, गुल्म और लताओं से हरी-भरी हो जाती है। प्रकृति का यह सहजक्रम चलता है। ५ सप्ताह की वर्षा के साथ-साथ दो सप्ताह तक मेघ उभरा रहेगा। अर्थात् क्षीरमेघ की वर्षा के वाद एक सप्ताह तक आकाश खुला रहेगा तथा इसी तरह अमृतमेघ के वाद भी एक सप्ताह तक आकाश साफ रहेगा। उसके वाद रस मेघ की वर्षा होगी।

वैज्ञानिक तथा वनस्पति उत्पन्न होने के अनुकूल वातावरण की दृष्टि से विचार किया जाय तो निरन्तर वर्षा विना उघाड़ के होती रहे तो फल-फूल और धान्यादि का उचित विकास नही होता। उसके लिए नियत समय उघाड की आवश्यकता होती है।

इस दृष्टि से भी दो सप्ताह वर्षा का खुला रहना उचित ही है।

इस प्रकार सात सप्ताह के ४९ दिन होते हैं।

जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति सूत्र के द्वितीय कालाधिकार मे वताया गया है कि जव विलवासी मनुष्य पचासवें दिन वाहर निकल कर भूमि को हरी-

धर्म भावना : निसर्गज और अधिगमज

मानव मे भी एक धर्म-भावना उपदेश से होती है और एक धर्म-भावना निसर्ग से होती है। धर्म-भावना का उत्पन्न होना दो तरह से वताया है। निसर्ग से धर्म-भावना किसमे होती है ? जिसके पाप हल्के हो गये है, जिसके कर्मों का भार हल्का हो गया है, ऐसे व्यक्ति मे सहज ही पवित्र भावो का सचार होता है और वह कडवी भावना से हटकर मधुर भावना वाला वन जाता है।

हमको ऐसे पर्व के प्रसग से दोनो साधन मिले है, दोनो प्रकार का मौका है। जिनका निसर्ग से विना उपदेश के अच्छा भाव जागृत हो गया है वे विना उपदेश के भी जीवन मे यह सोचेंगे कि जो मेरे अधिक निकट सम्पर्क वाले हैं, जिनकी रक्षा और सुख-सुविधा के साथ मेरा सम्वन्ध है उनको मैं आगे वढाने का प्रयत्न करूँ।

अभी पटवारीजी ने आपको प्रेरणा के सूत्र देते हुए यह कहा कि मेरे मे इस प्रकार का सामर्थ्य आवे कि जिसको मैं एक वार क्षमा कर दूँ तो दुवारा क्षमा करने का मौका ही नही मिले।

पिछले वर्ष का हिसाब लगाइये

आप सव सामायिक करने वालो के लिए, सवर करने वालो के लिए, वीतराग के भक्तो के लिए छोटी सी वात वहुत मनन करने लायक है। वीतराग धर्म की वात है जिसे उन्होने स्वीकार की है, उसका वे आदर कर रहे हैं। भगवान् महावीर ने विश्व के लिए कितना उच्च सदेश दिया है। आप तो जन्म से महावीर के भक्त कहलाते हो। आप कहेगे कि पटवारी साहव तो जैन नही है, मैं तो जन्म से जैन हूँ, उसको क्या कहेगे। लेकिन भाई जन्मजात आप सच्चे जैन हो या न हो, लेकिन आप के मन की भावना कैसी है ? कई वार महावीर को स्मरण किया, महावीर की शिक्षा और उपदेश को स्मरण किया, लेकिन वह वात आपके लिए केवल स्मरण करने की ही नही है। महाजन कुल मे उत्पन्न हो, हिसाव करना है कि गत वर्ष कैसे विताया और इस वर्ष क्या प्रगति की है, हमारा लेखा या हिसाव क्या है। ज्ञान मे कितने आगे वढे हैं, दर्शन की सीमा कितनी वढी है, चरित्र में कितने आगे वढे है, सामायिक, व्रत, पौषध आदि की साधना मे कितने वढे हैं ? आभ्यन्तर विकारो को कितना कम किया है ? आज हमारा सामायिक-

है, पीछे टागडा पसार कर सो जातेहैं, यह उपवास करने का तरीका नही है।

उपवास के समय आपको और हमको क्या करना है, यह पर्वाधिराज हमको और आप सब को सदेश देने आया है । इसमे बोलने की बात कम करनी है लेकिन जो भी बात हम बोलेगे और आप सुनेगे, वहाँ ऐसी बात बोलनी है, ऐसी बात सुननी है कि जिससे आपका जीवन अति आनद से बीते । सुनिये और गति आवे जैसी बात सोचिये । जीवन मे जब गति आयेगी तभी हमारा अगला वर्ष ज्यादा तेजस्वी बनेगा ।

करने योग्य बात

एक वर्ष आज समाप्त हो रहा है और अगला वर्ष कल शुरू हो रहा है । कल से हमारा धार्मिक वर्ष लगेगा । नया वर्ष जो चालू होने वाला है उससे पहले गये वर्ष का हिसाब दीजिये कि मैने इस तरह से वर्ष भर का समय बिताया है । एक सवत्सर से दूसरा सवत्सर पार किया है। मेरी आत्मा मे मेरे जीवन मे कितनी तेजस्विता आई है । इस बात का हिसाब आप भी करे और मै भी करूँ । यह दोनो के लिए क्या हो गया है ? करने की बात हो गई । करने की बात को जब भी आदमी पकड लेता है तो जिन्दगी का लम्बा समय चला गया उसमे जो काम नही हुआ वह घडी भर के लिए चिन्तन करने से रास्ता पकड लेता है तो एक घडी का टाइम भी आदमी के लिए महत्त्वशाली बन जाता है ।

आत्म-जागरण से केवलज्ञान

आपने सुना होगा कि भगवान महावीर के बडे प्रमुख शिष्य गौतम कितने साधु मण्डल के मुखिया थे ? चौदह हजार साधुओ मे सबसे बडे थे । सबमे शिरोमणि गौतम स्वामी भगवान की बात बहुत बार सुनते रहे, सेवा भी बहुत करते रहे, जिज्ञासा भी बहुत करते रहे । करते-करते तीस वर्ष का लम्बा समय बीत गया । लेकिन गौतम स्वामी को केवलज्ञान नही मिला । तीस वर्षो मे गौतम स्वामी से छोटे कई साधुओ ने केवलज्ञान मिला लिया । कई साधु केवलज्ञान मिलाकर मोक्ष मे पहुँच गये, लेकिन गौतम स्वामी वैसे ही रह गये ।

गौतम स्वामी महावीर भगवान की सेवा करते, उनके पास बैठते और उनकी वाणी सुनते रहे । उनको लाभ बहुत मिलता, लेकिन केवलज्ञान का लाभ नही मिला । एक समय आया जब महावीर का निर्वाण हो गया । जब यह पर्व उनके सामने आया और महावीर निर्वाण की बात सुनी, मोक्ष पधार गये यह बात सुनते ही गौतम का मन जागृत हो गया ।

अब तक जो गौतम सुनने वाले थे, हमारी और आपकी तरह कर्ण इन्द्रिय से मात्र शब्द ही नही सुने किन्तु सस्कार जगाये थे। गौतम क्रियाशील थे, अप्रमत्त सन्त थे, चार ज्ञान और चौदह पूर्व के धारी होकर बेले-बेले पारणा करते थे। आपके बीच भी कोई भाई-बहन एकान्तर तप करने वाला मिल जाय, और दो चार वर्ष कर ले तो अपनी बात स्वाभिमान के साथ बोलेगा—महाराज चार वर्ष से तो बराबर एकान्तर चल रहा है। गौतम स्वामी के निरन्तर बेले का तप चलता था और वे पारणे के लिए भी स्वय अपने आप जाते थे। चौदह हजार साधुओ के मुखिया स्वयं गोचरी के लिए जाते थे। इतनी उग्र तपस्या करने वाले थे।

लेकिन मैं कह रहा हूँ कि गौतम स्वामी सेवा करने वाले थे, तीस वर्ष तक सेवा करने के बाद भी उन्होने उस तरफ गौण दृष्टि रखी। लेकिन भगवान के निर्वाण के बाद गौतम के मन मे चिन्तन हुआ कि मुझे स्वयं को अपना काम करना चाहिए, वे स्वावलम्बी बन गये। भगवान का कहना था कि—गौतम ! तुम अपने कर्म स्वय काटोगे। गौतम ने पुरुषार्थ किया तो घातीकर्म क्षयकर केवलज्ञान मिला लिया।

मुक्ति स्वयं के पुरुषार्थ से

मुक्ति किसी के देने से मिलती है क्या ? नही। तीर्थंकर भगवन्त की स्तुति मे अपन बोलते हैं "मुत्ताणं मोअगाण" भगवन आप स्वय मुक्त है और दूसरो को मुक्ति देने वाले हैं। यह व्यवहार की भाषा है, वास्तव मे हमारे बन्धन हमीं को काटने हैं, गौतम ने इस बात को समझ लिया। कथा के अनुसार वे देवशर्मा ब्राह्मण को प्रतिबोध देने गये थे, पीछे लौटते समय भगवान के निर्वाण की बात सुनी, चिन्तन किया और मोह के बधन काट दिये, चार कषायो को जीता, राग-द्वेष को दूर किया तो घाती कर्मो का क्षय करके केवलज्ञान प्राप्त कर लिया और कुछ वर्षो बाद मोक्ष पधार गये। तीस वर्ष तक गौतम को केवलज्ञान क्यो नही हुआ ? महावीर का चेला और उनके चरणो मे रहने वाला लेकिन जब तक उन्होने अपने कर्म काटने की क्रिया नही की तब तक मोक्ष नही हुआ। कर्म काटने की क्रिया कर ली तो तुरन्त मोक्ष हो गया।

तीर्थंकर-वाणी : मन की जागृति के लिए

अपने को भी क्रिया करनी है, क्या सुनते-सुनते केवलज्ञानी हो जायेगे? सुनते-सुनते ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तराय कर्मो के बन्धन ढीले पड जायेंगे ? केवल सुनने से कुछ नही होगा, सुनने का

परिणाम आचरण मे होना ही चाहिए। यह आपका मनरूपी भँवरा वैसे आसानी से जागृत नही होता।

जैसे नाग पिटारी मे वैठा है, कालबेलिया पूँगी वजाता है तव पूँगी की आवाज सुनकर वह जागृत होता है। वैसे ही पिटारी का ढक्कन खोलकर मैदान मे रख दो तो क्या वह मुँह उठाकर वाहर देखने लगेगा? नही। नाग को जगाने के लिए पूँगी आदि के आवाज की आवश्यकता है। इसी तरह से हमारे भीतर जो चेतना का नाग है वह सोया पडा है, उसको जगाने के लिए भी भगवान की वाणी का मधुर स्वर सुनाना पडेगा। वाणी रूपी पूँगी का मधुर स्वर हमारे कान तक पहुँचाया जाता है तव आत्मा रूपी चेतना का नाग जागृत होता है। वह जागृत होगा तो जीवन में चेतना आयेगी।

आत्म-जागृति का पर्व : पर्युषण

आपको इतना सुन्दर पर्व का मौका मिला है जगने को, जिसके लिए एक सन्त ने कहा है—

> यह पर्व पर्युषण आया, सव जग मे आनन्द छाया रे।
> यह पर्व पर्युषण आया॥
> यह विषय कषाय घटाने, यह आत्म-गुण विकसाने।
> जिनवाणी का वल लाया रे, यह पर्व पर्युषण आया।
> तुम छोड प्रमाद मनाओ, नित धर्मध्यान रम जाओ।
> भव भव का दुख मिटाओ रे, यह पर्व पर्युषण आया॥

क्या कह रहा है सन्त? आपकी जानी-मानी वात कह रहा है। यह कहने की आवश्यकता नही है कि कौन सा समय आया। वच्चा भी जानता है और वूढा भी जानता है, लेकिन याद इसलिए दिला रहा है, कि यह पर्व पर्युषण आया, सव जग मे आनन्द छाया। यह कौन सा पर्व है, इसकी व्याख्या करके कहूँ तो यह हमारी आत्मा पर जमे कर्म के कचरे को जलाने का दिन है। कर्मों के कचरे को जलाकर आत्म-गुणो के नजदीक आवे। इसलिए पर्व का नाम है पर्युषण।

इस समय चाहे अनुकूल स्थान हो, चाहे प्रतिकूल स्थान हो, जैन साधु-साध्वी गमनागमन वन्द करके एक जगह स्थिर निवास करके रहते हैं। केवल साधु ही एक जगह रहते हैं ऐसी वात नही है, जैन गृहस्थ भी इन दिनों मे गमनागमन नही करते। राजस्थान प्रान्त के सैकडो-हजारो

गाँवो मे रहने वाले लोग इस वात की साक्षी देते है कि वर्षा काल मे वे लोग शादी-विवाह का कार्यक्रम नही रखते। या तो आषाढ की पूर्णिमा के पहले ये कार्यक्रम निपटा देते हैं या फिर कार्तिक एकादशी के वाद निपटाते हैं। राजस्थान मे केवल जैन कहलाने वाले ही नहीं वल्कि अग्रवाल, माहेश्वरी, आदि जातियो के लोग भी वर्षा-काल मे लग्न नही निकलवाते।

अभिप्राय यह है कि भारतवर्ष की सस्कृति रही है कि वर्षा-काल मे जीव-जन्तुओ की अधिक उत्पत्ति रहती है, इसलिए शादी विवाह का कार्यक्रम रखेगे, भोज का जीमण होगा तो कीडे-मकोडे आदि गिरेंगे-मरेंगे। आपने कभी रामायण सुनी होगी। रामायण मे वर्णन किया जाता है कि वर्षाकाल मे राम ने अपनी यात्रा स्थगित करके एक जगह पर निवास किया। कहा जाता है कि महाराष्ट्र मे नासिक के पास पचवटी मे रामचन्द्र जी ने वर्षाकाल विताया। संसार मे वासुदेव जैसे तीन खण्ड के माननीय पुरुष भी वर्षाकाल मे भ्रमण वन्द करते है। क्योंकि वर्षाकाल मे जब निरन्तर वर्षा होती है तो जमीन पर हरियाली एव काई का विस्तार होता है उस समय ससार की प्रवृत्ति कम से कम करनी चाहिए, इसका मतलव यह है कि वर्षाकाल मे भादवा के महीने में और उसमे पर्युषण के दिनो मे तो ससार की वाह्य प्रवृत्तियाँ वन्द करके आत्मा को सयम-साधना मे लगाया जाय और स्वरूप का चिन्तन कर जीवन को उज्ज्वल किया जाय।

उपवास के साथ पौषध भी करें

आजकल के लोगो का जीवन प्रवृत्ति-प्रधान अधिक वन गया है इसलिए लोग चाहते है कि थोड़े समय मे काम निपटा ले। पर्युषण के दिनो मे अधिकाश कारोवार वन्द रहता है, फिर समय नही मिलेगा, इसलिए आठ दिनो मे अधिक से अधिक धर्म-कार्य निपटाने की कोशिश करते हैं। इन दिनो मे प्रतिदिन व्याख्यान सुने, उपवास करे, प्रतिक्रमण करने का मौका जिनको नही मिलता है, वे भी प्रतिक्रमण-सामायिक रोज करे। पर्युषण के दिनो मे उपवास करके प्रतिक्रमण नही करना और इधर-उधर घूमते फिरना जैन परम्परा के अनुसार शुद्ध तप नही है। जैनाचार्यो ने इसे लघन कहा है। वीमारी के समय मे चिकित्सक लोग भी आहार छुड़वाकर लघन करवाते हैं। अत. उपवास का पूरा लाभ उठाने को पौषध का ध्यान रखना वहुत आवश्यक है।

वाह्य तप के साथ अन्तरंग तप भी

भगवान महावीर कहते है कि भाई यह पर्व पर्युषण एक साल के

वाद आया है, इस दिन अनन्त जीवो को अभयदान मिलता है। आज हजारो घरो मे रसोडा वन्द होगा। सब्जी और फल वालो की विक्री कम हो जायेगी। साहूकार पेठ मे पचीसो फल बेचने वालो के ठेले मिलते थे आज उनसे आधे भी दिखाई नही देते क्योकि वे जानते है कि आज सेठ लोगो का पर्व का दिन है, आज दिन भर धर्म-चिन्तन चलेगा, आज हमारी चीजो की विक्री नही होगी। कुदरत के प्रभाव से, पर्युषण सवत्सरी के प्रभाव से छोटे-छोटे वच्चे भी कहेगे कि हम भी उपवास करेगे। यह इस पर्व की महिमा है। इस दिन किसी को प्रेरणा नही करनी पड़ती। सभी उमग से तप करते है।

लेकिन आवश्यकता है इसके साथ भीतरी तप की। वाहरी तप तो उमग के साथ करते है लेकिन विपय-कपाय भीतर मे वढे, तो वाहरी तप का इतना फल नही होगा, इसलिए हर जैन भाई को सोचना है कि यह पर्व हाथ से चला गया तो साल भर उम्मीद करते रह जायेगे, यह वापिस आने वाला नही है। इसलिए आज का दिन खाली नही जाना चाहिए। व्रत और व्रत पर चिन्तन करना चाहिए कि मैंने जो नियम लिया है, व्रत का पचक्खाण किया है उसमे किसी तरह का दोष नही लगे। अपूर्णता के कारण ऐसा दोप लगना सम्भव है, क्योकि जव तक आदमी अधूरा है, छद्मस्थ है, प्रमादी है तव तक गलती होना असम्भव नही है। प्रमादी लोग तप करके भी अपने शरीर की पहले सार-सम्भाल करेगे, वाल सँवारेगे, नये वस्त्र पहनेगे फिर वाहर पचक्खाण आदि करने जायेगे।

जीवन को शुद्ध वनाइये

आप तप का भूपण अगीकार कर रहे है तो शरीर की सार-सभाल करने से पहले विपय-कपाय की सार-सम्भाल करिये। जव तक विपय-कपाय नही हटेगे, तव तक जीवन का मैलापन नही हटेगा। इस मैल को हटाये विना इतना लम्वा तप भी पूरा काम नही करेगा। इसलिए पर्व के दिन पहला काम यह है कि हमारे दिल-दिमाग और व्रत मे जो कचरा लगा है, उनको पहले वाहर निकाले। आज के जमाने मे हमारा सामाजिक जीवन है लेकिन व्यक्तिगत शुद्धि हरेक को करनी है। समाज मे रहते हुए सामाजिक जीवन मे जो मिलावट, कडवाहट, विकार आये है, उनकी शुद्धि करना भी पर्व के दिन का काम है। इस पर्व के दिन जो काम हो जाता और दिनो मे नही होता। कहा भी है—

भगवान महावीर ने हम सन्तो को कहा है कि जिस आदमी पर तुझे क्रोध आ गया है तो उस क्रोध का शमन किये विना भोजन करना, पानी पीना, विहार कर ग्रामान्तर जाना मर्यादा-विरुद्ध है। विना खमाये तेरे को विहार करने का अधिकार नही है, भोजन करने का अधिकार नही है, पहले उससे क्षमा-याचना करो फिर भोजन करो।

भगवान महावीर ने अनशन या वाह्य तप के साथ आभ्यन्तर तप पर जोर दिया है। अनशन तप खूव हुआ है और हो रहा है। साल भर मे आपने कितने दिन उपवास किये। यदि महीने मे एक चतुर्दशी को उपवास करे तो भी साल भर मे १२ उपवास हो गये। क्रोध न आवे, मान न आवे, लोभ न आवे ऐसा छद्मस्थ व्यक्ति के लिए सम्भव नही है। चौथे, पाँचवे और छठे गुणस्थान तक रहने वालो को कषाय निरन्तर होते रहते है, चाहे वह उदय मे दिखे या नही। अभी मेरे मे क्रोध नही दिखाई दे रहा, आप मे क्रोध, मान, माया, लोभ है या नही या सभी भाई क्षमा के सागर वने वैठे है। लेकिन शास्त्र कहते है कि उदय मे इस समय मौजूद है।

मान लीजिए इन तपस्वी भाई-वहनो के अठाई या मासखमण के सम्वन्ध मे तारीफ के कुछ शव्द मेरे मुँह से निकल जायँ, कुछ लोगो का नाम लेकर उनकी तारीफ कर दी जाय या उनकी लिस्ट मे से कुछ नाम वोल दिये जायँ और आपका नाम वोलना रह जाय तो आपको अच्छा नही लगेगा। आप सोचोगे कि महाराज म्हारो नाम लेवता तो कई लाग जातो, मैं इतनी सेवा करूँ हूँ फिर भी मारो नाम नही लेवे, फलानचन्दजी रो नाम लेवे, तारीफ करे, वे महाराज ने कई दे दियो, कई कर दियो, उणोरी तारीफ करे। ऐसा सोचकर आपके मन मे कुछ विकार आ सकते है। ये विकार क्या सावित करते है? ये यह सावित करते है कि आप मे क्रोध मौजूद है। यह निरन्तर मौजूद रहने वाला नाग है।

क्षमा, सवके लिए आवश्यक

पर्वाधिराज कहता है कि देखो यदि सम्यक्दृष्टि वना रहना है, श्रावक वना रहना है तो श्रावक मे कषाय चार महीनो से ज्यादा नही रहनी चाहिए। चार महीनो से ऊपर का समय वीत गया और एक भाई ने दूसरे भाई से क्षमा-याचना नही की है तो भगवान कहते है कि वह श्रावकधर्म की आराधना करने वाला नही है। हम साधुओ के लिए

कहा गया है कि एक पक्खी का टाइम भी नही बीतना चाहिए। एक पक्खी के पहले तुम अपने मैल को समाप्त कर दो।

साधना के तीन साधन

आज का दिवस हमारा साधना-दिवस है। आज हमे सबसे पहला काम यह करना है कि कषायो को दूर करके अपनी आत्मा को निर्मल करे। दूसरा काम ज्ञान, दर्शन और चारित्र गुण को अपनाना है। तीसरा काम यह करना है कि सब जीवो को आत्मवत् समझकर मित्र भावना अपनानी है। इसके लिए आपको हमको ये तीनो साधन अपनाने पडेगे।

आज के करणीय कर्तव्य

अब आज का कार्यक्रम, व्याख्यान या प्रवचन का समाप्त होने जा रहा है। आप अच्छी तरह से जानते है कि आज का दिन बोलने और सुनने मे ज्यादा करने का है। भाइयो को करने के लिए कितनी उतावली रही कि अभी मौका आया तब सबके सब खडे हो गये। आज भाइयो मे, बाइयो मे, बच्चो मे और वृद्धो मे उपवास की लहर चल रही है लेकिन तीन बाते याद रखने की है।

पहली बात तो है अन्न त्याग की, दूसरी बात है कषाय-त्याग की। आज हरेक भाई-बहन यह ध्यान रखेगा कि किसी को कडवी बात नही बोलनी है, गाली नही बोलनी है, गुस्सा नही करना है। शरीर की दृष्टि से भोजन त्याग का उपवास व्रत है। शील व्रत का सभी को पालन करना है। नौजवान रोज सामायिक नही करते है लेकिन आज सभी प्रतिक्रमण जरूर करेगे। जो पौषध कर सकते है वे पौषध करेगे। प्रमाद नही करेगे, आज सिनेमा देखने नही जायेगे। आत्मा के मैल को धोते हुए, जीवन मे पवित्रता लाते हुए सम्यक्ज्ञान, सम्यक्दर्शन और चारित्र की साधना करेगे तो पर्वाधिराज को मगलमय रूप मे सफल बना सकेगे, आत्मा ऊपर उठेगी, जन्म-मरण का बन्धन कटेगा। इस तरह से आपको, हमको पर्वाधिराज के दिन आत्मशुद्धि करके ज्ञान, दर्शन और चारित्र की अभिवृद्धि करनी है। जो भाई-बहन पर्वाधिराज की आराधना करेगे वे आनन्द, शान्ति और कल्याण के अधिकारी बन सकेंगे।

दान की प्रेरणा ग्रहण करें

आज के इस पावन शुभ अवसर पर मद्रास में महावीर जैन विद्यापीठ की स्थापना होने जा रही है इसके लिए श्री खींवराजजी चोरडिया

और श्री उमरावमलजी सुराणा—दोनो ने अलग-अलग एक लाख ग्यारह हजार ग्यारह सौ ग्यारह (१,११,१११) रुपये देने की भावना प्रकट की है। आप लोग ऐसी धर्म-भावना की लहर आगे बढावे और सघ मे सुचारु ढग से ज्ञान, दर्शन, चारित्र के रूप को आगे चमकावे। इस काम को आगे वढाने के लिए दोनो चोरड़िया वन्धु और सुराणा जी आगे आये है। इन्होने समाज के सामने एक आदर्श प्रस्तुत किया है। समाज के अन्य वन्धुओ मे इस तरह की लहर आवे और इस पर्वाधिराज के पवित्र अवसर पर जो छोटा सा अकुर लगाया जा रहा है यह समय पाकर विशाल वृक्ष के रूप मे फैलेगा और तमिलनाडु प्रदेश की निरतर सेवा करता रहेगा, यही मेरी शुभकामना है।

जैन भवन, मद्रास
(दिनाङ्क १४-६-८०, १०-३० प्रात)
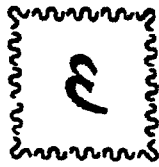
सामायिक : समत्व की साधना

प्रार्थना

वीरः सर्व-सुरासुरेन्द्रमहितो, वीर बुधा संश्रिता ।
वीरेणाभिहत स्वकर्म-निचयो, वीराय नित्य नम ॥
वीरात्तीर्थमिद प्रवृत्तमतुल-वीरस्य घोरं तपो ।
वीरे श्री-धृति-कान्ति-कीर्ति-निचयो, हे वीर भद्र दिश ॥

धर्मप्रेमी वन्धुओ !

परम उपकारी जिनेश्वरदेव का अभिवादन निरन्तर अपने मन-मदिर मे चलता रहता है। प्रसग-प्रसग पर वह भक्ति की भाषा मे वाहर भी प्रगट होता रहे, यह सहज और स्वाभाविक ही है। इसीलिए हमने भी प्रवचन के प्रारम्भ मे वीर-वदन किया है।

धर्म की ज्योति : महावीर-वाणी का प्रभाव

वर्तमान काल मे महीमडल पर जो भी कुछ धर्म की ज्योति दिख रही है वह भगवान् महावीर के दिव्य ज्ञान का ही प्रभाव है। यदि उनके दिव्य ज्ञान का प्रवाह आगम के माध्यम से हम मानवो तक नही पहुँचता तो आज क्या मानव तत्त्व-अतत्त्व को, धर्म-अधर्म को और वध-मोक्ष को जानने मे समर्थ हो सकता था ? मानव की सीमित बुद्धि और सीमित ज्ञान मे वीतराग के पूर्ण ज्ञान का जो प्रकाश आगम के माध्यम से हमारे सम्मुख पहुँच रहा है, उस आगम वाणी के द्वारा हम वस्तु तत्त्व का यथार्थ ज्ञान करने मे समर्थ है।

आप कहेगे कि मुनिवर ! आगम वाणी आप के पास कहाँ से आई ? महावीर नही रहे, फिर महावीर की वाणी किसने सुनाई ? इसके लिये

देखिये। एक धारा निकली है, उसके पीछे दूसरी चली है और तरह से समझना हो तो गगा यमुना जैसी महानदियो को ले लीजिए। उस धारा मे अपनी अगुली टिकाइये, अगुली टिकाई उस समय जल की धारा दूसरी थी, और उसके वाद दूसरी है। अगुली टिकाने के समय जो धारा थी वह अगुली टिकाने के वाद नही रही लेकिन वह गगा-यमुना की धारा तो निरतर चलती रहती है। अगुली टिकाने के पहले भी थी और अगुली टिकाने के समय मे भी है और उसके वाद मे भी रहेगी। इसको कहते है—ध्रुव।

भगवद्वाणी . गगा की निर्मल धारा

भगवान् की वाणी की धारा,तीर्थकरो के ज्ञान की धारा गगा-यमुना की धारा के समान चल रही है। इस त्रिपदी के छोटे से सूत्र को लेकर गणधर पूर्वो की रचना कर डालते है। १२ अगो की रचना कर लेते है। यह जो परम्परा अनादिकाल से चल रही है, इस परम्परा के अनुसार भगवान की वाणी को सुनकर ग्यारह गणधरो ने, प्रमुख शिष्यो ने भगवान् की वाणी का एक सूत्र चुना और द्वादशाग की रचना कर डाली। इसलिये वे क्या कहलाये ? गणधर। उनमे से आज हमारे सामने सुधर्मा स्वामी भगवान् महावीर के उत्तराधिकारी रहे। उन्होने भगवान् की वाणी का सकलन करके जो एक माला वनाई वह हमारे सामने मौजूद है। आज हम इस माला को धारण करेगे तो हमारी आत्मा शुद्ध हो जायगी। इस माला का छोटा-सा रूप—एक मनका समवायाग सूत्र के रूप मे प्रस्तुत है।

दंड और दंडक

समवायाग के प्रथम सूत्र मे सुधर्मा ने कहा कि ससार का प्रत्येक पदार्थ, प्रत्येक द्रव्य और प्रत्येक तत्त्व ससार के मूल स्वरूप की अपेक्षा से एक है। इस पहले समवाय को लेकर सुधर्मास्वामी फरमा रहे है कि **"एगे आया, एगे अणाया"** पहला सूत्र हो चुका है। विस्तार मे नही जाकर आगे की वात कह रहा हूँ। दूसरे सूत्र मे कहते है **"एगे दडे, एगे अदडे"**। छोटा-सा सूत्र है जिसमे चार शब्द है **"एगे दडे, एगे अदडे"**।

भगवान महावीर की वाणी मे सुधर्मा हमारे सामने कहते है कि मानव ! ससार मे दण्ड एक है। आप कहेगे कि यह दण्ड क्या है ? तो उसका उत्तर है-जिसके द्वारा आप भले-वुरे कर्म का दण्ड पावे उसका नाम दण्ड है।

यह जीव चार गति ८४लाख जीवयोनियो मे नाना प्रकार के दण्ड को अनादि काल से भोगता आया है। वह दण्ड जिस जगह भोगे उस जगह का नाम है—दण्डक। सीधी भाषा मे दण्डक किसको कहना ? जिस जगह दण्ड भोगे, वह दडक। जहाँ नाना प्रकार के कर्मो का दण्ड जीव भोगे वह भोगने का स्थल है, जगह है, भोगने का जो क्षेत्र है उसका नाम है दण्डक।

मन दण्ड, वचन दण्ड, काय दण्ड

दड तीन ही है। आप जानते होगे आवश्यकसूत्र, स्थानागसूत्र, और भगवतीसूत्र सब में बताया गया है कि यह जीव जिससे सजा पावे उसको दण्ड कहते है। वह सजा बाहर मे नही है। किन्तु मन दण्ड, वचन दण्ड और काया दड—ये तीन प्रकार के दण्ड हैं।

बडे आश्चर्य की बात है कि हमारा ही साधन हमको दण्ड दे रहा है। आदमी लाठी रखता है अपने बचाव के लिए और वह लाठी अपने ही सिर पर चला दी जाय। अपनी जूती अपना ही पैर खाय, ऐसा देखा है क्या ? कई बार देशी जूती पहनने वालो के पाँव मे नई जूती काटने लगती है। आजकल की चप्पलो मे सम्भवत ऐसी शिकायत नही होती होगी। देशी जूती पहनने वालो को इसका तजुर्बा है। जूती पहनने वाले ने अपने पाव की रक्षा के लिए जूती पहनी और वही जूती उसे खा रही है। नतीजा यह होगा कि या तो उसको जोडी बदलनी होगी या पीछे के भाग को दबाकर चलना होगा। जिस तरह से अपनी ही जूती काट खाती है, उसी तरह से अपना ही मन जीव को दण्ड देता है।

यदि मन की प्रवृत्ति को आत्मा के अधीन रखना है, यदि अपने को, यदि अपनी वाणी को, यदि अपनी काया को आत्मा के अभिमुख लगा दिया, आत्म-भाव मे लगा दिया तो वह मन अदड का कारण बनेगा या दण्ड का ? अभी हमारे मन, वचन और काया का योग चल रहा है या नही ? मन भी गतिमान है, वाणी भी गतिमान है, तो यह मेरा मन, वाणी, काया का व्यापार जो है वह दण्ड है या अदण्ड ? यदि आलोचना की प्रवृत्ति हुई, सावद्य प्रवृत्ति हुई तो सावद्य प्रवृत्ति के कारण से भगवान ने कहा—हे मानव ! एकेन्द्रिय से लेकर पचेन्द्रिय तक के प्राणी दण्ड के पात्र है। ज्ञान-भाव से शून्य होने के कारण आत्मा कर्मबन्ध करती है और अनन्तकाल तक ससार मे भटकती है।

निगोद मे रहने वाले जीवो के पास कितने साधन है ? निगोद के जीवो के पास वाणी नही है, मन नही है, काया का योग भी कितना मद

है, कितना हल्का है, हाथ पैर कुछ भी नहीं है सिर्फ स्पर्श इन्द्रिय का इतना छोटा-सा साधन होने पर भी निगोद का जीव अपनी आत्मा के लिये दण्ड कमाता है। एकेन्द्रिय से गया हुआ जीव एक भव से दूसरे भव में कर्मबन्ध करके नये बंध करता है। यह कर्मबंध की एक ऐसी परम्परा है कि आप आश्चर्य करेंगे कि जिन्दगी से कैसे हमारे साथ में अनन्त काल से ये कर्म लगे हुए रह गये ? जो जीव भव धारण करता है, वह उस भव के पहले के कर्मों को भोगता है। यह जो आपने शरीर पाया है, धर्म पाया है, धन पाया है, ज्ञान पाया है, मान पाया है, कुटुम्ब या परिवार पाया है, सुख या दुःख की सामग्री पाई है, इन सबका भोग करते कर्मों का फल पा रहे हो तो ये कर्म हल्के होने चाहिये या भारी ? शायद मेरी वात आप की समझ मे नहीं आई। यद्यपि यह कठिन वात नही है लेकिन आपका मन एकाग्र नही है। थोड़ा-सा मनोयोग होना चाहिए। आप थोडा लक्ष्य देंगे।

अपनी वात चल रही है कि अनन्त काल से नये-नये जन्म धारण करता हुआ शुभाशुभ कर्मों का फल भोगता हुआ यह जीव आज तक भारी बना हुआ क्यो रह गया ? एक आदमी वचपन से कर्जा चुका रहा है फिर भी कर्जा देना वाकी रह गया।

ध्येय पहचानिये

मन चचल होने के कारण हमारी चित्तवृत्ति, मनोवृत्ति, अगल-बगल भटकती हुई स्थिर नही रहती। धर्मसभा में देखने-सुनने का कुछ निमित्त आया नही कि श्रोताओ का मन इधर-उधर चला जायगा। मैं अपनी वात को पकडकर आपके सामने कहने का प्रयास करूँगा लेकिन आपकी मनोवृत्ति मे एकाग्रता लाने का भी थोडा-सा प्रयास आपको करना चाहिए। तभी कहने मे और सुनने मे आनन्द आयगा। वरना आप खाली जायेंगे तो मेरे को दुःख इस वात का होगा कि मेरे पास माल होते हुए भी आप खाली चले गये। आपको शायद दुःख नही होगा, क्योकि आपकी आदत पडी हुई है। महाराज की वात कम सुने, ज्यादा सुने, ज्ञान लेने की वात, धारण करने की वात कम होगी और आपका मिलना-जुलना, देना-लेना हो गया तो लोगो ने समझ लिया कि हमारा काम हो गया। आप यह नही देखेंगे कि सुनने को आये थे, सुनने का लाभ मिला या नही। वहिनो का पच्चक्खाण हो गया, भाइयो का वातचीत करना हो गया लेकिन यह ख्याल नही करते कि ज्ञान पाने को आये थे और ज्ञान का प्रसाद नही मिला।

मैं कह रहा था कि भगवान की वाणी मे समवायाग सूत्र में कहा गया कि 'एगे दडे, एगे अदडे'। मै दण्ड के वारे मे वता रहा हूँ। दण्ड तीन प्रकार के है। आत्मा को कर्मवन्ध का कारण होने से अशुभ मन भी आत्मा को दण्डित करता है, अशुभ विचारो से आत्मा दडित होती है। स्थानाग सूत्र मे तीन तरह से वताया गया है।

कहने के लिए वाते वहुत है, शास्त्रो मे खजाना भरा हुआ है लेकिन वह खजाना देवे किसको ? खजाने की चीजो को यदि वैसे ही विखेर दिया जाय, तिजोरी का सामान वैसे ही खाली कर दिया जाय, यदि उसको लेने वाला या परखने वाला कोई नही है तो विखेरना व्यर्थ जायगा। इसलिये ऐसा विचार हो रहा है कि मै खजाने की चैकिंग पूरा नही करूँ, इतना ही काफी हो जायगा।

स्थानाग सूत्र मे कहा है कि तीन दड है और तीन ही निधान है। निधान वनाना है तो मन को, वचन को और काया को विषमताओ से, सावद्य प्रवृत्तियो से मोडकर सामायिक साधना करो। सामायिक की साधना करोगे तो तुम्हारा मन अदड वन जायेगा, वचन भी अदड वन जायगा और काया भी अदड वन जायगी। मन, वचन और काया तीनो के योग एक से हो जायेगे।

मैं चाहता हूँ कि आपका समय खाली नही जाय। आपके मकान या इमारत का काम करने वाले जो चेजारे या ठेकेदार होते है वे तो चाहेंगे कि शादी-विवाह का या तपस्या का कोई जलसा आवे तो उसको देखने के लिए आधे घटे की छुट्टी मिल जाय तो वे राजी हो जायेगे। लेकिन उपदेशक सतो को ऐसी छुट्टी मिल जाय तो वे आपके सेवक तो नही है, वे महावीर के सेवक है तो सतो का आधो घटो खाली जावे तो मन मे खेद होगा कि हमारा टाइम वेकार गया।

दड से वचने का उपाय : सामायिक साधना

मैं वता रहा था कि दड से वचना है तो कौन-सा रास्ता पकडना ? भगवान् ने कहा कि सामायिक का रास्ता पकडो। जितनी-जितनी तुम सामायिक करोगे उतना ही तुमको लाभ होगा। सामायिक क्या है ? अनुयोगद्वार सूत्र मे ६ आवश्यक कार्य वताये है। साधु और श्रावक को रोज करने के ६ आवश्यक कार्य होते है, जो जरूरी वताये है। साधु और श्रावक के रोज करने के ६ आवश्यक होते है। जो जरूरी करने के लायक काम है उनको आवश्यक कहते है। यह वात नही है कि महीने दो महीने

मे या पर्युषण के दिनों मे करने के लायक हो। वहुत से भाई ऐसा कहते है कि बापजी ! मै तो पर्युषण मे सामायिक करोहो या परवी रे दिन करो। जिन्होने ऐसा समझ रखा है, उनको भगवान् की वाणी कहती है—

समणेण सावएण य, अवस्स कायव्वय हवइ जम्हा ।
अंतो अहो निस्सस य, तम्हा आवस्सय नाम ॥

आवश्यक नाम क्यो कहा ? साधु हो या श्रावक हो, दोनो के लिए प्रात काल और सायकाल जो अवश्य करने योग्य है उसका नाम है आवश्यक। आवश्यक ६ कहे गये है लेकिन सक्षेप मे यहाँ दो भाग किये जाते है, एक द्रव्य आवश्यक और दूसरा भाव आवश्यक।

आप रोज लोटा लेकर जाते है, यह आवश्यक है या नही। भोजन करना जरूरी है, पानी पीना जरूरी है, जगल जाना जरूरी है। यदि आप कभी पोषध मे है तो उस दिन तेल-साबुन नही लगाया तो भी बाल इधर-उधर हो गये है, उन पर हाथ जरूर फेरेंगे ललवाणी साहब तेल-साबुन लगाये कितने दिन हो गये, फिर भी बाल थोडे से लटक गये तो उनको ठीक करोगे। यदि पानी सामने नही मिला तो भी हथेली से मसल कर आँखो के गीड साफ करोगे तो यह आवश्यक हो गया। मुख को और हाथ-पाव को रोज धोते हो। शरीर के काम मे किसी प्रकार की कमी नही रहती है। लेकिन आत्मा के काम का क्या हाल है ? इसके लिये क्या करना जरूरी समझ रखा है ? सामायिक स्वाध्याय करना नित्य जरूरी समझ रखा है ? देव-गुरु-धर्म की आराधना नित्य करना जरूरी समझ रखा है या नही ? सामायिक नित्य करने का नियम लिया है या नही ? तो कोई कहेगे कि सामायिक करण को नियम तो है लेकिन शादी-विवाह के दिनो मे निभे नही। क्यो नही निभता ? क्या विवाह-शादी के दिन शौचालय नही जाते होगे ? सगे सम्बन्धी आये है, उनका स्वागत करना है, मिलना-जुलना है उस दिन टट्टी-पेशाब के लिए जाना बन्द हो जायगा क्या ? आप कहोगे कि बापजी ! ओ तो सभव नही, इण कामो के वास्ते तो जावणो पडे। तो आपने टट्टी, पेशाब, खाना-पीना जरूरी समझा है लेकिन आत्मा के लिये त्याग का कार्य करना, साधना करना, सवर करना, पाप कार्य छोडकर दण्ड से अदण्ड मे आना, इनको जरूरी नही समझा।

सतो ने कहा कि मानव ! यदि दण्ड से वचना है, तो धर्म की साधना करो। तुझे मनुष्य जीवन मिला है, इस समय भी धर्म नही करेगा तो जन्म-जन्म मे पिटता ही रहेगा। देव योनि में रहने वाले देवता सव

कुछ जानकारी रखते है लेकिन वे धर्मक्रिया नही कर सकते परन्तु तुझे शुभ करनी करने के लिये मनुष्य जीवन मिला है। अशुभ मन, अशुभ वचन और अशुभ काया दण्ड के कारण है। जानता है, लेकिन जानता हुआ भी उपयोग नही कर सकता। हमारे लिये प्रभु ने कहा कि यदि जीवन मे इस कर्म के कचरे को धोना है और आत्मा को हल्का करना है तो क्या कर—

जीवन उज्ज्वल करना चाहो तो सामायिक साधन कर लो।
आकुलता से बचना चाहो तो, सामायिक साधन कर लो॥
तन धन परिजन सब सपने हैं, नश्वर जग मे नहीं अपने हैं।
अविनाशी सद्‌गुण पाना है तो सामायिक साधन कर लो॥
आकुलता से बचना चाहो तो सामायिक साधन कर लो॥

सामायिक का अर्थ बताते हुए कहा गया है कि दण्ड से अदण्ड मे लाने वाली क्रिया का नाम सामायिक है। सीधे शब्दो मे बता रहा हूँ कि दण्ड से अदण्ड मे लाने वाली प्रवृत्ति का नाम सामायिक है। दण्ड क्या है, यह पहले बताया जा चुका है। सावद्य योग या पापकारी क्रिया चाहे मन की हो, चाहे वचन की हो, जिसमे पापकारी क्रिया है वह दण्ड का रूप है। और सामायिक मे क्या होता है ? सबसे पहले सावद्य योग का त्याग होता है। शिष्य गुरु के चरणो मे निवेदन करता है कि भगवन् ! मै सावद्य योगो का त्याग करता हूँ, जिसमे पाप है, झूठ है, क्रोध है, मान है, माया है, राग है, द्वेप है, जो भी पापकारी प्रवृत्तियाँ है, दण्ड के लायक है, उनको मैं छोडता हूं। आपको भी दड से बचना है तो पाप का त्याग कीजिये।

सावद्य योग से निरवद्य योग की ओर चलिए

सामायिक करने के बाद भी जो भाई, जो बहिन, मन, वाणी और काया को कन्ट्रोल के बाहर छोड देंगे तो भगवान ने कहा है कि यह सामायिक का दोप है। रोज बोलने वाले भाई और रोज बोलने वाली बहिने नौवा सामायिक पालने का पाठ बोलते जरूर है लेकिन उस ओर ध्यान कम देते है। सामायिक करने वाले सैकडो हजारो भाई बहिन हैं लेकिन मैं देख रहा हूँ कि मेरे सामायिक करने वाले भाई-बहिनो को जिस ध्यान से श्रवण करना चाहिए, जिस विधि से व्रत करना चाहिए वे उस विधि मे नही कर रहे है इसलिए जो आनन्द आना चाहिए वह नही आ रहा है। सामायिक करने वालो के सामने कोई करोडपति सेठ आ जावे, कोई

गवर्नर आ जावे या कोई सेल्स टैक्स का इन्सपेक्टर आ जावे तो भी उनका कलेजा नही हिलना चाहिए। लेकिन यहाँ तो कोई साधारण बाई या भाई भी पचक्खाण करने के लिए आ जावे, बाहर के चार-पाँच मित्र आ जावे तो उनकी गर्दन घूम जायेगी। गर्दन घूम गई तो आपकी सामायिक स्थिर होगी या नही होगी ? यदि इस प्रकार की वृत्ति चलती रही तो आगे कैसे बढेगे ? कोशिश करे। ऐसी कोई बात नही है, यदि आदमी कोशिश करे तो सफल नही हो सके।

कभी आपने सरकस मे जानवरो को खेलते देखा है ? कभी बन्दर को पगडी और कुर्ता पहने हुए देखा होगा। बन्दर पगड़ी पहनकर नाचता रहे और उसके सामने १०० आदमी खडे हो तो क्या वह बन्दर उन आदमियो की तरफ ध्यान देगा। आप रोटी लेकर उसके सामने हाजिर है तो वह आप की तरफ ध्यान देगा या मदारी की तरफ ध्यान देगा ? आप सामायिक मे बैठकर भी भगवान की तरफ ध्यान नही दे तो बन्दर अच्छा रहा या आप अच्छे रहे ?

इस समय आपकी मनोवृत्ति चचल हो रही है। आपमे से अधिकाश का मन पचक्खाण देखने की तरफ लगा है तो मेरा अधिक बोलना अच्छा नही है, इसलिए मुझे भी जल्दी समाप्त करना है। यदि आपको अदण्ट के रास्ते पर जाना है तो भगवान् महावीर कहते है कि अपने जीवन को सावद्य से हटाकर निरवद्य की ओर लावे। इसमे आते है तो आनन्द प्राप्त होगा। कैसे आना, कैसे सामायिक करना, सावद्य क्या है, इसमे हटना कैसे, निरवद्य को पकडना कैसे ? एक को छोडना और दूसरे को पकडना, क्योकि मन तिजोरी है। यदि बच्चे को फालतू ऊधम करने से बचाना हो तो उसको अच्छे खेल मे लगाना चाहिए। ऐसे ही मन को व्रत मे लगाने के लिए क्या खिलौना देना, कैसे रास्ते पर लगाना, फिर मौका होगा तो इस प्रकार विचार करेंगे। आप सामायिक के महत्त्व को ध्यान मे रखकर कर्म काटने के मार्ग पर चलेगे तो इस लोक मे एवं परलोक मे कल्याण, आनन्द और शान्ति प्राप्त कर सकेंगे।

जैन स्थानक
मिन्ट स्ट्रीट, मद्रास
(दिनाक १७-६-८०, ६–३० प्रात.)

१०
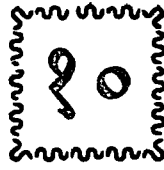
धर्म-प्रेरणा का पर्व : चतुर्दशी

प्रार्थना

वीरः सर्व-सुरासुरेन्द्रमहितो, वीर बुधा सश्रिता ।
वीरेणाभिहत स्वकर्मनिचयो, वीराय नित्यं नमः ॥
वीरात्तीर्थमिद प्रवृत्तमतुलं वीरस्य घोर तपो ।
वीरे श्री धृति-कान्ति-कीर्ति-निचयो, हे वीर भद्र दिश ॥

मुमुक्ष वन्धुओ !

आज का परम मगल दिवस आत्मार्थी साधको के लिए आनन्द, उल्लास और साधना के लिए सक्रिय होने की प्रेरणा देने वाला दिवस है।

लौकिक पर्व : कर्म भार बढ़ाने का कारण

ससार मे मानी हुई वात है कि दुनिया का प्राणी शरीर के आमोद-प्रमोद और खुशी के लिए विविध प्रकार से आमोद-प्रमोद के त्योहारो को मनाता है, अर्थ भी व्यय करता है, शरीर मे श्रम भी करता है फिर भी वह इन पर्वो से, इन त्योहारो से अपने आप मे कुछ लाभान्वित नही होता। वह तन से भी कुछ क्षीण होता है, धन से भी क्षीण होता है, अतिथियो को कुछ खिला-पिलाकर अलग करता है और कुटुम्व वालो मे भी वह अल्प समय के लिए अलग-थलग होता है। नतीजा यह होता है कि वह इन मेलो और त्योहारो मे अपनी आत्मा के लिए कर्म वध करके भारी होता है।

आध्यात्मिक पर्व : लाभ ही लाभ

लेकिन हमारा यह आध्यात्मिक पर्व, मगलमय पर्व, कर्म काटने का साधन लेकर ससार मे आता है। इस पर्व मे तन का भी लाभ है, धर्म का लाभ भी है। विभिन्न प्रकार के आरम्भ, परिग्रह, भोग और इसी तरह के

विपयो से शरीर को क्षीण होने से वचाता है। मानव को निरतर कार्य रहता है, धन्धा रहता है जिसमे वह फँसा रहता है। लेकिन हमारा यह धार्मिक पर्व योगमार्ग लेकर आता है। यह मानव की देह को सवल बनाता है। व्रत, नियम करेगे, दिल को कावू मे करेगे तो कई प्रकार के रोगो से वच सकेंगे, मन को शान्ति मिलेगी। इधर-उधर के लेन-देन के धधो मे पडने से आत्मा की ओर ध्यान देने का समय नही मिलता। इसके विपरीत यदि धर्मस्थान मे वैठेंगे, महापुरुषो से सम्पर्क करेगे तो दिल-दिमाग आर्त और रौद्र की ओर नही जायगा।

होना तो यह चाहिए कि जैसे घर से निकलकर धर्मस्थान मे आते है और कपडे वदलकर सामायिक साधना मे वैठते है उसी तरह से कपडो के साथ-साथ आदत भी वदलनी चाहिए और वाहरी वातावरण और इधर-उधर की वातो के ख्याल को भुलाकर वैठना चाहिए। यदि इस तरह से वैठेंगे तो वहनो और भाइयो को लाभ होगा, अवश्य लाभ होगा।

तीसरी वात यह होगी कि हमारे कर्म हल्के होगे। पर्व के अलावा दिनो मे आप सुवह से शाम तक परिग्रह, विपय-कपाय और लेन-देन की वातो मे, झूठ वोलने में, गुस्सा करने मे, लड़ाई करने मे सलग्न होकर १८ पापो का वध करते है उसमे आप वच सकेंगे।

आज की चतुर्दशी की विशेषता

यह हमारे पर्वाधिराज का मासिक पर्व है। मासिक पर्व ५ वताए है द्वितीया, पचमी, अष्टमी, एकादशी और चतुर्दशी। आज की चतुर्दशी मे अन्य चतुर्दशियो की अपेक्षा कुछ विशेषता रही है। चातुर्मास के प्रारम्भ की चतुर्दशी होने के कारण अगल-वगल के गाँवो और कस्वो के लोग जहाँ पर सत-सतियाँ विराजमान होते है, वहाँ पर जाते हैं। अन्य दिनो मे भले ही न जाये लेकिन आज के दिन सत-सतियो के पास जाने की इच्छा रखेंगे। अधिक सख्या मे आने का या तो आज का दिन है या फिर पर्वाधिराज पर्युपण के दिन होते है। कई भाई-वहन भदैया होते हैं। जो रोज न आकर कभी-कभी आते है, वे भदैया होते है। भदैया कहलाने वाले लोग केवल पर्युपण के दिनो में आते है। उन दिनो में वे अपना रूप निखार कर आते है।

कई लोग देर से आने वाले होते है। वे पहले आकर अपना वैठका विछाकर चले जाते है। वे सोचते है कि हमने पहले वैठका विछाकर फीस

भर दी और आगे जगह रिजर्व करा ली, ऐसा भी रिवाज है। चाहिए तो यह कि ज्यादा लाभ लेने की इच्छा रखने वाले भाई-वहनो को पहले आकर वैठ जाना चाहिए। लेकिन आना पीछे और बैठना आगे, यह रिवाज विषमता का सूचक है। इससे समाज के हर भाई-वहन को लाभ नही होता। अच्छा हो भाई-वहन इस वात को ध्यान मे ले और विवेक रखे तो समाज मे यह अच्छे लाभ का कारण हो सकता है।

तीसरी वात कर्मबध की है। इससे भी विशेष तौर से वचना होगा। जो लोग उपवास करने की स्थिति मे है। वे देखते है कि आज आषाढ की चतुर्दशी है, आज उपवास करना चाहिए, ऐसे लोग उपवास कर लेते है। आज के दिन के वाद सत और सतीवर्ग चार माह के लिए एक जगह स्थिर हो जायेगे, गाँव-गाँव मे उनका विचरण नही होगा। तो चार महीनो तक सतो की निरतर सेवा करने का यह पहला दिन है। भक्त जनो को इससे हर्ष होता है क्योकि उनको चार महीनो तक निरतर सतो की सेवा करने का मौका मिलेगा।

यह दिन और वह दिन

एक चतुर्दशी आज के दिन है और एक चतुर्दशी कार्तिक मास के शुक्लपक्ष मे आयेगी। उस दिन भक्तजनो को खुशी के वजाय चिन्ता और उदासी हो जाती है क्योकि वे सोचते है कि चार महीनो तक जिनके सत्सग का लाभ मिल रहा था वह समाप्त हो जायगा। कल चातुर्मास पूर्ण होगा तो कल के दिन ठहर कर परसो महाराज विहार कर जायेगे। लेकिन आज का दिन भक्तजनो के लिए यह सोचने का है कि अव महाराज चार महीनो तक इधर-उधर नही जायेंगे, यही रहेगे।

लेकिन महाराज के लिए यह चतुर्दशी का दिन वांधने वाला है और कार्तिक शुक्ला चतुर्दशी का दिन महाराज को खुला करने वाला है। महाराज को वाँधने का मतलव क्या है ? यो तो जव से मुनि दीक्षित होता है तव से ही वह भगवान की आज्ञा और मर्यादाओ से वँधा हुआ होता है। अनुशासन मे वँधा हुआ होता है। आप लोगो की तरह सतवर्ग खुला हुआ नही है। उसकी सारी प्रवृत्तियाँ शास्त्रो की आज्ञा से मर्यादावद्ध हैं। लेकिन आज के दिन से जो वधन है उसको मैं इस अपेक्षा मे कह रहा हूं कि कल का दिन हमारे लिए फिर खुला है। कल चातुर्मासिक प्रतिक्रमण करने से पहले तक साधु-साध्वी यदि क्षेत्र मे नही पहुँचे है तो कल तक

है उनको मालूम होगा कि अमृत पीने वाला अजर-अमर हो जाता है। यदि आपको अजर-अमर बनना है तो भगवान की वाणी मे रस लीजिये, भगवान की वाणी का अमृत पीजिए।

अभिप्राय समवाय का

आज के दिन केवल प्रारम्भ करने की बात है। अगसूत्रो मे समवायाग सूत्र की वाणी का अमृत प्रस्तुत किया जायगा। इसका पान करने वाले भाई-बहन अजर-अमर हो जाते है। अविनाशी हो जाते हैं। समवाय का अर्थ है—अनेको को एक जगह इकट्ठा करना। इनको इकट्ठा कैसे करना? एक सख्या मे कई बोल आयेगे, इन सबको कैसे एकत्रित करना? करोडो समवाय मे से पहले मगलसूत्र का आज उच्चारण करना है। आज सूत्र का प्रारम्भ कर ले, कल और परसो शास्त्रो का अस्वाध्याय रहेगा, वाचन नही होगा। आज इस पवित्र वाणी को—शब्दो को एक कोने से दूसरे कोने तक पहुँचा देना है।

केवली और ु के ी

आचार्य सुधर्मा स्वामी हमारे पचम गणधर हुए है। उनके लिए कहा है कि—

> **चौदह पूरबधारी कहिए, ज्ञान चार बखाणिए।**
> **जिन नहीं पर जिन सरीखा, एवा सुधर्मा स्वामी जाणिए॥**

हमारे पचम गणधर सुधर्मा स्वामी कैसे हो गये? वे १४ पूर्वो के धारी थे और चार ज्ञान—मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान और मन पर्यव ज्ञान को धारण करने वाले थे। शिष्य ने फिर पूछा कि वे केवली है क्या? तो कहा कि जिन नही लेकिन जिन सरीखे है। केवली नही है लेकिन केवलियो के समान कहलाने वाले है। केवली नही होते हुए भी केवली के समान वागरणा करने वाले हैं। उनको यदि केवली कहना गलत है तो १४ पूर्वधारी क्या है? जो वात केवली जानते है वही वात १४ पूर्वधारी भी जानते है। तो फिर इन दोनो मे फर्क क्या है? पूछना तो आप को चाहिए था लेकिन मैं अपनी ओर से पूछता हूँ और अपने आप ही जवाव देता हूँ। १४ पूर्वधारी भी केवलज्ञानी के समान सब कुछ जान लेता है, देख लेता है, तो फिर १४ पूर्वधारी और केवलज्ञानी मे फर्क क्या रहा? इसका जवाव यह है कि केवलज्ञानी विना उपयोग लगाये जानता है। उनको खुद दिखता है और १४ पूर्वज्ञानी जब देखना चाहे तो उसको उपयोग

लगाना पडता है। यही कारण है कि १४ पूर्वज्ञानी होते हुए भी, केवली के समान सव कुछ जानने की शक्ति होते हुए भी यदि उपयोग नही लगावें तो नही जान पायेंगे। लेकिन केवलज्ञानी विना उपयोग लगाये जान लेते है। केवलज्ञानी विना उपयोग लगाये, विना प्रवृत्ति के ससार के अनत-अनत पदार्थों को स्पष्ट देखते है।

समवायागसूत्र का पहला सूत्र है

"सुय मे आउस ! तेण भगवया एवमक्खाय"

यह कौन कह रहा है ? यह किसकी वाणी है ? यो तो ११ गणधरों ने शास्त्र की रचना की। इन्द्रभूति ने द्वादशाग की रचना की। अग्निभूति और वायुभूति ने भी शास्त्रो की रचना की लेकिन १० गणधरो की वाणी हमारे सामने नही है। आज जो आचाराग सूत्र, समवायाग सूत्र आदि हम पढ रहे हैं वे सव किसकी रचनाये है, किसके वचन है ? ये सुधर्मा स्वामी के वचन है। सुधर्मा के समान अन्य कितने गणधरो ने वाचन किया ? गणधर ११ थे लेकिन वाचना ६ हुई।

इस पेठ का नाम क्या है ? साहूकार पेठ है, तो क्या आप सव साहूकार है ? क्या ऊँची आवाज से पूछूँ ? सव साहूकार है पर बोल कोई नही रहे है। आपको शायद शका हो गई कि महाराज किसी मतलब से शायद पूछ रहे है इसलिए आपकी वोली बद हो गई। जव भी हमसे कोई पूछते हैं कि कहाँ ठहरे हो, यही कहा जायगा कि साहूकार पेठ मे। फिर साहूकार पेठ के लोग क्यो शक कर रहे है कि सव साहूकार हैं या नही।

सुधर्मा स्वामी द्वादश अगो की रचना करने के उपरान्त भी अपनी वात कहते समय जवू स्वामी से कहते है कि हे आयुष्मान् ! चिरजीव शिष्य ! भगवान ने कहा, इस प्रकार मैंने सुना है। सुधर्मा स्वामी जैसे १४ पूर्व के ज्ञानी यह नही कहते कि हे शिष्य ! मैं कहता हूँ और मैंने जो आज तक अनुभव किया वह तुझे सुना रहा हूँ। ऐसा नही कहकर वे यही कहते है कि जिस तरह मैने भगवान से सुना है, वह तुम्हे सुना रहा हूँ।

अभिमान तजिए

यह हमारे जिनशासन की उच्च विनय और अहकार-परिहार की वात है। जिनशासन कहता है कि यदि मोक्ष की ओर आगे बढना है तो अहकार, मान अथवा घमंड को चकनाचूर करिए। यदि तुमको अपनी जाति का घमण्ड है, उच्च कुल मे जन्म लेने का अभिमान है, मैं फलाँ

करोड़पति सेठ का लडका हूँ या मेरे घर मे पूर्व मे दीवानगिरी रही है, इसलिए मुझे पहले आसन मिलना चाहिए। जो लोग साधारण घर के हैं उनको कैसे ऊँचा आसन दे दिया। हमारे पूर्वज राजा-महाराजाओ के बराबर बैठा करते थे। यदि इस तरह का अभिमान करेगे तो बात बहुत मुश्किल हो जायेगी। धन का मान, कुल का मान, हुकूमत का मान, तपस्या का मान, इस तरह से भगवान ने ८ प्रकार के मान बताए है, ये सब बुरे है। मान करना बुरी बात है।

तपस्या में प्रद ' अहितकर

तपस्या करने वालो को भी कभी-कभी मान आ जाता है। बेला, तेला या अठाई करके कहते है कि महाराज क्या बेलिया, तेलिया की बात करते हैं। बेला-तेला तो मेरी बगल मे रहते है। मैं तो अठाई बिना बात ही नही करूँ। आजकल तो अठाई से भी आगे नया नम्बर चलाया है मासखमण का। अठाइये तो कई हो गई है, राजस्थान के जयपुर मे या बैंगलौर मे इतनी अठाइयाँ हो चुकी है, मै तो मासखमण करूँ तो बात है, इसके बिना बात नही। यदि कोई नौजवान तेला करके धर्मस्थान मे जाता है तो कहते है कि तेला किया तो क्या कर लिया, मैं तो इतनी तपस्या पहले ही कर चुका हूँ। मेरे जितनी तपस्या करो तो शरीर का सत ही निकल जाय। तेला करके क्या लाड-कोड करा रहे हो। पारणे के दिन कहेगे कि बापजी पहला तेला है। जरा पधारने की कृपा करो। उसकी हँसी करेगे कि तेला करके क्यो पोमाते हो। पहले तपस्या करने वालो का पता ही नही लगता था कि इन्होने तपस्या की है लेकिन आज तपस्या करने वालो का बुरा हाल हो गया है। तपस्या करने वाले भाई-बहन जरा सोचे कि जैन सिद्धान्तो के अनुसार आप की तपस्या हो रही हैं या नही। इसके बारे मे आप स्वय सोचे।

जो भाई-बहन अठाई या मासखमण करते है उनका सारा समय मिलने-जुलने को आने वालो के साथ बात करने मे जाता है, जुलूस के लिए तैयारी करने मे जाता है। बहने कहती हैं कि पीयर वालो को खबर करो कि वे आने की तैयारी करे। आने मे देरी हो जाय या लेन-देन मे ऊँचा-नीचा हो जाय तो देवीजी का माथा ठणक जाय, जो चीजे पीयर वाले लाये हैं उनको भी फेक देगी और कह देंगी कि म्हारे तो नही चाहिए। मैं कोई साधारण स्त्री हूँ, इतनी ऊँची तपस्या की है।

'मिच्छामि दुक्कड' मे विवेक रखें

भगवान महावीर ने तप के दो भेद किए—वाह्य तप और आभ्यन्तर तप। आज से हमारी तप साधना का पर्व चालू हो गया है। यो समझना चाहिये कि चौमासी पर्व तो कल है लेकिन व्यवहार मे चतुर्दशी का महत्व सामान्य लोग ज्यादा मानते है। हमारे धर्मशास्त्रो के हिसाब से आत्मिक आलोचना के लिए पक्खी और चौमासी का महत्त्व चतुर्दशी से ज्यादा है। आत्मशुद्धि के पॉच विभाग किए है—दैवसिक, रात्रिक, पाक्षिक, चातुर्मासिक और सावत्सरिक। आत्मा पर लगे हुए कर्मो के मल को साफ करने के लिए भगवान् का पहला आदेश है कि हर रोज दोषो को साफ करो। रोज सफाई करने के लिए झाडू देने वाले झाडू जल्दी-जल्दी देते हैं। इस प्रकार प्रतिक्रमण करने वाले भाई 'मिच्छामि दुक्कडम्' झट-झट बोलते जायेंगे एक आदमी बोलने वाला है और ५० प्रतिक्रमण करने वाले है तो बीच की बातो का ध्यान नही करेगे और 'मिच्छामि दुक्कडम्' कह देगे। यह लहर टाबरो मे भी आ जाती है, वे भी मिच्छामि दुक्कडम बोल देगे। ऐसा बोलने मे उनको मजा आता है। लेकिन 'मिच्छामि दुक्कडम्' किस बात का, इसका ख्याल साधारण लोगो मे से थोडे ही लोग करते है। इसलिए भगवान ने कहा कि रोज सफाई नही हुई तो पक्खी के दिन कर लें। १५ दिनो मे भी नही करे तो चौमासी के दिन कर ले। उस दिन भी आलस्य मे रह गये हो तो उसकी शुद्धि सवत्सरी के दिन कर ले। इन सब का परिचय केवल आज दे देता हूं। जो भाई-बहन आज धर्म-साधना मे लगे हैं, व्रत, नियम और पौषध मे लगे है वे कल के दिन को भी भूले नही। आज कर लिया कल पौषध नही हो तो वे दया व्रत करेंगे, सामायिक का पच्चक्खाण करेगे। इस प्रकार का कार्यक्रम बनाकर चलेगे तो आश्रव घटेगा और सवर बढेगा।

तप के भेद

मैं आप को तपस्या का स्वरूप बता रहा था। तपस्या का स्वरूप दो तरह का है—एक बाहरी और दूसरा आभ्यतर। वाह्य तप ६ प्रकार का है और आभ्यन्तर तप भी ६ प्रकार का है। वाह्य तप करने का असर शरीर पर पडता है। आज जो भाई उपवास किए है उनकी सूरत शाम को देखना। अभी तो कोई खास बात नही है, लेकिन शाम को देखना कि हमेशा उछलते थे वैसे ही उछल रहे है या बिस्तर पर पडे है। इनको क्या

हो गया ? यदि कल वेला करा दिया जावे और फिर तेले का पच्चक्खाण हो जावे तो धीरे-धीरे मुँह कुम्हलाता जायगा। जिस तप का असर शरीर पर होता है उसको वाह्य तप कहते है।

जिस तप का असर मन या विकारो पर होता है, जिससे विषय, कषायो और दुर्भावनाओ पर चोट लगती है उस तप का नाम आभ्यन्तर तप है।

विनय तप का प्रभाव मन पर

विनय कितने प्रकार की है ? आप मे से वहुत से भाई-वहन जानते होगे। अरिहन्त भगवान की विनय, सिद्ध भगवान की विनय, आचार्य महाराज की विनय, उपाध्याय महाराज की विनय, साधु की विनय, कुल की विनय, गण की विनय, चतुर्विध सघ की विनय, साधर्मी की विनय और क्रियावान की विनय—ये दस प्रकार की विनय वतलाई है। इसमे एक भी वोल ऐसा नही आया जिसमे कहा हो कि धनपति की विनय की जाय या गोखरूवाली वाई की विनय की जाय। लेकिन यह आया कि क्रियावन्त की विनय की जाए। लेकिन आपने किसकी विनय करना सीखा है, जरा सोचने की वात है। इस प्रकार की आदत नही पडी है तो शास्त्रो की वाणी को सुनकर जरा मोड देने का प्रयास कीजिए। विनय केवल साधु की ही नही वताई है। एक भाई श्रावक है, प्रतिक्रमण जानता है, १२ व्रत की साधना करता है, ऐसे क्रियावन्त की विनय भी करनी है। विनय करने मे क्या किसी को खाना छोडना पडा ? विनय करने वाले को क्या पानी वन्द करना पडा ? क्या विनय करने वाला दुवला हो गया ? क्या विनय करने वाले के चेहरे पर कुम्हलाहट आयी ? उसके चेहरे मे यह नही पता चलता कि वह विनयवान है—तपस्वी है। वेला, तेला का तप करने वाले के चेहरे से पता चल जाता है कि वह तप कर रहा है। लेकिन विनय करने वाले के चेहरे से दूसरो को मालूम नही पडता कि यह विनय तप की आराधना कर रहा है। कहने का मतलव यह है कि विनय आभ्यन्तर तप है।

वाह्य और आभ्यन्तर, दोनो तप आवश्यक

तो ६ वाहर के तप है और ६ आभ्यन्तर तप है। हमे वाहरी तप को भी ठुकराना नही है।

मेरी बात को ध्यान से सुनना। आप यह न समझ जायँ कि महाराज ने कह दिया कि बेला, तेला करके भूखो मरने की क्या जरूरत है, विनय करो, यह तप है। स्वाध्याय करो, यह भी तप है। महाराज ने बाह्य तप की मनाही कर दी, ऐसा ख्याल मे नही लेगे। लेकिन यह ख्याल मे लेगे कि तप का क्या स्वरूप है। बाह्य तप और अतरग तप एक दूसरे से जुडने वाले है। बाहरी तप के साथ आभ्यन्तर तप होगा तो बाहरी तप की दीप्ति होगी। वह चमक जायगा।

बाहरी तप वाले बहुत से भाई-बहन आज उपवास करते हुए मिलेगे। उनका ख्याल रहता है कि आज खाना छोडा है तो धधाबाड़ी से भी किनारा करना है और ५ आश्रवो का भी त्याग करना है। हिंसा नही करे, झूठ नही बोले, कुशील से बचे, परिग्रह से दूर रहे। जो आज उपवास नही कर पाये है वे बहन-भाई भी आज चतुर्दशी के उपलक्ष मे चार खद का त्याग करे। ऐसे भाई-बहन, बच्चे, बूढे सभी आज चार खद का पालन जरूर करेगे। बोलने मे यदि पूरा सत्य नही बोल सकते, पूरा मौन नही रख सके तो कम से कम किसी को गाली नही देगे, किसी से लडाई तो नही करेगे, किसी की निन्दा नही करेगे।

पुराने जमाने मे लोग ऐसी छोटी-छोटी बातों का ख्याल रखते थे। आज चौदस है तो आज हजामत नही करायेगे। आज धोबी को कपडे धोने के लिए नही देगे। ऐसी चीजो को भी पुराने जमाने मे लोग पकडा करते थे, लेकिन आज ऐसी चीजो की ओर नजर कौन दे, आज तो विषय-कषाय बहुत फैला हुआ है। धर्मस्थान मे भी ५० भाई-बहन इकट्ठे होते है तो आपस मे झगडा हो जाता है। पाप धोने के लिए आते हैं या बढाने के लिए? याद रखिए कि आपका चौमासी पर्व कर्मबन्ध के लिए नही है बल्कि कर्म काटने के लिए है, विषयो का शमन करने के लिए है।

प्रायश्चित्त, विनय, वैयावच्च, स्वाध्याय, ध्यान आदि ये ६ प्रकार के तप जो है ये आभ्यन्तर तप है।

उपवास आपने बहुत वार किया होगा लेकिन प्रायश्चित्त कितनी वार किया? विनय किसका किया? वैयावच्च सगे-सम्बन्धियो का किया होगा या माता-पिता का, बाई-बेटी का या सास-बहू का वैयावच्च करने का खयाल होगा, लेकिन जिससे कोई सम्बन्ध नही है, जाति मे कोई

लगता नही है, धनपति नही है, ऐसे भाई-वहन एक धर्मी होने के नाते, व्रती या तपस्वी होने के नाते, वैसे लोगो का वैयावच्च आपने कितनी वार किया ? इसका चिन्तन करने के लिए आज का दिन प्रेरणा देता है ।

आत्म-शुद्धि के लिए गुरु के सामने जाकर अपनी आलोचना और प्रायश्चित्त करना चाहिए । अच्छाई की वात दूसरो से कही जाती है लेकिन अपनी बुराई कहने की आदत आदमियो मे कम होती है । कभी-कभी धर्म का काम लिया होगा, दान-पुण्य किया होगा ? सामायिक तो आप कई कर लेगे । गुरु महाराज से कहेगे कि सुवह से आपकी सेवा मे बैठा हूँ । ५ सामायिक कर ली है, ५ दोपहर मे हो जायेगी और ५ सामायिक रात्रि मे हो जायेगी । आज कुल १५ सामायिक हो जायेगी । इस तरह से अपने नियम, दान-पुण्य की वाते कहने वाले वहुत भाई-वहन मिलेंगे लेकिन ऐसा कहने वाले थोडे मिलेगे कि आज त्यौहार के दिन मुझसे फलां गलती हो गई, फला भाई से लडाई हो गई, गुस्से मे आ गया । ऐसी छोटी-मोटी आन्तरिक गलतियो को प्रकट करके आत्म-शुद्धि करने वाले भाई-वहन कितने मिलेगे ?

पर्व का दिन : निर्जरा का दिन

हमारे महान पर्व का यह समय आपके सामने आया है । यदि इस पर्व के समय मे आप भाई-वहन देश-विदेश से, गाँव से, पर-गाँव से आकर सत समागम मे अपने समय का योगदान करते है तो आपको यह सोचना है कि हम ज्यादा से ज्यादा निर्जरा करे । वन्ध नही हो, इसका ध्यान रखें । यदि उपवास करके भी पोपध नही हुआ तो सहन कर लिया जायगा लेकिन आपने यदि किसी की निन्दा की, किसी के साथ द्वेप किया तो आपके लिए यह सुख का कारण नही होगा । कभी ऐसा होता है कि लोग कह देते हैं कि साहव हम तो अच्छा काम करते है । इस भाई ने पोषध तो कर लिया लेकिन दिन भर सोता रहा । मैंने कहा तो भी नही माना । ऐसे निमित्त से विना ज्ञान वाले को भी रोष आ जाता है ।

ऐसे लोगो को भी भगवान नसीहत देते है कि भाई ! तू अतरग तपस्या कर । कई भाई धर्म-दलाली करते है, पाँच भाइयो को प्रेरणा देते है, किसी की सेवा-शुश्रूषा करते है, या विनय करते है, तो इससे भी कर्मों की निर्जरा होती है या नही ? इससे दर्शन-शुद्धि होगी या नही ? इसके लिए

भगवान कहते है कि यह जो हमारे करने का थोडा प्रसग आया है इसको करना कर्मो को काटना है और नये कर्मों के बध को रोकना है। तो मुख्य काम दो हुए, जिन प्रवृत्तियो से कर्मो का बध होता है उन प्रवृत्तियो को रोके। इससे हमारी आत्मा हल्की होगी।

भगवान के चरणो मे भक्त ने निवेदन किया कि—

दयामय ऐसी मति हो जाए।
भूले भटके, उल्टी मति के, जो हैं जन समुदाय।
उन्हें दिखाऊँ सच्चा सत्पथ निज सर्वस्व लगाय॥
दयामय ऐसी मति हो जाय॥

भावो की अनुकूलता कैसे ?

यह धर्म शासन, जैसा कि पहले कहा गया है, क्रियावादियो का समोसरण है। यहाँ आने वाले कर्म काटते है और अपनी आत्मा को हल्की करते है। आपका द्रव्य ठीक है, क्षेत्र ठीक है और काल भी ठीक है, चातुर्मास के प्रारम्भ का काल है। द्रव्य, क्षेत्र और काल की अनुकूलता के साथ भावो को भी अनुकूल वना ले। भावो की अनुकूलता हो जायगी तो कर्मबध कटने मे देरी नही होगी।

भाव की अनुकूलता कैसे करना ? कुछ भाई जो शरीर से कमजोर है वे सोचेगे कि हमसे तपस्या नही होगी। कुछ भाई प्रौढ है वे ज्ञान की आराधना करने के बारे मे कहेगे कि हमको ज्ञान नही चढता। हम दो पैसे खर्च तो कर देगे लेकिन तपस्या नही होगी, ज्ञान की आराधना नहीं होगी। ऐसा कहकर कई भाई हाथ झटकने को तैयार होगे।

भगवान कहते हैं कि मानव धर्म तीन प्रकार का होता है। हर आदमी के पास तीन साधन है—तन है, मन है और वाणी है। आपको धन खर्चने वाले सभी नही मिलेगे। कई ऐसे भाई नही है क्या जो अपनी जरूरत पूरी करने के लिए भी दूसरो की अपेक्षा रखते है ? ऐसे भाई भी वहुत है जो दूसरो के सहयोग की अपेक्षा रखते हैं तो धन से ही धर्म कर सकते है, यदि ऐसा माना जाय तो कई भाई-वहन नापास हो जायेगे। इसलिए हर सामाजिक और धार्मिक कार्यकर्ता को समझना चाहिए कि सामाजिक और धार्मिक रीति-रिवाजो पर कट्रोल रखना जरूरी होता है लेकिन आज इस ओर ध्यान देने वाले थोड़े हैं।

हमारे आचार्य लोकाशाह के वाद आचार्य लवजीरिषिजी, आचार्य धर्मदासजी, आचार्य धर्मसिहजी, आचार्य हरजी, आचार्य जीवराजजी आदि इन आचार्यो ने आडम्बर और दिखावे की वातो को धर्म मे स्थान देने से मना किया। तपस्या के पीछे भेट देना, उजमणा करना आदि इस तरह की रीतियो मे फँसे हुए लोगो को वताया कि धर्म अमीर ही नही, गरीव लोग भी कर सकते है।

मनोरजन भी प्रमाद

गरीवो के पास धर्म करने के क्या साधन है, इस वारे मे उन्होने वताया कि शरीर या तन सवके पास है। आज पर्व का दिन है। हम आरम्भ-परिग्रह को छोडकर हिंसाकारी कार्य नही करेगे। शरीर को गलत जगह नही लगायेगे, प्रमाद नही करेगे, सिनेमा नही देखेगे। आज वाजार वन्द है तो कुछ लोग ताश खेलते रहते है। इससे उन्होने धर्म कमाया या पाप? लेकिन वहुत से भाई सोचते है कि नीद लेने से तो यह अच्छा है, पत्ते पीटने के लिए एक जगह बैठे रहते है। उपासरे मे तो घडी-दो घडी भी बैठा नही जाता लेकिन ताश खेलने मे घटो विता सकते है, उठने का नाम ही नही लेते। ताश खेलते समय हिंसा से वचे या नही, झूठ वोलने और चोरी करने से भी वचे। लेकिन उनका ऐसा सोचना सही नही है। इसमे भी भाषा का दोष, मन का दोष और तन का दोष होता है और सबसे वडा दोप प्रमाद का होता है। माधव मुनि ने तो यहाँ तक कहा है कि शतरज के खेल मे वाचिक हिंसा होती है। शतरज का खेल हत्यारा है।

धर्म प्रेरणा दें

मेरे कहने का भाव यह है कि जो भाई-वहन उपवास करते है वे अपना समय इस तरह खेलो मे, प्रमाद मे, पिक्चर देखने मे नही लगावे। प्रतिक्रमण करे, आलोचना करे, सत्सग की आराधना करें। समाज-सेवा का मौका आवे तो उसे करे, लेकिन धर्म-क्रिया को नही छोडे। आप धर्मक्रिया करते है और दूसरा ऐसा नही करता है तो उसको नास्तिक कहकर उसका तिरस्कार नही करे लेकिन उसको भी प्रेम से गले लगावे और उससे कहे कि आज पर्व का दिन है, मै भी धर्मस्थान मे चलूं, तुम भी चलो, स्वाध्याय करे, आत्मचितन करे, वीतराग का चिन्तन करे। इस तरह से उनको भी गले लगाइये, उनकी वुरी आदतो को

मिटाइये, इससे महान् पुण्य होगा। ऐसा करके श्रीकृष्ण ने तीर्थंकर गोत्र का बध कर लिया और श्रेणिक ने भी महान् पुण्य लाभ किया।

आज महान् चतुर्दशी का पर्व है। कल चौमासी पर्व के रूप मे चतुर्मासी पर्व का समय आने वाला है। ऐसे समय मे सत्संग का अवसर पाकर, साधना का मौका पाकर आप अपने जीवन मे व्रत, नियम और साधना के १० प्रकार के नियम लेकर पूर्व मे बँधे कर्मों को काटने का प्रयत्न करे और नये कर्म नही बँधे, ऐसा उपाय करे। प्रमाद को हटाकर, नीद को छोडकर साधना मे अपने जीवन को लगावेगे तो आपको इस लोक मे और परलोक मे आनन्द, शान्ति और कल्याण की प्राप्ति हो सकेगी। जो ऐसा करेगे वे दोनो लोको मे आनन्द और शान्ति प्राप्त कर सकेगे।

जैन भवन, मद्रास
(दिनांक २६-७-८०; समय ६-४५ प्रात)

□

११

चौमासी पर्व का मंग दिवस

प्रार्थना

वीर सर्व-सुरासुरेन्द्रमहितो, वीरं बुधाः संश्रिता. ।
वीरेणाभिहत. स्वकर्मनिचयो, वीराय. नित्यं नम. ॥
वीरात्तीर्थमिदं प्रवृत्तमतुलं वीरस्य घोर तपो ।
वीरे श्री-धृति-कान्ति-कीर्ति-निचयो, हे वीर भद्रं दिश ॥

प्रिय आत्मार्थी बन्धुओ !

कल चातुर्मासिक चतुर्दशी का एक पर्व आपने सम्पन्न किया। जैसी आपको कल सूचना दी गई थी उसी तरह, चौमासी पर्व का आज परम मगल दिवस है। आत्मशुद्धि का लक्ष्य रखने वाले साधु, साध्वी, श्रावक और श्राविका समस्त साधक मडल आज के दिन अपनी आत्मशुद्धि के रूप मे आलोचना करेंगे, प्रतिक्रमण करेंगे, आत्म सशोधन करेंगे और जीवन में चार महीनो का जो भी व्यवहार है उसका निरीक्षण-परीक्षण करके अपने जीवन-व्यवहार को निर्मल करने का कार्य करेंगे तथा अपने जीवन को पवित्र बनाएँगे। यह दिन हमारे सामने आत्मशुद्धि के पर्व के रूप मे आया है।

जैसा आत्मशुद्धि करना लक्ष्य है उसके साथ ही साधु जीवन का एक विशेष कार्यक्रम और भी है जो फाल्गुनी चौमासी मे नही होता, वह इसमे होता है। फाल्गुनी चौमासी मे चार महीनो का शुद्धिकरण का अवसर तो है, वैसे आषाढी चौमासी मे भी आत्मा को निर्मल करने का कार्य कर सकते है और तीसरी चौमासी है कार्तिक शुक्ला पूर्णिमा की।

मिटाइये, इससे महान् पुण्य होगा। ऐसा करके श्रीकृष्ण ने तीर्थंकर गोत्र का बध कर लिया और श्रेणिक ने भी महान् पुण्य लाभ किया।

आज महान् चतुर्दशी का पर्व है। कल चौमासी पर्व के रूप में चतुर्मासी पर्व का समय आने वाला है। ऐसे समय मे सत्संग का अवसर पाकर, साधना का मौका पाकर आप अपने जीवन मे व्रत, नियम और साधना के १० प्रकार के नियम लेकर पूर्व मे बँधे कर्मो को काटने का प्रयत्न करे और नये कर्म नही बँधे, ऐसा उपाय करे। प्रमाद को हटाकर, नीद को छोडकर साधना मे अपने जीवन को लगावेगे तो आपको इस लोक मे और परलोक मे आनन्द, शान्ति और कल्याण की प्राप्ति हो सकेगी। जो ऐसा करेगे वे दोनो लोको मे आनन्द और शान्ति प्राप्त कर सकेगे।

जैन भवन, मद्रास
(दिनांक २६-७-८०; समय ६-४५ प्रात)

□

११

चौमासी पर्व का मंग दिवस

प्रार्थना

वीर सर्व-सुरासुरेन्द्रमहितो, वीरं बुधा' सश्रिता ।
वीरेणाभिहत स्वकर्मनिचयो, वीराय. नित्य नम ।।
वीरात्तीर्थमिदं मतुल वीरस्य घोरं तपो ।
वीरे श्री-धृति-कान्ति-कीर्ति-निचयो, हे वीर भद्रं दिश ।।

प्रिय आत्मार्थी वन्धुओ !

कल चातुर्मासिक चतुर्दशी का एक पर्व आपने सम्पन्न किया। जैसी आपको कल सूचना दी गई थी उसी तरह, चौमासी पर्व का आज परम मगल दिवस है। आत्मशुद्धि का लक्ष्य रखने वाले साधु, साध्वी, श्रावक और श्राविका समस्त साधक मडल आज के दिन अपनी आत्मशुद्धि के रूप मे आलोचना करेंगे, प्रतिक्रमण करेंगे, आत्म संशोधन करेंगे और जीवन मे चार महीनो का जो भी व्यवहार है उसका निरी-क्षण-परीक्षण करके अपने जीवन-व्यवहार को निर्मल करने का कार्य करेंगे तथा अपने जीवन को पवित्र वनाएँगे। यह दिन हमारे सामने आत्मशुद्धि के पर्व के रूप में आया है।

जैसा आत्मशुद्धि करना लक्ष्य है उसके साथ ही साधु जीवन का एक विशेप कार्यक्रम और भी है जो फाल्गुनी चौमासी मे नही होता, वह इसमें होता है। फाल्गुनी चौमासी में चार महीनो का शुद्धिकरण का अवसर तो है, वैसे आपाढ़ी चौमासी मे भी आत्मा को निर्मल करने का कार्य कर सकते हैं और तीसरी चौमासी है कार्तिक शुक्ला पूर्णिमा की।

परम्परा परिव

भगवान महावीर के शासन मे वीर सवत् ४५० के पहले तक एक पद्धति चलती थी और उस विशुद्ध पद्धति के अनुसार पाक्षिक पर्व पूर्णिमा और अमावस्या के सम्बन्ध से हुआ करता था और सम्वत्सरी पर्व पचमी के सम्बन्ध से हुआ करता था। लेकिन एक प्रसग आया कालकाचार्य के समय मे और उस समय पचमी के बदले चौथ को सवत्सरी का दिन कायम किया गया। जैसे सवत्सरी के दिन का परिवर्तन हुआ वैसे ही चतुर्दशी को पक्खी करने की तिथि नियत करके चतुर्दशी को महत्व देना आरम्भ किया गया। तब से चतुर्दशी की प्रथा समाज मे—जैन जगत मे चलती रही।

शास्त्रीय परम्परा

लेकिन हमारे पूर्व आचार्यो ने, स्थानकवासी समाज के आचार्यों ने सोचा कि शास्त्रीय दृष्टि का चिन्तन सामने रखकर चलना चाहिए। इसलिए उन्होने शास्त्रीय दृष्टि को महत्व दिया। व्यावहारिक दृष्टि समाज और क्षेत्रीय परिवर्तन और परिस्थितियो के साथ बदलती रहती है लेकिन शास्त्रीय दृष्टि को बदलने का कोई कारण नही है। इस रूप मे आज भी हमारी परम्परा मे, स्थानकवासी समाज की परम्परा के अनुसार पूर्णिमा का सम्बन्ध चतुर्दशी मे आ जाता है तो चतुर्दशी को भी हमारा पर्व हो सकता है और नही तो पूर्णिमा को होता है। इसी दृष्टि से इस बार चतुर्दशी को चौमासी पर्व नही हुआ क्योकि चतुर्दशी, चतुर्दशी के रूप मे रही, इसके साथ पूर्णिमा का योग नही हुआ। अत हमारा चौमासी पर्व आज पूर्णिमा को हो रहा है। यह थोडा सा परिचय आपको दिया गया।

साधु-साध्वी मडल आज के दिन जिस जगह उनको वर्षावास करना है उस जगह पहुँचने की भरसक कोशिश करेगे और वर्षाकाल का निमित्त बना लेगे। जो भी उनको शारीरिक निर्वाह, सघ निर्वाह और अपनी आवश्यकता की पूर्ति के लिए वस्त्र आदि ग्रहण करना होगा वह आज शाम तक ग्रहण कर लेगे। फिर आदान-प्रदान की क्रिया बद हो जायगी और वे अपने चातुर्मास के समय मे चार बातो का खयाल रखेगे अर्थात् ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप की आराधना करेगे।

भूल संभव : आलोचना आवश्यक

जब तक आदमी छद्मस्थ है तब तक प्रमादवश, भ्रान्तिवश, कषायवश, असावधानीवश उससे कुछ दूषण हो सकता है। हमारा जिनशासन बतलाता है कि गलती हो जाना सहज है, लेकिन गलती को छिपाना नही चाहिए। आज का दिवस तुम्हारी आत्मशुद्धि का पर्व है इसलिए कम से कम आज तो शान्ति से बैठकर चार महीनो के समय मे तुमको ज्ञान के सम्बन्ध मे, दर्शन के सम्बन्ध मे, चारित्र के सम्बन्ध मे और तप के सम्बन्ध में जो दोष लगे है उनकी आलोचना करनी चाहिए।

ये तो व्यक्तिगत जीवन से सम्बन्ध रखने वाली बाते है। एक बात और कहूँ वह यह कि सामाजिक जीवन मे, व्यवहार मे, आचरण में हमने एक दूसरे के प्रति भ्राति को स्थान दिया है तो उसकी शुद्धि करने के लिए भी आज का पर्व आपके लिए, हमारे लिये आया है और आत्मा पर इधर-उधर से जो मैल लगा हो, धब्बा लगा हो, कचरा लगा हो तो उसको भी साफ करके बिल्कुल निर्मल करने का सदेश यह पर्व देता है।

पर्व-प्रतिक्रमण क्यो आवश्यक

साधारण जिज्ञासु प्रश्न कर सकता है कि हम रोज ही प्रतिक्रमण करके आत्मा को निर्मल करने का कार्य कर रहे है तब फिर पक्खी और चौमासी के दिन क्या नई बात है ? ३ महीना २६ दिन तक जो कर चुके हैं, आज का दिन मिलाकर चार महीनो तक आत्मशुद्धि का कार्य कर चुके है उसको फिर क्यो करना ? ऐसा भी इन्सान के मन में एक तर्क हो सकता है, एक सवाल हो सकता है, एक विचार हो सकता है।

भगवान ने कहा कि—अरे भाई ! तू तर्क की आदत मे मत पड। व्यावहारिक दृष्टि से देख। सुबह नहाया है और फिर कमठे के काम मे लग गया अथवा कोई काश्तकारी के काम मे लग गया या कोई दीवाली के समय मे सामान इधर-उधर रखने के काम मे लग गया जिसके कारण इधर-उधर की धूलि या कचरा शरीर पर लगना सभव है तो शाम को वह फिर नहा लेता है। ऐसा भी कभी आपने किया या नही ? कल नहाये थे और आज फिर नहाये यह क्या बात है ? रोज नहाते-नहाते दीवाली के दिन या किसी जान मे जाना है, उस दिन विशेष रूप से नहायेंगे। नहाने की प्रक्रिया मे फर्क पड़ेगा या नही ? जानी बनकर जान मे जाना है तो

परम्परा परिवर्तन

भगवान महावीर के शासन मे वीर सवत् ४५० के पहले तक एक पद्धति चलती थी और उस विशुद्ध पद्धति के अनुसार पाक्षिक पर्व पूर्णिमा और अमावस्या के सम्बन्ध से हुआ करता था और सम्वत्सरी पर्व पचमी के सम्वन्ध से हुआ करता था। लेकिन एक प्रसग आया कालकाचार्य के समय मे और उस समय पचमी के वदले चौथ को सवत्सरी का दिन कायम किया गया। जैसे सवत्सरी के दिन का परिवर्तन हुआ वैसे ही चतुर्दशी को पक्खी करने की तिथि नियत करके चतुर्दशी को महत्व देना आरम्भ किया गया। तब से चतुर्दशी की प्रथा समाज मे—जैन जगत मे चलती रही।

शास्त्रीय परम्परा

लेकिन हमारे पूर्व आचार्यो ने, स्थानकवासी समाज के आचार्यों ने सोचा कि शास्त्रीय दृष्टि का चिन्तन सामने रखकर चलना चाहिए। इसलिए उन्होने शास्त्रीय दृष्टि को महत्व दिया। व्यावहारिक दृष्टि समाज और क्षेत्रीय परिवर्तन और परिस्थितियो के साथ वदलती रहती है लेकिन शास्त्रीय दृष्टि को वदलने का कोई कारण नही है। इस रूप मे आज भी हमारी परम्परा मे, स्थानकवासी समाज की परम्परा के अनुसार पूर्णिमा का सम्वन्ध चतुर्दशी मे आ जाता है तो चतुर्दशी को भी हमारा पर्व हो सकता है और नही तो पूर्णिमा को होता है। इसी दृष्टि से इस वार चतुर्दशी को चौमासी पर्व नही हुआ क्योकि चतुर्दशी, चतुर्दशी के रूप मे रही, इसके साथ पूर्णिमा का योग नही हुआ। अत हमारा चौमासी पर्व आज पूर्णिमा को हो रहा है। यह थोडा सा परिचय आपको दिया गया।

साधु-साध्वी मडल आज के दिन जिस जगह उनको वर्षावास करना है उस जगह पहुँचने की भरसक कोशिश करेगे और वर्षाकाल का निमित्त वना लेगे। जो भी उनको शारीरिक निर्वाह, सघ निर्वाह और अपनी आवश्यकता की पूर्ति के लिए वस्त्र आदि ग्रहण करना होगा वह आज शाम तक ग्रहण कर लेगे। फिर आदान-प्रदान की क्रिया वद हो जायगी और वे अपने चातुर्मास के समय मे चार वातो का खयाल रखेगे अर्थात् ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप की आराधना करेगे।

नहाने मे फर्क पडेगा या नही ? जान मे जाने के लिए तो और भी वढिया साबुन से नहायेगे।

ये अमीरी के प्रभाव

अमीरो का साबुन अलग होता है। उनकी सारी चीजें अलग हैं। केवल मजबूरी उनकी यह है कि अमीर होने पर भी वही पानी पीना पडता है और वही अन्न खाना पडता है। अन्न के वदले और किसी चीज से काम चलता तो शायद अन्न को भी छोड देते। सेठ-सेठानियो ने साधारण कपडा पहनना छोड दिया। साधारण लोग तो मलमल का कपडा पहन लेगे लेकिन अमीर लोग क्या देखेंगे ? बढिया नाइलोन हो या टेरालिन हो, जरी हो। न मालूम कैसी आदत पड गई है। पूँजी पाने के वाद आदमी का दिमाग फिर जाता है। वे चाहते है कि साधारण लोगो से खान-पान, वस्त्र आदि मे फर्क होना चाहिए, नही तो हमारा अमीरीपन कैसे दिखेगा। ऐसे ससारी जीवो की भूल की आदत पड गई है।

सतो ने समझाया कि भाई ! तू रोज नहाता है फिर भी दशहरा, दीवाली के दिन विशेष तौर से नहाना आवश्यक मानता है। जब तुझे अपने शरीर पर सुवह से शाम तक पडे हुए मैल की शुद्धि करने की इतनी जरूरत होती है तो तेरी आत्मा पर, मन पर कुछ कचरा आना सम्भव है या नही ? जव देह पर धूलि और कचरा आना सम्भव है तो यह कहना कि कल तो प्रतिक्रमण किया था, सुवह फिर करके आया हूँ फिर महाराज क्यो कहते है कि शाम को फिर प्रतिक्रमण करो। शाम को ही नही, पीछे के चार महीनो मे आये हुए दोषो को और शुद्ध करके चलो।

भगवान ने ऐसी वात क्यो कही ? ऐसी वात मन मे आती है तो दिमाग मे हलचल चालू रहती है। भगवान ने ऐसे तर्क वालो, शका वाले प्राणियो, मुमुक्षुओ और विद्वानो का खयाल रखकर कहा कि मानव ! यह भी आवश्यक है।

मानाकि तुमने कल आलोचना की है, सुवह सव दोषो को देखा है फिर भी सभव है उस प्रतिक्रमण के समय आलोचना करने मे और चितन मे गफलत होगई हो, इधर-उधर मन चला गया हो और वरावर निरीक्षण-परीक्षण नही कर पाया हो तो आज चार महीनो का पर्व है उसमे फिर निरीक्षण करो।

घर मे अक्सर देखा जाता है कि नीचे की फर्श पर झाड़ू रोज देते

है लेकिन ऊपर की छत और दीवारे छूट जाती है, उनको रोज साफ नही करते। जाजम और गद्दी को उठाकर प्रतिदिन साफ नही किया जाता लेकिन दीवाली आने पर जाजम और गद्दी उठाकर भी सफाई की जाती है। जब जमीन की सफाई के लिए इतना खयाल रखा जाता है तो कही ऐसा न हो कि हमारी मेहनत यो ही चली जाय। यह शरीर तो मिट्टी का है। चाहे दो वार नहा लो या चार वार नहा लो यह तो दूषित वना ही रहता है।

किसी शौचवादी ने इधर-उधर थूक दिया तो दूसरे ने कहा कि देख! जरा खयाल रख, थूक का छीटा हमारे पर पडेगा तो नहाना पड़ेगा। तो उसने कहा कि अच्छा भाई! गगाजल से कुल्ला कर लेता हूँ। २१ वार गगाजल से कुल्ला करके फिर मुँह मे थूक लेकर कुम्भ कलश जिसमे पेय-जल है उस पर थूक डाले तो क्या होगा? अशुद्ध होगा या शुद्ध? अशुद्ध क्यो होगा? उसने २१ वार गगाजल से कुल्ला करके शुद्धि कर ली है। २१ वार कुल्ला करने पर भी शरीर का थूक अशुद्ध ही रहा, पवित्र नही हो सका। उसको आप पवित्र करने की कोशिश कर रहे है जो पवित्र होने वाला नही है। लेकिन आत्मा को एक वार पूरी पवित्र वना ले तो क्या वह फिर कभी गदी होती रहेगी? नही।

अध्यात्मवादी का चिन्तन

तो फिर क्या करना? इसलिए सन्तो का यह सवाल आया, यह चिन्तन आया, यह विचार आया कि हम आत्मावादी है। जैसे भूतवादी शरीर को देखा करते हैं वैसे ही अध्यात्मवादी आत्मा की शुद्धि और अशुद्धि को देखा करते है। भूतवादी को शरीर पर पडा हुआ कचरा खटकता है लेकिन अध्यात्मवादी को, कपड़ा-चाहे मैला हो, तन पर चाहे कचरा पडा हो, चाहे मैल हो, फिर भी वह उसको खटकेगा नही। सव जगह ऐसे पुरुप मिलेंगे।

आपने सुना होगा कि पुराने जमाने मे चक्रवर्ती आदि श्रावक युद्ध मे जाते तव जहाँ पर उनका डेरा लगाता था वही पर पौषधशाला भी वनाई जाती थी। युद्धभूमि मे युद्ध की तैयारी हो रही है, सेना और सेनापति साथ मे है, आगे चक्ररत्न चल रहा है फिर भी उनको समय पर देवाराधना के लिए पौपध करना है, उसके लिए अलग से पौपधशाला वनाई जाती थी। यह कैसी वात है?

आज तो किसी की जान या बारात बैंगलोर जा रही है तो पहले से कार्यक्रम बनाया जायगा कि नाश्ता-पानी की व्यवस्था कहाँ करनी है, उसके लिए तार-टेलिफोन से सूचना भेज दी जायगी, बगले की व्यवस्था कर ली जायगी, लेकिन सामायिक करने के लिए कुछ नही होगा। आप तो चक्रवर्ती से भी अधिक रहे!

साथ ही साथ यह जान लीजिए कि वे चक्रवर्ती श्रावक नही थे। व्रती श्रावक नही है तो फिर पौषधशाला की क्या बात है? लेकिन आप समझिए कि कैसे थे वे लोग, जो एक तरफ युद्धभूमि मे जाते हुए भी पौषध प्रतिक्रमण का खयाल रखते थे। वे अव्रती थे, आप देशव्रती श्रावक कहलाते है। वे चौथे गुणस्थान वाले थे, आप पचम वाले हैं। वे सोचते थे कि भजन-पूजन के लिए अलग स्थान होना आवश्यक है जिसमे न खाना हो, न राग-रग हो, न भोग की सामग्री हो। हमारे परिवार के सदस्य, सेनापतिरत्न या मै स्वय वहाँ बैठकर उपासना कर सकूं, उसके लिए पौषधशाला आवश्यक मानी जाती थी, उस समय ऐसी व्यवस्था थी चाहे चक्रवर्ती हो या वासुदेव हो। कहने का मतलब यह कि उनके मन मे आत्म-साधना का लक्ष्य मुख्य था।

हमारा आज का पर्व मुनियो के लिए भी सूचित करता है और आप श्रावक-श्राविकाओ के लिए भी सूचित करता है, क्या सूचित करता है? यही कि आत्मशुद्धि करो।

करलो आत्मा का आलोचन, जीवन उज्ज्वल होवेला।
तन का मैल हटावण खातिर, नितप्रति नहावेला।
मन पर मैल चहुँ ओर जमा है, कैसे धोवेला।
कर लो आत्मा का आलोचन, जीवन उज्ज्वल होवेला।

मोक्षार्थी सतो ने हर मानव को आत्म-शुद्धि के लिए निमन्त्रित किया है और उससे कहा है कि हे मानव! यदि तुझे जीवन उज्ज्वल करना है, उसको निर्मल बनाना है, दोपो से आत्मा को मुक्त करना है तो आत्मा की आलोचना कर।

पहला कदम आत्मालोचना

पहला कदम प्रारभ होता है आत्मा की आलोचना से।

सुबह उठकर मुँह धोने से पहले आम आदमी, बच्चा या बूढा देखना चाहता है कि कही चेहरे पर निशान तो नही है, यह अवलोकन करेंगे।

के साधु-साध्वियो, श्रावक-श्राविकाओ के लिए, दोनो समय प्रतिक्रमण करना जरूरी नही था, क्योकि वे ऋजु याने सरल स्वभावी थे। आज तो किसी को प्रतिक्रमण मे बैठे-बैठे ऊँघ आ गई और पास मे बैठने वाले ने उसे चेताया कि—ऊँघ क्यो रहे हो? तो पहले-पहल उसके मुँह से निकलेगा कि—नही साहब ! मै ऊँघ कहाँ रहा हूँ, मै तो चिन्तन कर रहा हूँ। पहले-पहल 'नही' शब्द निकलेगा। कोई सामायिक मे बैठकर पास वाले से इधर-उधर घर की और बाजार की बात पूछने लगा और किसी नें टोक दिया कि—सामायिक मे बैठे हो और ऐसी बाते करते हो, तो वह कहेगा कि नही साहब ! यह तो साधारण बात पूछ ली थी। 'नही साहब' कहने के बजाय कबूल कर ले कि—'हाँ साहब ! थोडी-सी गलती हो गई, बात पूछ ली, अब ऐसा नही करूँगा' तो उसका कुछ बिगडेगा क्या ?

सतो ने सूचित किया कि भाई ! उपासरे मे सन्तो के सामने जाओ उस समय मुखवस्त्रिका या रूमाल ले लो तो कहेगा कि मुँह के आडे हाथ रख लूँगा। हाथ इधर-उधर हो जानें पर ? एक तो यो कहता है कि साहब इस बात का ध्यान रखूँगा, उसके बजाय यदि कहता है कि म्हारे तो हाथ मे रूमाल या मुँहपत्ति है। यह वक्रता है। न मालूम यह वक्रता हमे कहाँ ले जायगी ? आज का साधक—साधु-साध्वी, श्रावक-श्राविका अपनी त्रुटि को जल्दी मानने को तैयार नही है। यह समय का प्रभाव है या शिक्षा का ?

अविनय और आशातना के भागी

मैं आप से आत्म-शुद्धि की बात कहने बैठा हूँ। मेरे को भी आत्म-शुद्धि करनी है और आपको भी करनी है। शुद्धि करते-करते विचार आता है कि नहा तो रहा हूँ लेकिन ऊपर से कचरा आ रहा है, अधड चल रहा है, ऐसी हालत हो रही है। एक तरफ से प्रतिक्रमण से शुद्धि कर रहे है और दूसरी तरफ ऊपर से विचारो की आँधी बरस रही है। कोई बिना मतलब के इधर-उधर की बात कह गया, उससे समाज मे हलचल मच जाती है। श्रावको का दिमाग बिगडता है और सन्त लोगो के मन मे क्षोभ उत्पन्न हो जाता है। साधु लोगो का दायित्व समाज को उपदेश देने और सन्मार्ग बताने तथा विकृतियो के सशोधन का हे, और आत्म-शुद्धि करने का भी कर्तव्य होता है। फिर श्रावक लोग कदम-कदम पर कर्मबन्ध करने के लिए सत्सग मे नही आते और कर्मबन्धन करने के लिए साधु लोग भी चौमासा नही करते हैं, लेकिन हम सब कर्म काटने के लिए आए हैं।

कर्म काटने और सघ शुद्धि के लिए सतो को जव धर्म उपदेश का प्रसग आता है तो वह अपने साधको को, श्रावक-श्राविकाओ को और शिष्यो को गलती नही करने और समय पर कर्तव्य कर्म का आचरण करने के लिए नही कहे तो, वह गुनहगार होता है कि अपने कर्तव्य का पालन नही करता है? हमारा कोई साधु समय पर प्रतिक्रमण नही कर रहा है, स्वाध्याय नही कर रहा है, टाग पसार कर सो गया है तो उसको कुछ कहना या नही कहना ? यदि कहते है तो कोई जवाव देता है कि आज तक कोई साधु टाग पसार कर नही सोया है क्या ? जो गुरुजी मुझसे पूछ रहे है। स्वाध्याय या ध्यान करते समय वाते नही करने के लिए कहे तो कोई कहता है कि क्या गुरुजी वाते नही करते है ? तो शिक्षा नही पा सकेगा। किसी को सामायिक मे अखवार पढते देख साधु ने निपेध किया, नही मानने पर प्रायश्चित्त वताया। इस पर कोई कहे कि अखवार तो साधु जी भी पढते है फिर हमको प्रायश्चित्त क्यो ? हम नही करेगे।

ऐसा कहने वाले विनयभग के साथ पूज्य पुरुषो की आशातना के भागी वनेंगे। क्या ऐसी वातो मे समाज का सुधार होगा ? यदि शिष्य को गुरु कुछ कहता है तो शास्त्र के माफक गुरु अपराधी तो नही है ? शिष्य की गलती सुधारने के लिए कुछ कहा जाय तो गुरु अपराधी है या शिक्षा नही देने पर अपराधी है ? कहने पर भी कोई टेढा वना रहे और कहे अनुसार आचरण नही करे तो वात दूसरी है। गुरु का काम तो शिक्षा देना और गलती को सुधारना है। फिर भी कोई गलती को नही माने और नही सुधारे तो मर्जी की वात है।

आत्मशुद्धि के तीन सूत्र · निरीक्षण, परीक्षण और शिक्षण

आपके प्रतिक्रमण का पहला पाठ क्या है ? प्रतिक्रमण माताओ को भी आता है और कई भाइयो को भी आता है। जो प्रतिक्रमण की गाथा है उसमे किसी को शुद्धि करने को कहा ? क्या आत्मा धोने के लायक है ? क्या आत्मा माजने के लायक है ? क्या आत्मा पूँजने लायक है ? पोथी पर कचरा लग जाय तो उसकी शुद्धि किस से करें ? रजोहरण लिया या अगोछे से पोछ दिया तो पोथी पर का कचरा साफ हो गया। लेकिन आत्मा की शुद्धि के लिए तीन सूत्र रखे हैं—निरीक्षण, परीक्षण और शिक्षण। इन तीनो के माध्यम से आत्मा की शुद्धि होती है।

निरीक्षण के लिए चार वाते वताई है। ज्ञान के दोप की शुद्धि के

लिए स्वाध्याय करना, शास्त्रो का वाचन करना । वाचन करने के लिए बैठा लेकिन पहले वन्दन नही किया तो पास वाले ने कहा कि स्वाध्याय कर रहे हो तो इससे पहले वन्दन तो कर लो । वन्दन किये विना नया पाठ कैसे चालू करते हो ? शास्त्र पढने का काल होता है उसी मे पढना चाहिए । क्या काल होता है क्या अकाल होता है इसको पहले समझ लेना चाहिए । आत्मा का निरीक्षण करना है तो साधक यदि आलस्य और प्रमाद से विधि के अनुसार आचरण नही करता है तो वह दोष का भागी होता है ।

प्रथम शुद्धि ज्ञान की

पहले शुद्धि करनी है-- ज्ञान की । असमय मे शास्त्र को पढना और समय पर आलस्य करके बैठे रहना और स्वाध्याय नही करना दोनो ही दोष है । असमय मे वाचन करना और समय पर नही करना भी दोष है । ज्ञान के १४ दोष है ।

आप हजार भाई-वहनो मे से ५ भाई ज्ञान के पूरे अतिचार गले उतार सके होगे । त्यागी वर्ग भी छद्मस्थ है इसलिए उनके जीवन मे भी दोप लगना सभव है, लेकिन इतनी स्वच्छता और सचाई चाहिए कि सुवह शाम दोनो वक्त देख ले । जल्दी देख लेगे तो दोष का कचरा जम नही सकेगा । अपनी सफाई आप करना है । अपने शरीर की सफाई खुद करते है या कोई नहाने के लिए कहते है तव करते है ? आत्मशुद्धि भी आप स्वय करेगे, मेरे कहने की जरूरत तो नही है । इस वारे मे आपको थोडा चिन्तन करना है ।

द्वितीय शुद्धि दर्शन की

दूसरा नम्वर आता है— दर्शन का । जीव को अजीव समझे और अजीव को जीव समझे, मिथ्या को सत्य समझे और सत्य को मिथ्या समझे । प्रमादवश, कपायवश या मन की चचलतावश जीवन मे मिथ्यात्व का आचरण हो गया तो मुमुक्षु साधक क्या करेगा ? पहले वह अपनी गलती को देखेगा और फिर उसको गुरुजनो के सामने प्रकट करेगा और फिर गुरुजनो ने कोई उचित प्रायश्चित्त देना आवश्यक समझा तो उसको स्वीकार करके अपने दोपो की आलोचना करेगा, शुद्धि करेगा ।

इसी प्रकार चारित्र मे कोई दोप लग जाने पर उसकी आलोचना करेगा, प्रायश्चित्त लेगा ।

तो ज्ञान के विषय मे, दर्शन के विषय मे और चारित्र के विषय मे शुद्धिकरण कर लिया। चौथा क्या है ? तप।

हमारे प्रतिक्रमण मे और आपके प्रतिक्रमण मे थोडा अन्तर है। आपका देशव्रत धर्म है। उसमे भी विशेषण लगाया है। उसमे क्या करे, यह आपको मालूम होना चाहिए।

कुण्डकौलिक और शकडाल के वारे मे आपको मालूम होगा। शकडाल पौषध मे था उस समय देव ने उनको उपसर्ग दिया, माता और पत्नी को मारने की तैयारी की। श्रावक ने देखा—यह अनार्य है कोई, पौषध मे भरोसा नही। कदाचित क्रूर वनकर मेरी माता और पत्नी का हनन कर देगा, ऐसा सोचकर वह उसे पकडने के लिए खडा हो गया। उसके खडा होने मात्र से उसकी पत्नी कहती है कि पतिदेव आपके व्रत मे दोष लग गया है, आलोचना करो, शुद्धि करो।

क्या दोष लग गया ? वह झूठ वोला या किसी की उसने हिंसा कर दी ? न हिंसा की, न झूठ वोला, लेकिन खडा इसलिए हो गया कि उसकी माता को और पत्नी को कोई मारे नही। परिवार के अमुक जनो का नाश उसका दुश्मन कर चुका है। इस अभिप्राय से चचल मन के कारण वह उठा। उठने से क्या हुआ ? उसकी पत्नी अग्नि-मित्रा कहती है कि प्रायश्चित्त करिये। लेकिन शकडाल ने उसके साथ तर्क नही किया, न उसको कुछ जवाव दिया कि काई होगयो। मै तो सिर्फ इसलिए खडा हुआ हूँ कि यह अनार्य आदमी है, तुम्हे पकडने या मारने के लिए आया है, उसमे तुमको वचाऊँ। ऐसा तो काउसग्ग मे भी आगार है कि विल्ली चूहे को मारती हो तो उसको वचाने मे दोष नही। ऐसी स्थिति मे काउसग्ग वाला काउसग्ग से उठ जाय तो दोष नही है। शका-डाल रात्रि मे काउसग्ग मे से उठ गया, पत्नी को वचाने के लिए तो कही इधर-उधर उसके वारे मे हवा चली क्या ?

अनुशासन आवश्यक

अपने व्यक्तिगत जीवन मे आने वाले दोपो के सम्वन्ध मे कोई निर्देश करे तो उसके मानस के वारे मे सोचना चाहिए, समझना चाहिए, जीवन को वदलना चाहिए। दोप सुधारने के लिए गलत रीति-रिवाज को वदलने और शिक्षा को ग्रहण करने के वदले उस वारे मे हवा वनाई जाय कि ये कैसे महाराज आये है जो कहते है कि पेट पहनकर सामा-

यिक मत करो, रूमाल मुँह पर लगाये बिना मत आओ। अगर ऐसा कहेगे तो हम थानक मे आयेगे नही। क्या ऐसा कहने वाले महानुभाव सघ की व्यवस्था को, अनुशासन को और सतो के प्रति आदरभाव को कायम रखेगे या उस सबको मिट्टी मे मिला देगे। हमारे अच्छे अनुशासनशील श्रावक और श्राविकाओ को ऐसी भूल कभी नही करनी चाहिए।

कभी आपने अपने बच्चो को स्कूल मे भेजा है ? अलग-अलग स्कूलो की ड्रेस अलग-अलग होती है। एक स्कूल के व्यवस्थापक कहते है कि बच्चे खाकी रग की पोशाक पहनकर नही आये तो स्कूल से बाहर निकाल दिये जायेगे। ऐसा कहने पर क्या आप वहाँ के व्यवस्थापको या मास्टरो से झगडा करेगे और उनसे कहेगे कि हमारे से खर्चा बर्दाश्त नही होता। आज तक स्कूल मे मास्टर आते रहे है, तुम नये आये हो जो कहते हो कि खाकी कपडे पहनकर नही आये तो बाहर निकाल देगे। क्या आप वैसी व्यवस्था नही करोगे ?

अभी हम रास्ते मे एक स्थान पर एक स्कूल मे ठहरे थे। मैंने वहाँ देखा कि अजैन भाइयो की बच्चियाँ और जैन भाइयो की बच्चियाँ एक ही रग के बैगनिया रग के कपडे पहनकर आती है। जैन समाज की बच्चियाँ की भी क्रिश्चियन बहनो के समान ऊपर से नीचे तक एक ही रग का वैसा ही चोला पहने हुए थी।

स्कूल वाले हुक्म या आर्डिनेन्स निकाले कि हमारे स्कूल का मार्का यह है, यूनीफार्म या ड्रेस इस तरह की होनी चाहिए तो आप कल नही आज ही उस तरह की ड्रेस बदल लेगे या मास्टर की आलोचना करेगे ? फिर क्या कारण है कि धर्मस्थान मे सतो के योग्य मार्गदर्शन की अव-हेलना करे, उनके मार्गदर्शन के अनुसार व्यवस्था करने की बजाय उनकी आलोचना करे ? इस प्रकार अनुशासनहीन समाज की स्थिति हमारे सघ के गौरव को बढाने वाली नही होगी। इस प्रकार की स्थिति से हमारे सघ का कहाँ तक हित हो सकता है ? यह सबके लिए सोचने की बात है।

मुझे तब ताज्जुब आता है जब कोई ग्रामीण भाई आता है और उसको कभी कुछ कह दिया जाता है, कभी बोल दिया जाता है कि तेरे पास रुमाल नही है, हम बगैर रूमाल लगाये तुम्हारा वन्दन स्वीकार नही करेगे तो वह चुपचाप चला जाता है क्योकि उसमें सतो के प्रति श्रद्धा है। नगर के भाइयो को यदि ऐसा कह दिया जाय तो उनको शायद बर्दाश्त नही होगा। न मालूम उनमे क्या है ? पैसे के बल पर वे लोग भूल जाते

है और उन्मादी की तरह सोचने लगते है कि ये महाराज कैसे नये आये, आज तक किसी ने ऐसा नही कहा, इन महाराज ने ऐसा कहा, वैसा कहा आदि।

ये छोटी-मोटी व्यवहार की बाते है। सत और श्रावक का गुरु-शिष्य का सम्बन्ध है। कोई चीज उनकी समझ मे नही आवे तो स्पष्टीकरण कर ले। गलती होती है तो प्रतिक्रमण मे आलोचना करते समय दण्डस्वरूप ५ सामायिक दे दी जाती है। आज तक किसी आत्मार्थी भाई ने तर्क नही किया कि महाराज कैसे ५ सामायिक दे रहे है हम तो नही करेंगे। सवत्सरी प्रतिक्रमण के समय कही ५० सामायिक दे दी जाती है और कही इससे भी अधिक सख्या मे दण्ड दे दिया जाता है, तो कोई नही कहता है कि हमने तो एक तो प्रतिक्रमण किया और ऊपर से प्रायश्चित्तस्वरूप दण्ड क्यो दिया जा रहा है? कभी-कभी समाज मे ऐसी शंका, ऐसी जिज्ञासा, ऐसा प्रश्न, ऐसा तर्क-वितर्क पैदा होते नही देखा होगा। सघ हितैषी लोगो को शिष्टाचार का पूर्ण पालन करना चाहिये।

तर्क : व्यवस्था का विघातक

देखिये ज्ञान-चर्चा की वातो मे तर्क-वितर्क का अभ्यास है, लेकिन व्यवस्था मे कदम-कदम पर तर्क करेंगे, नुक्ताचीनी करेंगे तो समाज की व्यवस्था नही चलेगी, सघ की व्यवस्था छिन्न-भिन्न हो जायेगी, कार्यकर्त्ता सुलभ नही होगे। यदि सघ की योग्य व्यवस्था रखनी है, स्वाभिमान को सुरक्षित रखना है तो व्यवस्था मे किसी प्रकार का स्खलन होने पर आत्मार्थी साधको का कर्तव्य है कि वे व्यवस्था मे स्खलन का निराकरण करके शुद्धि कर ले।

हमने आपके सामने पहले कहा और आज भी कहते है कि जब यहाँ बैठेगे तो वस्तुस्थिति के कथन मे जो सत्य है वह कहना पड़ेगा। शिक्षा का सदेश भी देना पडेगा। यदि तप के प्रसग पर कहने की वात आई तो चाहे कोई आडम्बर छोडे या न छोडे फिर भी आडम्बर अच्छा नही है, यह कहेगे। हम यहाँ पर आपको राजी करने के लिए नही आये है और न ही नगर के सुखद आवास एवं सुस्वादु भोजन के लिए आये है। जहाँ भी आपकी चूक नजर आयेगी उसके बारे मे हम अपनी सीमित साधु भाषा मे कहेगे। कोई भाई उचित कहेगा तो उसमे सहज सशोधन करने के लिए तैयार रहेगे। मर्यादा की बात मे कोई गलती आप व्यक्तिगत या समूहगत हो तो कहे। इस प्रकार व्यवस्था रहेगी तो सघ की तेजस्विता को आगे बढा सकेंगे, नही तो नही बढ़ा सकेगे।

आपने एक समय ऐसा भी देखा है जब तपस्वी गणेशीलाल जी महाराज अनुशासन नही मानने वालो को मकान के दरवाजे से वाहर कर देने का सदेश देते थे। किसको ? जो बिना मुँहपत्ती लगाये आता उसको। लेकिन लोगो ने कभी उनकी आलोचना करने का रास्ता नही पकडा। क्या समाज की व्यवस्था ठीक रही ? अमली रूप देने के लिए जचा तो स्वीकार कर लिया नही तो नही किया। साधु-साध्वियो के नीति सम्वन्धी कोई वात आपके समझ मे आवे, कोई नही आवे तो समाधान कीजिए। यदि समाज को शुद्ध रखना हो, सत-सतियो के मार्ग मे कोई कमी हो, उपदेश शास्त्रविरुद्ध हो तो उसको वताइये। धर्मसिद्धान्त प्रेरणा लेने का विषय है। उसकी आलोचना छोडकर समाज को शुद्ध बनाये रखना है। आज के दिन आत्मा की आलोचना करेंगे तो आपका जीवन शुद्ध होगा और हमारा जीवन भी शुद्ध होगा।

व्यापक आलोचना करिए

पहला क्रम ज्ञान, दर्शन और चारित्र का वताया। इसी तरह चौथा नम्वर तप का है। हमारे शास्त्रो के अनुसार आत्मा की आलोचना करना आवश्यक है। मैं अपनी आलोचना नही करूँगा और आप अपनी आत्म-आलोचना नही करेंगे तो शुद्धिकरण नही होगा। मेरी आलोचना मैं स्वय जितनी सही रूप मे कर सकता हूँ उतनी आप नही कर सकते और आप की आलोचना जितनी सही रूप मे आप कर सकते है उतनी मैं नही कर सकता।

हरएक को अपना जीवन शुद्ध करने के लिए अपनी आलोचना खुद करनी है, वारीकी से देखना है। स्वय को यह सोचना है कि मैं कही वोलने मे तो नही चूका ? समझने मे तो नही चूका ? आचरण या व्यवहार मे तो नही चूका। केवल ज्ञान, दर्शन और चारित्र की ही आलोचना नही करनी है। आप को यह भी आलोचना करनी है कि धधा-वाडी मे आप कैसे चल रहे हैं ? श्रावक को जिस तरह का धधा-वाडी करना है, क्या आप श्रावक के योग्य धधावाड़ी के ढग से आप भी चल रहे हैं, या नही चलते हैं ? क्या यह भी आलोचना करने लायक है— करना जरूरी है या नही ? केवल वधे हुए पाठ मोत मे घ्येम। इससे क्या होगा कि जीवन की त्रुटियो की तरफ ध्यान जायगा और आप

मना तोने किण विध कर समझाऊँ ?
हाथी हो तो पकड मगाऊँ, पैर जजीर लगाऊँ ।
महावत होकर ऊपर बैठू, अकुश दे दे चलाऊँ ।
मना तोने किण विध कर समझाऊँ ।।

प्रिय भाइयो ! आपका मन हो, चाहे हमारा मन हो, एक ही वात है । आपका मन इधर-उधर डोले वैसे ही हमारा मन भी इधर-उधर दौड जाय, वाहर निकल जाय तो हमे उसको वापस कावू मे करने का प्रयत्न करना चाहिए । उसको तुरन्त जकड लेना चाहिए । कवि कहता है कि अरे मन, तू मन है, अगर तू हाथी होता तो तुझे समझाना आसान हो जाता । तुझे पकड मगाता, तेरे पैरो मे जजीर डाल देता और ऊपर बैठकर अकुश लगाता । लेकिन तू हाथी नही, मन है । चालीस सेर वाला मन है । जगल का शेर होता तो पिजरे मे वन्द कर दिया जाता । चालीस सेर वाले इस मन को समझाने के लिए अनुशासन की जरूरत है । चाहे समाज मे जावे या सत्सग मे जावे, मन वाहर हो तो ज्यादा कडा अनुशासन रखिए ।

हम तो रास्ता वताने वाले है इसलिए रास्ता वता देते है । एक वार आप फिसल गये तो दुवारा सँभलना मुश्किल हो जायेगा । महाजन का वच्चा वार-वार नुकसान करने लगा तो पिता उदास होगये । पिताजी ने कहा कि जव तक तेरा कर्जा चुके नही तव तक के लिए तू मीठा खाना वद करदे । वाप-दादा की ऐसी नसीहत मानने लायक है या ठुकराने लायक है ? वह कहने लगा कि क्या पिताजी आपने कभी टोटा नही खाया? आपने काई करनो है, म्हारे टोटो मैं ही सहन करूँला । जिस व्यापारी के वच्चे को नुकसान से वचना है, व्यापार मे तरक्की करना है, आर्थिक लाभ उठाना है तो वडो की शिक्षा के अनुसार भोजन छोडोगे, खर्चा कम करोगे तो व्यापार सुधर जायगा, तरक्की कर सकोगे ।

इसी तरह शास्त्रो की शिक्षा आपके लिए और हमारे लिए मानने लायक है । सतो ने कदम-कदम पर कहा कि ज्ञान, दर्शन और चारित्र मे गलती हो जाय तो आलोचना करो । हमारे लिए जैसी वात अनुशासन की है वैसी ही आपके लिए भी है । आज हमे आलोचना करके शुद्धि करना है । अव तक जो हो गया,वह हो गया । हमे आपकी वातो पर विचार नही करना है, आपकी भावनाओ पर विचार नही करना है, हमारा कर्तव्य

हमको पूरा करना है। आपको अपना कर्तव्य निभाना है। हमे दोनों का ध्यान करना है। ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप का बराबर उपयोग रखते हुए आत्म-शुद्धि के मार्ग मे आगे बढना है। अपनी शक्ति के अनुसार साधना करेंगे, नियमो का पालन करेंगे तो हमारे लिए हितकर होगा।

आज उपवास किया जाता है, पौषध-प्रतिक्रमण किया जाता है, वह इस मतलब के लिए है कि पुराने कर्मो को निर्जरा करके नए कर्मो का बध रोकने का प्रयत्न किया जाय। तप और सहनशीलता का व्रत किया जाता है। इस तरह ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप के साधना क्षेत्र मे विवेक के साथ आप हम चलेगे तो आत्म शुद्धि होगी।

वर्षाकाल का समय प्रतिवद्ध समय हो जाता है। शेष काल गुजरा। आज वर्षाकाल का प्रारम्भ है। इस काल मे ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप की साधना हम लोग भी करेंगे, आप लोग भी करेंगे। आप लोगो को हम योग्य मार्गदर्शन करेंगे। आप लोग भी ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप की साधना करने के लिए तत्पर रहेगे तो आपके जीवन मे शाति होगी।

मैं पहले ही कह चुका हूँ कि हमने वर्षाकाल मे साहूकार पेठ को केन्द्र बनाया है। लेकिन केन्द्र को रखकर भी हमने अगल-बगल का क्षेत्र खुला रखा है, यह आपके ध्यान मे आ गया होगा। नक्शा बाजार की विनती थी। हमारे संत हमारी अनुकूलता के अनुसार बीच-बीच मे किसी क्षेत्र को हमारी अनुकूलता के माफक २ कोस का क्षेत्र खुला रखते है। कदाचित किसी कारण से कही रात्रिवास करना पडे तो नगर मे भी एक दो मकानो की स्थिति खुली रखते है। चार क्षेत्र बाहर के खुले रखते है। वर्षाकाल मे भगवान की आज्ञा के अनुसार ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप की साधना मुनिमडल करेगा। इसको ध्यान मे रखकर आप भी आगे चलेगे।

उपदेश वगैरह मे कडी और कटु बात कहने मे आती है तो मैं अपनी ओर से और मुनि-मडल की ओर से चन्द दिनो मे जो कुछ आपके मन को, दिल को व्यवहार मे किसी प्रकार की चोट लगने का कारण बना हो तो हृदय से क्षमा याचना करता हूँ। आपको भी प्रेरणा देता हूँ, प्रतिक्रमण के समय मनोमालिन्य को मिटाकर आत्म-शुद्धि करेंगे, सो तो करेंगे। हम और आप आत्म-शुद्धि का सकल्प कर बैठे है। पूरे वर्षाकाल के लिए सकल्प करना है।

सामायिक पौषध रोज होता रहे, ऐसी व्यवस्था आप करेंगे तो अच्छा रहेगा। आपकी धर्म प्रचार कमेटी है, वह सोचेगी कि ज्ञान प्रचार की बावत आपको क्या करना है, दर्शन, चारित्र और तप के बावत क्या करना है। आप अपनी अनुकूलता के माफक सोचेंगे।

शक्ति के अनुसार ज्ञान-दर्शन-चारित्रतप की साधना करते हुए आत्म-शुद्धि करेंगे तो कल्याण-पथ पर अग्रसर होंगे।

जैन भवन, मद्रास

(दिनाक २७-७-८०, समय प्रात ९ ३०)

☐ ☐

१२

जीवन की सार्थकता : धर्मकरणी

प्रार्थना

अविनाशी अविकार, परमरस धाम हैं।
समाधान सर्वज्ञ, सहज अभिराम है॥
शुद्ध बुद्ध अविरुद्ध, अनादि अनन्त है।
जगत शिरोमणि सिद्ध सदा जयवन्त हैं॥

अध्यात्म प्रेमी वन्धुओ !

परम वीतराग, ऐसे निरजन, निर्विकार सिद्ध स्वरूप का चिन्तन और वन्दन किया गया है। वे, जैसा कि कहा गया, अविनाशी, अविकार, परम रस धाम हैं, शुद्ध बुद्ध और सर्वज्ञ है। एक-एक शब्द पर आप चिन्तन करिए। अन्त मे वात यह कही गई कि जगत शिरोमणि सिद्ध सदा जयवन्त है।

ससार का स्वरूप

ससार के प्राणी—वच्चे, वूढे, जवान सभी विजय की दौड मे अपनी शक्ति, अपनी ताकत पूरे जोश के साथ लगाते है, ससार के मैदान मे हमको विजय मिले, हम जीते, हमारा नम्बर आगे रहे, इसी चिन्ता मे दिन-रात दौडते रहते है। इनमे से कोई अर्थ यानी धन के लिए दौडता है, कोई परिवार के लिए दौडता है, कोई वैभव के लिए दौडता है, कोई कुर्सी के लिए दौडता है तो कोई सत्ता के दौड़ता है। इस तरह इस घुड-दौड मे दौडने वाले हजारो-लाखो मानव हैं। नतीजा जिसको इस दौड मे पाना है, मिलना है उसको मिलाकर कौन कामयाव होता है या वीच मे ही रवाना होकर चला जाता है, इसका कोई ठिकाना नही क्योंकि यह अनित्य है।

ससार के स्वरूप के वारे मे भगवान महावीर ने दशवैकालिक सूत्र की शब्दावली मे कहा है कि जिसको तुम सुखदायक मानते हो,

आगे वढने के लिए कोशिश करते हो, जिसके लिए तुम प्राण देने को तैयार हो, अनाज छोडने को तैयार हो, भूमि छोडने को तैयार हो, गुरुओ को छोडने को तैयार हो, नीति छोडने को तैयार हो वह ससार कैसा है ? इस बारे मे एक शास्त्रीय गाथा है, थोडा-सा आज उस पर विचार करते है—

जम्म दुक्ख जरा दुक्ख, रोगा य मरणाणि य।
अहो दुक्खो हु ससारो, जत्थ कीसति जतुणो ॥

ससार हमारी आखे उघाड रहा है। आप कदाचित् सशय करेगे कि महाराज हम तो पहले ही आँखे उघाड कर बैठे है। ठीक है, अभी आपकी आँखे खुली हैं या उघाडी है, आप मुझे देख रहे है, अपने साथियो को देख रहे है लेकिन सचमुच जो देखना चाहिए वह नही देख रहे है। क्या देखना चाहिए ? हमारा जीवन कहाँ है ? हम क्या कर रहे है ? क्या करना चाहिए ? हम किस जगह बैठे है ? जगह डोल रही है, भूकम्प हो रहा है। ऐसी जगह मे वैठने वाला भला कैसे वेफिक्र होकर बैठ सकता है।

अस्थिर ससार मे स्थिरता कहाँ

वहुत वर्षों पहले की वात है, अभी चोरडियाजी यहाँ मौजूद नही है, मै कुचेरा घूमता-घामता पहुँचा, उस समय वे वहाँ मौजूद थे। व्याख्यान के वाद कुछ विचार चल रहा था। धरती डोलने का एक छोटा सा धक्का आया, पाटा हिलने लगा। सेठजी वोले कि महाराज ! जमीन हिल रही है, भूकम्प हो गया। सामायिक मे वैठे लोगो का कलेजा हिल गया। मैं सोचने लगा कि एक छोटा सा धक्का आया, इशारा आया जिससे लोग काँप गये। वह तो सौभाग्यशाली क्षेत्र था जहाँ भूमि मे साधारण कपन आया और चला गया, उसमे कोई नुकसान नही हुआ। लेकिन जहाँ धक्के का वेग कुछ अधिक था वहाँ की जमीन फट गई। विहार आदि प्रदेशो मे जमीन फट गई, मकान धँस गये, लोग जमीन मे धँस गये। वहाँ नये मकान वनाने वाले भी कैसे निश्चिन्त रहेगे।

यह छोटी सी नजीर है। जमीन कभी-कभी काँपती है लेकिन ससार सदा काँप रहा है। आप माने या न माने, अर्थ-लालसा के पीछे हमारे जो भाई-वहिन दौड लगा रहे है, इस वास्तविक तथ्य को वे मजूर नही करेगे। उनकी दौड जारी रहेगी। अर्थ चाहने वालो की अर्थ के लिए, भोग चाहने वालो की भोग के लिए, पद चाहने वालो की पद के लिए भूख लगी रहेगी लेकिन उनको पता नही है कि ससार मे दुख ही दुख है—

"जन्म दुक्ख जरा दुक्ख"

जरा देखे, इस ससार मे जन्मा तो दु ख, रोते-रोते निकला । क्या किसी ने वच्चे को हँसते-हँसते जन्म लेते देखा है ? खुद का रोना तो खुद को याद नही है । लेकिन घर मे कभी प्रसूति के वच्चा हुआ है तव वच्चे के रोने की आवाज तो कानो मे आई होगी । तव भी वैराग्य नही आया । जन्मा तव दु ख, पहला नवर दु ख से शुरुआत हुई ।

जन्म के वाद फिर रोग हुआ । आज के ससारी प्राणियो को तो वचपन से ही रोग लगा रहता है । वचपन से ही डाक्टर आने शुरू हो जाते है, दवा चालू रहती है । फिर अवस्था वढी तो जरा यानी बुढापे का दु ख, यह खतरे की घटी वजने लगी । अव बुढापा आने वाला है । कानो से सुनने मे कमी आगई है, आँखो से देखने मे कमी आगई, मुँह से दाँत गिरने लगे, वाल सफेद हो गये । यह निशानी है, पुकार है, सावचेती है, घटी वज रही है । कुछ घडियो मे घटा पूरा होने से पहले अलार्म वजनी शुरू हो जाती है । ऐसी घडियाँ आपने भी देखी होगी । टाइम पूरा होने से पहले अलाम ्रजाती है ।

रोगी शैय्या पर सोया हुआ है, गला वजने लगता है । साँस अभी चल रही है, आपको पता नही, लेकिन जव टाइम नजदीक आता है तव गला खर्र-खर्र वजने लगता है, सचेत करता है, परिवार वाले सचेत हो जायेगे । जो लेना है उसे निकाल लेगे और आपको गादी से नीचे उतार देगे । फिर गादी का मालिक कौन ? पलग आपके वास्ते वनाया था लेकिन टाइम आता है तव गादी या पलग से नीचे उतारकर फर्श पर सुला देंगे ।

क्या मजा है परिवार वालो के व्यवहार मे । जवरदस्ती छुडाए गे उसमे मजेदारी है या आगे होकर छोडने मे मजेदारी है । खुशी से निकलना या धक्के खाकर निकलना ।

जन्मते समय दु ख, रोगी होने पर दु ख, जरा से ,दु ख, मरने का समय आने पर दु ख । ऐसे ससार को देखकर केवलज्ञानियो को और महान् पूर्वधारियो को आश्चर्य होता है कि ये ससार के जीव कैसे है । ऐसी हालत मे भूमि पर डालने की तैयारी हो रही है फिर भी चाहते है कि छोरा-छोरी रो विवाह करणो है । मरते-मरते भी एक जीमण और विवाह ऐसा कर जाऊँ कि लोग याद करे कि सेठ जी एक विवाह तो ऐसा

करियो। मरने का टाइम आया है फिर भी कह रहे है कि जल्दी मुहूर्त निकालो, म्हारो शरीर ठीक नही है, म्हारे हाथ सू टाबरिया रो विवाह तो कर लूँ। ऐसे नमूने आपने कई देखे है। ऐसा हो ही जाता है कि विवाह के ५, १० दिन निकले कि सेठ जी परमधाम पधार गये। सगे सम्बन्धी कहते है कि "वडो अच्छो हुओ म्हे तो विवाह करके घर पहुँच गया, विवाह मे विघ्न नही हुआ लेकिन सेठजी चले गये काई करा।" अरे भाई, थारो कई गयो तुझे तो जो मिलना था मिल गया। सयोगमूलक दुख है।

सयोग-त्याग सुख का मूल

ससारी लोक धन-पुत्रादि का सयोग चाहते है। लेकिन शास्त्र कहता है कि यदि सुख पाना है, सयोग का त्याग करो।

परमागम उत्तराध्ययन सूत्र का पहला सूत्र है —

सजोगा विप्पमुक्कस्स, अणगारस्स भिक्खुणो।
विणय पाउकरिस्सामि, आणुपुव्वि सुणेह मे॥

सयोग क्यो छुडाया ? इसलिए छुडाया कि सयोग वियोग का कारण है, दुख का कारण है, जहाँ सयोग है वहाँ वियोग है, दुःख है। शास्त्रकार ने ठीक कहा है—अरे मानव ! ससार को जान ले, उसमे कोई चीज टिकने वाली नही है। तेरा शरीर टिकने वाला नही है, परिवार टिकने वाला नही है, वैभव और सगे-सम्बन्धी टिकने वाले नही है। तब तू कैसे विचारो मे बैठा है। तू धर्मकरणी क्यो नही करता, क्यो नही जिनशासन की सेवा करता, क्यो नही आरम्भ-परिग्रह से किनारा करता ? तेरे लिए घण्टी बज गई है। ऐसा नही सोचकर मानव उसी के चक्कर मे पड़ा रहता है।

इसलिए शास्त्रकार कहते है कि ससार की बात बडे आश्चर्य की है। उस दुखमय ससार मे रहता हुआ भी, दुख को देखता हुआ भी मानव आँखें बन्द करके चलता है। इससे अधिक आश्चर्य और क्या होगा ?

काल-चक्र निरन्तर गतिशील

आचार्य श्री रत्नचन्दजी महाराज ने मारवाडी भाषा की कविता मे कहा है —

इण पान रो भरोसो भाई रे को नहीं, ओ किण विरिया मे आवे रे।
बाप दादो बैठो रहे, पोतो उठ चल जावे रे। इण " "

आचार्य श्री गुरुदेव काल का विवेचन करते हुए एक कविता फरमाया करते थे —

काल वेताल की धाक तिहुँ लोक मे, देव दानव घर रोल घाले।
इन्द्र नरिंद वाका वड जोध पिण काल की फोज को कौन पाले॥
शील-सतोष अवधिकर मुनिन्दर काल को सांकडे घेर घाले।
जठे जन्म-जरा-रोग-शोक नहीं, जहाँ सुखा मे जाय म्हाले॥

सतो ने कविता मे कहा है कि मानव ! तू तो सोच रहा है कि छोरा-छोरी रो विवाह करू ला, ५० हजार रुपया कवर साहव को दू गा पीछे सोना, रत्न आदि के इस प्रकार के जेवर दूँगा, ऐसा मनसूवा चल रहा है, लेकिन न जाने तेरे जीवन का भी ठिकाना है या नही। मनसूवा पार पडेगा या वीच मे ही रहेगा। किसी के मनसूवे पूरे नही हुए। रावण भी विलखता चला गया, फिर दूसरे की क्या वात है ? यदि तेरे को कुछ करना है तो त्याग-तप कर, शासन की सेवा कर, पापाचार से बच। पाप यदि करता रहा तो याद रख कि मौत की घण्टी एक दिन वजने वाली है, वजकर रहेगो, हम सवको रवाना होना पडेगा। आज दूसरे को रवाना होते देखकर इधर-उधर की वाते कर लेता है—भला आदमी था, चला गया—ऐसा कहकर लोग अपने-अपने काम मे मस्त हो जाते है।

लेकिन याद रखना चाहिए कि यह दिन हमारे लिए भी आने वाला है, दौड़ता जा रहा है। कोई ऐसा नही है जिसे मौत नही आयेगी। आया था मुट्ठी बाँधकर और खाली हाथ चला गया। यदि जिन्दगी दूसरो की निंदा करते-करते वीती, वाते करते-करते रवाना हो गया और समाज और सघ के अहित की वातो मे इधर-उधर मुडा रहा। एक की जिन्दगी दूसरो को विगाडने मे पूरी हुई और दूसरे की जिन्दगी दूसरो को वनाने मे पूरी हुई तो किसका जीवन ऊँचा रहा ? गुरुदेव फरमाते थे कि काल कुटिल है। काल का चक्र जहाँ कही भी चलता है तो हमे उस पर आश्चर्य नही करना चाहिए। किसी मनुष्य पर यदि काल का चक्र चला तो इसमे ताज्जुव करने की वात नही है।

कुछ लोग यह आशा करते है कि हमको देवता वचा देंगे, भैरोजी वचा देंगे, चण्डी या अम्वाजी वचा लेगी। जाप करके आशा की जाती है कि देव शक्ति-वचा लेगी, वात यह है कि समय आने पर देवो को और इन्द्र को भी अपना सिंहासन छोडकर जाना पडता है, तो क्या वे आप का सिंहासन वरावर वरकरार रख सकेंगे ?

जीवन का निर्माण करो

कोई आदमी जो पचायत मे बैठकर फैसला करता है, निर्णय है, किसी से नाराज होने पर वह कहने लगता है कि फला आद ऐसा मजा चखाऊँगा कि वह जिदगी भर याद रखेगा । म्हा अडियो है, एडो पछाडूँला कि उठ नही सकेला । कोई आदमो दूस पछाडने मे राजी होता है तो कोई सत्ता जमाने मे राजी होता है, आदमी दूसरो की निंदा करके राजी होता है । लेकिन साधारण आ भूल जाता है कि हमको क्या करके राजो होना चाहिए । लाखो, क रुपये मिला लिये लेकिन आत्म-साधना नही की, धर्म और सघ की नही की । जिन्दगी का चक्कर आया और रवाना हो गया तो वह आ खाली गया या भरे हाथ गया ? आप मान रहे है, समझ रहे है, कह है, लेकिन हृदय से मान रहे है और जान रहे है या नही ? आप जैसा रहे है उस चीज के वारे मे थोडा सोचना है और यह खयाल करना कि हमे अपनी जिदगी काटनी है । फिर नमूना सामने हो तव तो आद को जीवन मे शिक्षा लेनी चाहिए।

एक वाई ऐसी थी जिसने घर मे कभी मौत देखी ही नही थी अचानक उसका एक टावर वीमारी के चक्कर मे आकर खत्म हो गया टावर मर गया, वोलता नही, हाथ-पैर हिलाता नही, दूध पीता नही । वाई समझने लगी कि वह वीमार हो गया । वह हकीम, वैद्य, डाक्टर के पास गई, इधर-उधर घूमती रही । सवने कहा कि यह तो मर गया । वह कहने लगी कि तुम डाक्टर, वैद्य कैसे हुए जो एक टावर को ठीक नही कर सकते ।

एक समझदार आदमी था उसने सोचा कि इसको महात्मा के पास भेजना चाहिये, वे ही इसको समझायेंगे । पास मे ही महात्मा वुद्ध तपस्या कर रहे थे । उस व्यक्ति ने कहा कि—वह वावा ज्ञानी है वह औपधि देगा, उसके पास जा ।

वह वाई वच्चे को लेकर वुद्ध के पास पहुँची और कहने लगी कि वावाजी ! मेरे यह एक ही वच्चा है जो वीमार हो गया है, वोल नही रहा है, दूध नही पी रहा है, आप इसको अच्छा कर दो ।

वुद्ध ने कहा कि – अच्छा वाई ! एक दवा वनाऊँ वह ले आ ।

उसने कहा—वावाजी ! जल्दी वताओ । वावा ने कहा कि गाँव मे जिस घर मे कभी मौत नहीं हुई हो उस घर से तू थोडे से सरसो के दाने ले

वास्ते दूसरी औरत री व्यवस्था करो। टाबरिया छोटा है। भले ही दुनिया मे हँसी होवे, उणरी परवाह नही। वह सोचे कि मर गई तो मर गई, दूसरी ले आऊँ।

कहने का मतलब है कि ससार मे जुगलियो के अलावा किसी मनुष्य को चाहे वह चक्रवर्ती हो, वलदेव हो, वासुदेव हो, या राजा, महाराजा हो, शरीरधारी को वियोग देखना ही पडता है।

मृत्यु अवश्यंभावी

मौत आए विना नही रहती, सबको मरना पडा है। आपने भी पढा जरूर होगा लेकिन कभी आपने इस बारे मे चिन्तन नही किया। लेकिन सतो ने वडे सत्ता वाले और पूँजी वालो की आँखे उघाडने के लिए कहा कि जो पूँजी पर विश्वास करता है, हवेलियो पर विश्वास करता है या कुर्सियो पर विश्वास करता है उन सवको एक न दिन विश्वास छोडकर जाना पडता है। कवि ने कहा है—

राजा राणा छत्रपति, हाथिन के असवार।
दल बल तजकर चल बसे, अपनी-अपनी बार॥

जिनके पास सेना है, खजाना है, सामने वाला यदि कोई मारने के लिए पिस्तौल लेकर आवे तो उसको पहले ही उडा दे, पर स्वामी पर वार नही होने दे ऐसे सैनिक जिनके सामने खडे है, लेकिन फिर भी काल एक ऐसी शक्ति है जो जव चाहेगा तव आपको उठाकर ले जाएगा।

तीतर को उडाने के लिए वाज को देर नही लगती। वाज और शिकारी पक्षी होते है। सैकडो चिडियो और कबूतरो का झुड हो और कभी-कभी वाज या शिकारी आ जाता है तो सैकडो के झुड वीच मे से जिस चिडिया या कवूतर को उडाना चाहे उसको उडाकर ले जायगा। ऐसा कभी आपने देखा हो या न देखा हो। लेकिन डाक्टरो के वीच मे सोये हुए मरीज को, जिसकी सव तरह से इलाज की व्यवस्था है, आक्सीजन देने की व्यवस्था है, काल सवकी आँखो मे धूल झोककर उठा ले जाता है। एक छोटी सी कडी कहकर मैं अपनी वात समाप्त करता हूँ।

काल की कुटिल चाल

काल की कुटिल चाल भारी रे, काल की कुटिल चाल भारी।
इन्द्र, चन्द्र, नागेन्द्र, सभी का करता संहारी॥

है एक और खोल दूँ और नया बगला बना लूँ। लेकिन अगर दोनो का टाइम आगया और रवाना हो गये तो कौन खाली हाथ जायगा ?

जैसा कि मैंने अभी कहा—काल किसी को बख्शता नही। भला हो या बुरा हो, सबकी एक ही दशा होती है। जिसको विद्वान बनाया उसको गरीब किया और राजा जो अच्छा न्याय करने वाला था उसको अल्पायु बनाया। ऐसे राजा की उम्र तो ओछी रखी और दस नम्बरिये की उम्र ज्यादा कर दी। इसलिए कवि ने कहा है कि ससार मे इस काल की कुटिल चाल है। इस चाल को कोई भी अपने वश मे कर सकता है क्या ? वश मे करने का कोई उपाय है क्या ?

बुद्धिमान कौन

बुद्धिमान वह है जो आगे चलने वाला ठोकर खाकर गिर जावे तो पीछे वाला सभल जावे और फिर रास्ते की ठोकर नही खावे।

एक आदमी बचकर निकल गया और दूसरा ठोकर खा गया तो यह कहना कि मै बुद्धिमान और दूसरा मूर्ख है, इस तरह की बात कोई कहता हुआ चल रहा है और आगे गड्ढा आया और उसमे गिर गया तो वह अपने आप जिंदगी मे कितनी हँसी का पात्र बन गया ?

इस काल की चाल बेढब है। बुजुर्ग दादा या बाप बैठा है और पोता या लडका चल बसता है। ऐसे कई प्रसग देखे होगे। बडे-बूढे लोगो को मालूम होगा कि हमारा जीवन कितना क्षणभगुर है। इसलिए सत कहते हैं कि—

> खबर नही है जग मे पल की रे, खबर
> सुकृत करणा हो सो कर ले, कुण जाने कल की।
> तारामण्डल रवि चन्द्रमा, सभी चलाचल की।
> दिवस चार का चमत्कार है, बीजलिया भल की।

मृत्यु निश्चित है

इस नगर की अभी की ताजी घटना भी अपने सामने है। क्या जाने वाला आदमी ऐसा समझकर चल रहा था और समाज ऐसा सोचकर चल रहा था या उसके परिवार के लोग ऐसा सोच रहे थे कि हमारा साथी रवाना हो जायगा। वह सोच रहा था कि महाराज शहर मे आयेगे और मै उनकी सेवा मे लगूगा। बैगलोर से लेकर यहाँ तक कोई गाँव ऐसा नही छोड़ा होगा, जहाँ पर उसने सतो को नही सभाला हो। सर्दी हो, गर्मी हो, रात हो, दिन हो, रात मे आया, दिन मे आया,

सुबह आया। मन मे उमग क्या रखता था, सोचता था कि मेरे पिता की तमन्ना थी कि मद्रास मे गुरु महाराज पधारे। आज सन्त पधार गए है तो दिल खोलकर कुछ करूँगा। घरवाले कहते, सत कहते कि भडारीजी जरा सामायिक करना शुरू करदो तो कहता कि महाराज साहुकार पेठ मे पधारेंगे उस दिन मे सामायिक करना मैं शुरू कर दूँगा। लेकिन किसको पता था कि काल की चाल कुछ और ही है।

लेकिन इतनी वात जरूर है कि जाने वाला जाता है, टाइम आया तव वह गया और आपको और हमको जव टाइम आयगा तव जाना है, यह निश्चित है इसमे शका की कोई वात नही है। जाना निश्चित है, इस वात को जानकर सोचना यह है, करना यह है कि जव जिन्दगी इतनी चचल है, हथेली मे भरे हुए पानी को खाली होने मे टाइम लग सकता है। पुराने जमाने मे एक टोपसी हुआ करती थी उसमे पानी भरा जाता और पीछे वूद-वूद करके खाली होता था। पुराने जमाने की रेत की घड़ियाँ आपने देखी होगी। उनमे रेत ऊपर से नीचे के हिस्से मे गिरती थी और पूरे गिलास को खाली होने मे एक घडी का समय लगता था। पाँच मिनट मे रेत को गिराना चाहे तो नही गिरती। आपकी जिन्दगी की मुद्दत हथेली के पानी जितनी या रेत की घडी की रेत गिरने जितनी भी है क्या? फिर किसका भरोसा करके बैठे हो? वहुत वडे-वडे मनसूवे करते हो, वाते करते हो, इधर-उधर की वाते सोचते हो।

दुनिया मे कहावत है कि हम चौडे और गली सकरी। वहुत से लोगो को लाखो मिल गए पर सतोप नही हुआ। यह जानते हो कि धन रोग और शोक दोनो का घर है जवकि धर्म रोग और शोक को काटने वाला है।

आप मे से अनेको जाने माने अच्छे लोगो का परीक्षण करने के लिए पूछूँ कि आपके शरीर मे कोई वीमारी तो नही है, व्लड प्रेसर, सुगर या हार्ट की वीमारी तो नही है? तो कितने सेठजी ऐसे मिलेगे जो कहेगे कि हाल तक तो आपरी कृपा सू कोई रोग नही है, वचा हुआ हूँ।

इसलिए ससार के वैभव और धन-सम्पत्ति मे न उलझकर धर्म पक्ष की ओर वढना चाहिए। जाने वाले भाई की असमय मे ही घटना घट गई। इससे हर भाई और वहन को नसीहत लेनी है। उनके परिवार वालो को और समाज वालो को भी नसीहत लेनी है। आपको भी शासन की सेवा करने मे जीवन लगाना है। अपने साधनो का कुछ सदुपयोग

मवितरण करना है। जिन्दगी को एक न एक दिन जाना है। इससे डरने की बात नही है, लेकिन जाना है कुछ करके, खाली हाथ नही जाना है। समय आयेगा तब आपको पलग के नीचे डाल दिया जायेगा। तिजोरी छूट जायगी। जिस तिजोरी मे से कुछ निकालकर समाज सेवा के लिए नही दिया, उस तिजोरी के कारण दस-बीस व्यक्तियो से बैर जरूर बढाया, लेकिन काम कुछ नही किया। इसी तरह चले गये तो पछताते रहोगे। धर्म करके गये तो जाना सार्थक होगा।

कल्याणार्थी बन्धु इन चीजो को ध्यान मे लेकर अपने साधनो का सदुपयोग करेगे तो जीवन सार्थक होगा और अजर अमर बन जायेगे।

मिन्ट स्ट्रीट, मद्रास
(दिनाक २८-७-८०, समय ६ ४५ प्रात)

पहला शब्द है "सुय मे" सुधर्मा कहते है कि मैंने सुना है, भगवान से सुना है। अगल-वगल से नही सुना क्योकि अगल-वगल से सुनने मे फर्क पड जाता है। एक तो सीधा आप मेरा व्याख्यान सुने और दूसरे आपके द्वारा घर वाले सुने, इसमे फर्क है। यद्यपि आप सुनकर आये है फिर भी कहते समय आप पूरी वस्तु कह नही सकेगे। इसका पूरा लाभ मिले न मिले, कदाचित कम-वेसी हो जाये, इसलिए सीधा सुनने मे यथेष्ट एव स्पष्ट ज्ञान होता है। इसलिए सुधर्मा कहते है—"सुय मे" मैंने सुना। "आउस" हे चिरजीव शिष्य! आयुष्यमान शिष्य! "तेण भगवया एवमक्खाय" उन भगवान महावीर ने ऐसा कहा, जो मैंने सुना और तुझे सुना रहा हूँ।

सुधर्मा जम्बू से यह वात कह रहे है। जम्बू वडा गद्‌गद हो रहा है, भगवान से सुनी हुई वात गुरुदेव मुझे सुना रहे है। यो तो गुरुदेव खुद अपनी वात कहते तो भी वह मेरे लिए आदर की वात थी। लेकिन गुरुदेव ने कितनी कृपा की कि भगवान के चरणो मे बैठकर जो वात प्रत्यक्ष भगवान के श्रीमुख से सुनी है वह मुझे सुना रहे है। गुरुदेव की इस कृपा पर जम्बू गद्‌गद् हो रहे हैं, आदर कर रहे है और ध्यान से सुन रहे है।

यह प्रारम्भ का सूत्र है जिसको जम्बू स्वामी वडे ध्यान मे सुन रहे है। क्यो ध्यान से सुन रहे है? इसलिये कि भगवान के श्रीमुख से सुनी हुई वात मुझे गुरुदेव सुना रहे है। जैसे सुधर्मा के कथन को जम्बू वडे ध्यान मे सुन रहे है वैसे ही सुधर्मा की वाणी के भाव मैं आपको वताऊँ तो आपके लिए भी यह मुद्दे की वात ध्यान से सुनने की होगी।

भगवान महावीर का स्वरूप

पहली वात तो कह दी उसकी जिज्ञासा क्या होगी जो यह नही समझ पा रहा है कि वे भगवान कैसे थे तो सुधर्मा समवायाग सूत्र की एक एक वात कहने मे पहले चाहते है कि भगवान का स्वरूप वता दूँ। भगवान का स्वरूप क्या है? पचासो भाई-वहन इस पाठ को रोज वोलते हैं वह पाठ है "नमोत्थुण अरिहताण भगवताण।" यहाँ पर तृतीयात पद से यह वतलाया जाता है कि कैसे भगवान महावीर ने द्वादशागी का ज्ञान दिया। वह पाठ इस प्रकार है—

इह खलु समणेणं १ भगवया २ महावीरेणं ३ आइगराण ४ तित्थयराण ५ सयसबुद्धाण ६ पुरिसुत्तमाण ७ पुरिससीहाण ८ पुरिसवरपु डरीयाण ९ पुरिसवर गंध हत्थीण १० लोगुत्तमाण ११ लोगनाहाण १२ लोगहियाण १३ लोगपईवाण १४

दु ख-मुक्ति का मार्ग

दु ख-मुक्ति का रास्ता क्या है, बात आपके पकड़ में पूरी नही आई होगी। दु ख-मुक्ति का रास्ता यह है कि हित-मार्ग को जानो, पहचानो, पकड़ो और तदनुकूल आचरण करो। हित-मार्ग क्या है पहले तो उसको समझो, समझकर मन मे पकडो और पकडकर आचरण करो।

भगवान की इतनी वडी दया है और इतने वडे ससार पर उनकी कितनी करुणा है। वे श्रमण है यह दूसरा अर्थ हुआ। समवायाग सूत्र मे कहा कि वे तपस्वी है और पवित्र जीवन वाले है, उत्तम उनका मन है। उनके मन मे गुदलापन नही है क्योकि गुदलापन हो तो तप करना, जप करना, साधना करना, सेवा-भक्ति करना, ये सारे के सारे बेकार हो जाते है, वास्तविक फल देने वाले नही होते। श्रमण का कैसा रूप है? फिर कहा "तेण भगवया"।

एक श्रमण है लेकिन अतिशय ज्ञानी नही है क्योकि श्रमण तो साधारण साधु को भी कहते है। हम लोग क्या श्रमण नही है? श्रमण ५ प्रकार के वताये है, अभी मै लम्वी व्याख्या नही करूँगा। यदि भेद-प्रभेद कहूँ तो विपय लम्वा हो जायेगा, आपको याद नही रहेगा।

जो साधक त्रस-स्थावर जीवो पर समभाव रखने वाला होता है, उसके मन मे आकुलता-व्याकुलता और विपम भाव नही होते वही श्रमण कहलाने का अधिकारी है, उसको समन कहते है।

मेरे कहने का मतलव यह है कि श्रमण साधारण साधु भी हो सकता है तो क्या वह भी भगवान जैसा ही है? तो कहा कि नही, "तेण भगवया" महावीर श्रमण-तपस्वी और भगवान भी है।

भगवान शब्द के अर्थ

भगवान का क्या मतलव, 'भग' के शब्द अनेक अर्थ होते हैं। लेकिन यहाँ कहा कि भगवान ज्ञानवान है। जिनमे विशेप प्रकार का ज्ञान है उनको वोलते है भगवान। जो ऐश्वर्य का धनी है, सम्पूर्ण ज्ञानवान है, तपस्वी है ऐसे श्रमण भगवान महावीर है। इस प्रकार सुधर्मा ने अपने प्रिय शिष्य जम्बू को उद्वोधित करते हुए कहा। उससे जबू का मन हर्प की लहरो से किलोलें करने लगा। जिज्ञासा वढने लगी। गुरुदेव आगे क्या फरमायेंगे, इसको वह आतुर होकर सुन रहा है। न नींद आती है, न ध्यान दूसरी तरफ जा रहा है, न आँखें झपक रही है, अपलक पी रहा है, आगे गुरु महाराज क्या कहेगे?

भगवान के विशेषण

भगवान के लिए तीन विशेषण आये है। सुधर्मा कह रहे है कि श्रमण भगवन् महावीर ने ऐसा कहा है—यह कहकर वे जिज्ञासा पैदा कर रहे है। क्या कहा यह सामने नही आया, इसलिए जबू अपलक देख रहा है और सोच रहा है कि आगे क्या कहेगे, हमारे श्रोता भी ऐसे होने चाहिए, महाराज आगे क्या कहेगे, इस ओर ध्यान होना चाहिए। ऐसा नही है तो आगे की वात को पकड नही सकेगे। ऐसे जिज्ञासु और ज्ञानपिपासु श्रोता होगे तो कहने वाले को भी मन की वात और शास्त्र की गहराई की वात कहने मे आनन्द आयेगा।

तीसरा विशेपण दिया "महावीर"—श्रमण, भगवान और महावीर। पहले तो वीर होना मुश्किल है। तलवार घुमाने वाले या लकडी चलाने वाले वहुत होगे। किसी ने एक कडवी वात कहदी तो उसको वापिस दस सुनाने वाले वीर तो मेरी सभा मे वहुत मिल जायेगे। ऐसे को कहते है —'वाग्वीर'। वाग्वीर उसको कहते है जो वोलने मे सूर है। ऐसे भाई-वहन कई मिलेगे जो घर मे जायेगे तो वोलने मे घर को ऊँचा उठा देगे, थानक मे जायेंगे तो थानक गुँजा देगे और वाजार मे जायेगे तो २५ आदमियो जितना काम कर जायेगे, इतना शोर करेगे। इस तरह का आदमी वाग्वीर होता है, और एक कर्मवीर होता है। कर्मवीर का मतलव है कार्य करने मे वीर।

वाग्वीर मकान के चारो ओर वोलता ही जायेगा। ऐसी दो वहने परस्पर झडप वाली हो तो मोहल्ले की सुस्ती उड जावेगी। ऐसे मे इर्द-गिर्द की शान्ति उडने वाली है या रहने वाली है? आगे को। आज वाग्वीर नही चाहिए, कर्मवीर चाहिए। दुनिया मे समाज मे और सघ मे कैसे वीर की आवश्यकता है? हमको वाग्वीर नही चाहिए, जरूरत है कर्मवीर की। कर्मवीर परिवार, समाज और सघ का गौरव वढा सकते हैं। कर्मवीर कर्म काटकर जन्म-मरण से मुक्त हो सकते है।

वीरों के अनेक प्रकार

यो तो कई प्रकार के वीर हैं, दानवीर, धर्मवीर, कर्मवीर आदि। आप लोगो को सुस्ती आरही है, लम्बी वात नही कहूँ। इसलिए वता रहा हूँ कि इस सूत्र में शास्त्रकार ने कहा है कि चार प्रकार के वीर है। एक तो जो कर्म का छेदन करे, जो तप की शक्ति से सम्पन्न हो वह

वीर कहलाता है। जिसके पास तपस्या की ताकत होगी वह खुद के वन्धन काटेगा ओर दूसरो को क्लेश से छुट्टी करायेगा।

लेकिन वीर, वोर मे फर्क है। वीर भी दो तरह के होते है। एक लौकिक वीर और एक लोकोत्तर वीर।

ये लौकिक वीर

आप मे से कई अच्छे व्यवसायी मारवाड से दक्षिण मे आ गये और यहाँ आकर लाखो की निधि पर हाथ फेरते हैं। सुवह घर मे भोजन किया, शाम को कही दूसरे ठिकाने किया, न सोने का पता है, न जागने का, दिन-रात घूमने के चक्कर मे रहते है। कभी समुद्र मे रहते है तो कभी आसमान मे उडते हैं तो कभी जमीन पर रेगते है। कितनी ही मिनिस्टरी वदल जायेगी लेकिन माई का लाल कहता है कि मुझे कोई खतरा नही। जो कोई आयेगा उससे निपट लेगे। सवकी वात जानता हूँ। ऐसे साहसी आदमी भी है। सहसा इन्कमटैक्स वाला या पुलिस का आदमी आ गया, सर्कल इसपेक्टर आ गया तो कहता है कि आने दो, इनको भी चटनी-चूरण चाहिए। किसी ने माल पर कब्जा कर लिया, जहाज रोक लिया तो भी कहता है कि कोई परवाह नही। कही पर अपील हो रही है, कही वकील किया जा रहा है। इस प्रकार का भयकर साहस रखने वाले आदमी भी है।

छोटे-मोटे व्यवसायी के व्यवसाय मे धक्का लग जाय, दस वीस हजार का टोटा लग जाय तो आजकल दिल की धडकन वढ जाय ऐसी दशा हो जाती है। पहले के जमाने मे वुखार आना भी मुश्किल था। सोचता था कि सर्दी मे ठण्ड लग जायगी उससे वचना चाहिए। कोई अपनी हवेली मे वैठा है, इधर-उधर की वात सुनी लेन-देन की उससे दिमाग का सतुलन खो दिया और क्या नही हो जायगा। आज ससार मे यह क्या तमाशा हो रहा है। इसका मतलव यह है कि आज के लोगो को जीवन जीना नही आता।

अनासक्त वनो

महावीर कहते हैं कि करोडो की सम्पत्ति मिली है तो तू उसके वीच मे उस तरह से रह, जिस तरह से भाग और अफीम का ठेकेदार रहता है। ठेकेदार भांग और अफीम का वहुत वडा स्टाक रखता है। भांग और अफीम के थैले भरे हुए रखे हुए है और वह उनके ऊपर वैठा

है। डोडियो के भाड भरे हुए रखे है। एक आदमी दस वीस डोडियो को घोटकर पी जावे तो उसका खेल खत्म हो जाय। लेकिन ठेकेदार भाग और अफीम के थैलो की गड्डी वनाकर वैठा है, उसको नशा आयेगा क्या ? नही, किन्तु उसी दुकान से एक भाई मुट्ठी भरकर भाग ले गया और घोट कर पी गया। एक ने चार दिन पिये जितनी भाग की गोली वनाई उसमे चार वादाम डाले और घोट कर पी गया, काई हो गयो ? शोर मच जायगा। ऐसे ही धन के वीच अनासक्त रहने वाला चिंतित नही होगा। किन्तु जो माया का नशा कर लेता है उसको शान्ति नही होगी।

आज मानव की लाखो करोडो रुपया पाकर भी भूख नही जाती। लाख के दो लाख हुए, दस लाख हुए, वीस लाख हुए वडा प्रसन्न होगा, आसक्ति वढेगी लेकिन दान-पुण्य करने का नाम नही लेगा।

भगवान महावीर ने वतलाया कि प्रदेशी जैसा राजा नास्तिक था, शरीर और आत्मा को एक मानने वाला था, लाखो लोगो की हत्या करा दी लेकिन उसको केशी महाराज का उपदेश सुनने को मिला तो उसने जीवन की धारा वदली और उसने कह दिया कि राज्य की संपत्ति के चार भाग किए जायँ। मेरे लिए कुछ नही रहेगा। आमदनी मे से एक भाग खजाने मे जायेगा, एक भाग नगर और राज्य की व्यवस्था के लिए खर्च होगा, एक भाग रणवास मे और एक भाग शुभ कार्यो मे खर्च होगा—दानशाला के लिए।

यह वात आज के महाजन वन्धुओ को ज्ञात है क्या ? लाख मिले तो गटक, दो लाख मिले तो गटक। गटका करणा जाणे है लेकिन

वह खारा है परन्तु आपका मन खारा नही होना चाहिए। आपका धन नदी की धारा की तरह मीठा रहे।

मैं शास्त्र के माध्यम मे कह रहा हूँ। शास्त्रकार बता रहे है कि राजा प्रदेशी ने अपनी सम्पत्ति के चार भाग किये जिसमे से अपने लिए कुछ नही रखा और एक भाग शुभ कार्यों मे खर्च करने को रखा। क्या आप मे से किसी का मन इस तरह का होगा? गवर्नमेन्ट ने तो रास्ता निकाल्लिया है, आपने मौका दियो है लेकिन फिर भी आप सू होवे काई? यदि प्रदेशी की बात सुनकर भी आपमे से कोई ऐसा है जो यह कहे कि सौ रुपये कमाऊँगा तो उसमे से पाँच रुपये शुभ कार्यों के लिए विसर्जन करूँगा या खर्च करूँगा। यदि इन्कम के पीछे पाँच या दस टका इतना भार हल्का करने को मन मे आवे और आसक्ति और राग कम हो तो मैं कहता हूँ कि आसक्ति कम होते ही आपका रोग और शोक भी कम हो जायेगा।

धन के ट्रस्टी बनिये

ससार मे जीवन भी चलता है, मरण भी चलता है लेकिन जीवन और मरण के साथ जरासी चितन करने की बात आती है। अपमौत क्यो होती है? छोटी मौत क्यो होती है? विदेशो मे छोटी मौत होने पर अनुसधान करेगे, कारण का पता लगायेंगे, वैज्ञानिक पता लगायेंगे कि कैसर क्यो हो गया? आपने भी कभी चिन्ता की है कि हमारे श्रावको के घरो मे ज्यादा रोगी क्यो होते है? धन बढने के साथ-साथ चिन्ता बढने से रोग भी अधिक बढता है, इसलिए क्या आप लोग भी यह समझेंगे कि जो धन मेरे पास है वह मेरा नही है, मैं तो एक ट्रस्टी की तरह हूँ, सरक्षक हूँ। समाज और शुभ कार्यों मे मुझे पैसा लगाना है। इसमे से मेरा कुछ नही है। यदि ऐसी धारणा बन जाय तो क्या हो जाय? सब रोग शोक दूर हो जायें। लेकिन आपको इसके लिए साहस करना होगा। एक आसामी फेल हो जाय जिस पर आपका रुपया बाकी है तो आपका मन बर्दाश्त कर लेता है, ऐसा ही सोचना चाहिए।

धन : समाज की सेवा के लिए

हमारे आचार्यों ने कहा कि जैन कुल में किसी तरह का व्यसन नही होना चाहिए। अपने धन पर और जन पर अधिक ममता नही होनी

चाहिए। सदा सच बोलना चाहिए और यह सोचना चाहिए कि वह दिन धन्य होगा जिस दिन अपने परिग्रह मे से थोडा दान शुभ कार्यो के लिए निकालूँगा। जो कुछ मैं कमाई कर रहा हूँ, वह अपने परिवार के लिए कर रहा हूँ, इसमे मेरे लिए कुछ नही है। ममता हटाकर इसे सद्मार्ग मे व्यय करूँ। मेरे हाथ से जैसा मिलाने मे पाप होता है उसी तरह से योग्य मार्ग मे लगाने का पुण्य भी मेरे हाथ से हो।

आपके बुजुर्गो मे से कई करोडपति, अरबपति थे। एक-एक ऐसे हो गये जैसे भामाशाह के सामने प्रश्न आया, राणा कहने लगे कि मेवाड की आजादी कैसे रहेगी जबकि खजाना खाली हो गया है, लोग भूखो मरने लगे है। तब भामाशाह ने कहा कि आपके लिए चिन्ता करने की कोई बात नही है। मेरा खजाना खुला है, बारह वर्ष तक मेवाड के लिए खर्च करे जितना धन मेरे पास है। आप उसका सदुपयोग कीजिए।

यह कब हो सका ? भामाशाह के पास सम्पत्ति थी लेकिन वे सपत्ति पर भाग के ठेकेदार की तरह बैठे थे, उन्होने समझा था कि यह मेरा नही है, राष्ट्र और समाज के हित के लिए है।

एक बार नौकोटि मारवाड के नरेश के सामने प्रश्न आया कि मारवाड़ के लिए खर्च की कुछ व्यवस्था करनी है, खजाने मे पूँजी नही है। उन्होने सोचा कि सेठ लोगो से बात करे। तब रीया के एक सेठ बोले कि कि सबसे बात करने की कोई आवश्यकता नही है। मेरे पास इतना धन है कि जोधपुर से रीया तक धन से भरे हुए छकडो की लाइन बाँध दूँगा। आपके बुजुर्ग ऐसे हो गये है जिन्होने राष्ट्र, सघ और समाज के लिए जब वक्त आया तब अपना धन पानी की तरह बहाया।

इमारत का काम करने वाले कारीगरो ने जब देखा कि फर्श पर गिरे हुए तेल के टपके को उठाकर सेठजी अपनी जूती पर लगा रहे है तब उनको शका हुई कि ऐसे कजूस सेठजी इमारत क्या बनवाएँगे ? जब कारीगरों की बात सेठ के कानो पर पहुँची तब सेठजी ने कहा कि कारीगर साहब नीव मे चादी की ईटे भरो। सोने की ईटो से भी नीव भरो तो भी कोई चिन्ता की बात नही है, भवन अच्छा होना चाहिए। सेठ की बात सुनकर कारीगरो को ताज्जुब हुआ।

आपके बुजुर्ग ऐसे दानवीर, कर्मवीर और क्रियावीर हो गये है क्योकि उन्होने समझा था कि प्रदेशी की तरह हमने आज तक जो

कमाया है वह हमारा नही है। प्रदेशी दान कर रहा है, तप कर रहा है, सवर साधना कर रहा है और मनोविजय भी कर रहा है। सामायिक, पौषध, सवर आदि निज के कर्म काटने के साधन है।

दान के द्वारा समाज के योग्य क्षेत्र मे सवितरण किया जाता है। दान करने वाले का पैसे पर ममत्व कम रहेगा, तो शोक-सताप कम होगा, बीमारी कम होगी।

अभी-अभी सेठ जी ने कहा कि सार्वजनिक कार्यों मे खर्च करने पर सरकार भी करो मे छूट देती है उसका उपयोग नही किया तो पूँजी पाँच लाख से दस लाख बढ गई तो सरकार को टैक्स देना पडेगा। टैक्स देते समय वकीलो से आप लोग कहते है कि दस बीस हजार लेना है तो ले लो, दे दो, किन्तु हिसाब साफ करवा दो। लेकिन सामने वाला अधिकारी कठोर मिल जाय तो सेठजी के हिये का पखा दब जायेगा। जव आ बात मालूम पड जाय कि अपारी वही रा कागजात अधिकारियो के हाथ मे आ गया है तो सेठजी का दिमाग फेल होने लग जायगा।

एक सेठ जी की गुप्त डायरी और कागजात गुम हो गये तो सेठ जी का दिमाग फेल होने लगा और कहने लगे कि मै तो मर जाऊँला, कागजिया हाथ मे दूसरो रे आ गया तो पीछे म्हारी मौत आ गई। तिजोरी पकड मे आ जाय और कुछ रकम सरकारी आफीसर पकडले तो लाख दो लाख रो माल ही ले जावेला। लेकिन कागजात हाथ मे आ गया तो मेरे पीछे कई मुकद्दमे लग जायेगे, गलत तरीके से पैसे मिलाने के अपराध लागू हो जायेगे और इज्जत चली जायेगी। इसलिए पैसे मे ज्यादा कागजो की अहमियत है। अत हर तरीके से कागजो को प्राप्त करने का प्रयत्न किया जाता है।

समय-विभाग आवश्यक

हर भाई-वहन को खयाल करना चाहिए कि मेरे घर मे रोग क्यो अधिक होता है? इसका कारण यह है कि धन, परिवार, जमीन और जायदाद पर आसक्ति ज्यादा है। इस आसक्ति का नतीजा क्या होगा कि दिमाग चचल होगा, मन आकुल-व्याकुल होगा। इस आकुलता-व्याकुलता से छुटकारा पाने का सीधा रास्ता यह है कि समय का विभाग करके पावन्दी करो, ज्ञान वढाने का प्रयत्न करो। ज्ञान का वल आयेगा

और आर्त, रौद्र ध्यान मे नही पडेगे, इधर-उधर की व्यर्थ की वाते वढाने मे नही रहेगे तो आत्मा मे शान्ति रहेगी। सुवह से शाम तक धन्धे मे लगे रहते है, तन-मन विगड़ेगा, परिवार कमजोर होगा। इसलिए टाइम पर काम करने की आवश्यकता है। हमारे नागरिक वन्धु और जैन कहलाने वाले व्यवसायी विगड़े तन से काम करते है लेकिन विगडा हुआ स्वास्थ्य होता है तो काम वरावर नही होता।

अभी सैकडो लोग सामायिक मे वैठे है लेकिन कभी सुवह से शाम तक ऐसे ही रहना पड़ा तो आपका स्वास्थ्य वरावर नही रहेगा। आपके वुजुर्ग लोग खाने-पीने की चीजो को मर्यादा करके चलते थे। भोग की सामग्री से वचते थे उसमे उनका स्वास्थ्य ठीक रहता था और मानस भी ठीक रहता।

पुराने जमाने के लोग वडे-वूढो के सामने अपने वच्चो को गोद मे लिए नही फिरते थे। वच्चा वीमार हो गया तो उसका फिक्र दादा को होता था। वच्चे के पिता को परवाह भी नही होती। दादा परेशान है लेकिन वाप परेशान नही है। दादी कहती कि वच्चा ज्यादा वीमार है, मर जायगा, भैरोजी या माताजी के ले जाओ। घर का रत्न चला जायगा। लेकिन वुजुर्ग कहते कि घर मे डाक्टर, वैद्य को वुलाकर उपचार कराओ, मैं देवी-देवताओ के पास नही जाऊँगा। ऐसे-ऐसे लोगो को भी देखा है। वाप कहता कि वा गा जैसा चाहे वैसा करे।

जिस व्यक्ति की ममता कम होगी वह आदमी दु ख मे भी विचलित नही होगा। प्रियजन का वियोग होने पर भी हाय हाय नही करेगा। उसका हार्ट नही धडकेगा। जिसका खान-पान सयम का है और हर्ष और शोक मे ज्यादा नही पडता है तो उसको व्लड प्रेसर की वीमारी भी कम होगी।

किसी ने अच्छा पिक्चर देखा और खुशी से नाचने लगा तो रक्त-चाप वढ जायगा और धीरे-धीरे रोग का शिकार होगा। इससे मुक्त होना है तो तन से, मन से आसक्ति कम करो।

एक वात याद रखिये कि वाग्वीर मत वनिये, कलहवीर मत वनिये। कर्मवीर वनिये, दानवीर वनिये, क्षमावीर वनिये, धर्मवीर वनिये। ऐसे वीर वनेंगे तो कल्याण प्राप्त होगा। जो कुछ करेंगे, मन से करेंगे।

प्रदेशी की तरह आप भी अपनी आय मे से ५ टका या १० टका शुभ कार्य मे लगाने का सकल्प करे।

इस एक बात को भी पकड़ कर चलेगे तो मैं समझूंगा कि आज के व्याख्यान का फायदा होगा। नही तो इधर मैंने कहा और उधर आपने निकाल दिया तो कोई फायदा होने वाला नही है।

मद्रास
(दिनाक २९-७-८०, समय ९-४५ प्रात)
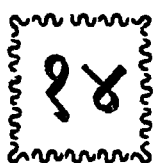
उन्नति का मू : सं ल्प-बल

प्रार्थना

जो देवाण वि देवो ज देवा पजलि नमंसति ।
त देव-देव महिय, सिरसा वदे महावीर ।।
एगो वि नम्मुकारो, जिणवरवसहस्स वद्धमाणस्स ।
ससार-सागराओ तारेइ नर व नारि वा ।।

धर्मप्रेमी वन्धुओ !

परम वीतराग, परम उद्धारक जिनेन्द्र भगवान वीतराग को वन्दन करने के वाद उनका आदर्श जोवन ससार के जीवो को वहुत वडे कल्याण के मार्ग मे आगे वढने मे एक सहायक कारण माना गया है ।

वीतराग की भक्ति से लाभ

महर्षियो ने अनुभव करके कहा

वीतराग स्मरन् योगी वीतरागत्वमाप्नुयात् '

सिद्धान्त रूप से यह सही है, विल्कुल सही है कि जिनेन्द्र प्रभु हमारा कल्याण नही करेगे । हमारा कल्याण हमको स्वय करना है । जिनेन्द्र भगवान राग और रोप से सर्वथा रहित है । वे एक पर राग करना और दूसरे पर रोष करना नही जानते । उनमे यह वाह्य कर्तृत्व नही है, तव भी इस वात को मानने मे आपको जरा भी सशय नही करना चाहिये कि चाहे वे करे या न करे फिर भी भक्त को, श्रोता को, ध्याता और चिन्तन करने वाले को वीतराग के स्मरण से महान् अतिशय लाभ प्राप्त होता है ।

एक लाभ तो प्राप्त होता है किसी के देने पर और एक लाभ प्राप्त होता है, सहज स्वय के पुरुषार्थ से। यह उसके चिन्तन करने, ध्यान करने और स्मरण करने से सहज प्राप्त होता है, उसको कहते है सहज प्राप्त।

जैन दर्शन वीतराग देवाधिदेव से इस प्रकार सहज प्राप्त होने वाला लाभ स्वीकार करता है।

दूसरे दर्शन वाले अपने देवो को वन्दन करते समय यह सोचते हैं कि वन्दन करेगे तो हमको प्रभु कुछ देगा। प्रभु हमारे पर प्रसन्न होगा, हम पर कृपा करेगा। उनकी कृपा से हम ऊँचे चढेगे। जहाँ दूसरे दर्शनो का ऐसा मतव्य है वहाँ हमारे जैन दर्शन का मतव्य है कि देवाधिदेव यदि सब देते, लेते और कृपा करते तो कृपा के पीछे कारणान्तर से अकृपा भी मानना पडेगा। कृपा के साथ अकृपा भी रहेगी। महाराज! मेरे पर मेहरबान है। यदि आज मेहरबान है तो कभी अमेहरबान होने की भी सभावना रहेगी। ये दोनो शब्द सम्बन्धित है, परस्पर सापेक्ष हैं। छद्मस्थ के लिए तो राजी और नाराज शब्दो का प्रयोग हो सकता है लेकिन वीतराग के लिए ऐसे शब्दो का प्रयोग नही हो सकता।

भगवान का स्वरूप

वे क्या है, इसके लिए सुधर्मा स्वामी ने समवायाग सूत्र की प्रारम्भिक भूमिका मे कहा कि वे द्वादशागी वाणी को कहने वाले हमारे जिनेन्द्र देव कैसे है, जब तक तुम उनके स्वरूप को नही समझ लो तब तक तुम्हारे मन मे इस द्वादशागी वाणी पर वास्तविक श्रद्धा नही होगी। वचन की महिमा वक्ता की योग्यता पर आधारित होती है। आप चाहे अहिंसा और सत्य की बात चौराहे पर बैठकर कहने लगे लेकिन यदि आप के व्यवहार मे, आचरण मे एव चिंतन मे वह सत्य और अहिंसा घुले नही है, साक्षात्कार नही हुआ इसलिए आपकी वाणी मे सत्य और विचारो मे प्रेरणा होते हुए भी उस प्रेरणा को सामने वाला मान सके इतनी क्षमता और प्रभाव उनमे नही होगा।

भगवान के गुणनिष्पन्न विशेषण

सुधर्मा ने अगशास्त्र का वाचन देते समय तीन विशेपणो से कल भगवान महावीर के बाबत विचार किया। तीन विशेपण "समणे भगव महावीरे" देने के उपरान्त सुधर्मा स्वामी ने द्वादशागी वाणी का कथन

किया है। भगवान के लिए तीन विशेषण दिये गये है। आपको 'नमोत्थुण' का पाठ याद है, जिसका दूसरा नाम शक्रस्तव' है। उसमे भगवान को इन शब्दो मे शक्र द्वारा नमस्कार किया गया है, 'नमोत्थुण अरिहताण भगवताणं आइगराण।

अब यहाँ पर आइगराणं इस शब्द से आगे पर विचार करेगे। इससे पहले 'अरिहताणं' शब्द आया है उस जगह समवायाग सूत्र के पाठ मे समणे शब्द है। राग-द्वेष रूपी विकार जिसके मन से निकल गये उनके मन मे कालिमा हो सकेगी क्या ? गुदलापन हो सकेगा, क्या उसका मन दुर्मन हो सकेगा ? नही, कभी नही। तो इस शब्द का दूसरा रूपान्तर है 'सुमन'। सुमन के ही अर्थ मे 'श्रमण' शब्द है। 'अरिहताण' जहा शक्रस्तव मे कहकर बताया है उसका अर्थ है निर्मल। उस जगह यहाँ कहा 'श्रमण'। विकार जिनके मन से निकल गये वे श्रमण है, सुमन है।

दूसरा विशेषण 'भगवया' कहा गया वहाँ नमोत्थुण मे आप बोलते है 'भगवताण'। वे ज्ञानवान है। ज्ञानवान होकर ससार के लिए उन्होने क्या किया ? उसके लिए उनकी यह वाणी हमारे सामने है। दूसरे शब्दो मे कहा—'आइगरेण, तित्थयरेण, सयसबुद्धेण, पुरिसुत्तमेण, पुरिससीहेण, पुरिसवर पुडरियेण, पुरिसवरगधहत्थीण' ये सात विशेपण दिये गये है जिनके बारे मे परिचय के रूप मे आज आपको विचार करना है।

सुधर्मा कह रहे है कि हे जम्बू ! मै जिनसे सुनी हुई बात तुमसे कह रहा हूँ वे कोई साधारण व्यक्ति नही थे। वे ज्ञानवान होने के साथ-साथ आचारवान भी थे और 'महावीर' शब्द उनके साथ लगा हुआ है, वे धर्मतीर्थ की आदि (प्रारम्भ) करने वाले है इसलिए चौथा विशेषण उनके लिए है 'तित्थयराण'। 'तीर्थकरेण' यह सस्कृत रूपान्तर है। प्राकृत रूपान्तर है 'तित्थयरेण'। ये तीर्थ की स्थापना करने वाले है।

पहले विशेषण मे 'आइगरेण' क्यो कहा अथवा आदिकर क्यो कहा ?

भगवान महावीर तीर्थ के आदिकर कैसे ?

धर्म के दो भाग है। एक धर्म है श्रुतधर्म और दूसरा है चारित्र-धर्म। एक तीर्थंकर के बाद दूसरे तीर्थंकर हुए। पहले पहल जो श्रुतधर्म की शुरुआत करते है, शास्त्रवाणी की हमारे सामने अमृत वर्षा करते है, उनको तीर्थंकर कहा गया है। श्रुत के जो

निधान हैं, खजाना है, उससे श्रुत को गणधर ग्रहण करके शास्त्रो की रचना करते है इसलिए अपने जिनशासन मे यह मतव्य है कि "अत्थ भासइ अरहा, सुत्तं गंथति गणहरा निउण।"

भगवान के लिए एक विशेषण आया है कि वे आदि करने वाले हैं। हमारे बुद्धिवादी वर्ग मे यह तर्क सहज खडा होगा कि आदि करने वाले भगवान ऋषभदेव थे, जिनको आदिनाथ भी कहा गया है। वे प्रथम तीर्थंकर थे इसलिए आदिनाथ कहलाये। उनके बाद तेईस तीर्थंकर और हुए महावीर के सम्मुख पार्श्वनाथ का धर्मशासन चल रहा था। साधु, साध्वी, श्रावक और श्राविकाये मौजूद थे। फिर महावीर को आदिकर क्यो कहते है ? यह ज्वलन्त प्रश्न है जो विचारक के मन-मस्तिष्क को हिलाने वाला है। लेकिन यह कहना भी ठीक है। अर्थ रूप मे तो महावीर ने धर्म की आदि नही की। क्योकि श्रुतधर्म अर्थ रूप मे आदि-नाथ के समय चला आ रहा बल्कि एक अपेक्षा से विचार किया जाय तो आदिनाथ भगवान के समय से पहले भी चालू था, क्योकि जैन धर्म अनादि है– अहिंसा धर्म शाश्वत है।

जिनशासन की विशेषता

जिनशासन की एक महिमा है, कि इस शासन मे शास्त्रो को आदि भी मानते है और अनादि भी मानते है, इसीलिए नन्दीसूत्र मे श्रुत के १४ भेद किए हैं। ज्ञान कितने प्रकार के है ? यह तो आप जानते होगे कि पाच प्रकार के है—मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मन पर्ययज्ञान और केवलज्ञान है।

यह मैं जो कह रहा हूं और जो शास्त्र का वाचन चल रहा है यह पाँच ज्ञान मे से कौन सा ज्ञान है ? यह श्रुत ज्ञान है। और मैं वाचन कर रहा हूँ, सुना रहा हूँ,आप सुनकर सोच रहे हैं, चिन्तन कर रहे है, यह कौनसा ज्ञान है ? मतिज्ञान। आपने जो स्वाध्याय किया, ग्रन्थ पढा, शास्त्र की शब्दावली, अर्थ पढना और सुनना, यह हो गया श्रुतज्ञान और शास्त्र की शब्दावली पढकर, सुनकर उस पर विचार करना हो गया, मतिज्ञान।

मै जैसे पढ रहा हूँ "आइगरेण", मैने चिन्तन किया और आपके सामने रखा कि आदि तो भगवान ऋषभदेव ने की इसलिए उनका नाम है, आदिनाथ। यदि महावीर द्वारा आदि होती तो उनका नाम आदिकर हो सकता था। किन्तु ऐसा है नही, फिर महावीर को आदि करने वाला

कोई दूसरा नही है। महावीर किसी द्वारा पढाए हुए, समझाए हुए, सिखाए हुए नही थे लेकिन महावीर तो "सयसबुद्धेण" थे, वे तो स्वय ज्ञान प्राप्त थे।

यह सुनकर शिष्य के मन मे बडा आदर उत्पन्न हुआ। लेकिन फिर यह खयाल आया कि यदि कोई व्यक्ति स्वय बिना किसी के पढाये पडित या ज्ञानी हो सकता है तो हम भी हो जाते, यह तो जँचने वाली बात नही है। तव किसी ने कहा कि इसमे सशय की बात नही है। उनका खुला मन था। बेटा बाप से खुले मन से पूछ सकता है। शिष्य गुरु के सामने दिल खोलकर बात कर सकता है। वह शिष्य नही है जो गुरु से खुले मन बात नही करे। अपना हृदय खोलकर विनयपूर्वक गुरु के सामने रखे तो समझना चाहिए कि वह पूरा चेला है।

सच्चे प्रेम में निष्कपटता अनिवार्य

एक कवि ने कहा है—

> प्रीत जहाँ पर्दा नही, पर्दा जहँ नहीं प्रीति।
> प्रीति करी पर्दा करे, वोही रीति कुरीति॥

बात अटपटी लगती होगी कि पर्दा करने पर प्रेम नही होता है। लेकिन नीति कहती है, अनुभवियो की वाणी कहती है कि जिसके मन मे पर्दा है चाहे गुरु-शिष्य का सम्बन्ध हो, चाहे पिता-पुत्र का सम्बन्ध हो, चाहे पति-पत्नी का सम्बन्ध हो, जहाँ प्रेम होकर भी बात छिपायी जाती है, एक-दूसरे से पर्दा किया जाता है या छिपाव रखा जाता है, वहाँ सच्चा प्रेम नही है। छिपाव इसलिए रखा जाता है कि अपने आप मे और अपने गुरु पर विश्वास नही है—विचार होता है कि कहूँ या नही कहूँ, महाराज नाराज हो गये तो क्या होगा ? पति सोचता है कि कहने से घरवाली नाराज हो गई तो क्या होगा ? वास्तव मे प्रेमी का मन पर प्रभाव होना चाहिये। यदि प्रीति करने वाला अगल-बगल से दूसरे से कहलाता है तब समझना चाहिये कि प्रेम मे कमजोरी है। उसको ऐसा लगता है कि शायद नाराज हो जायगा। अरे नाराज हो जावे तो तू गुरु को और गुरु तेरे को पहचानता है या नही ?

हाँ, तो भगवान महावीर के लिए प्रश्न आया कि 'सय सबुद्धेणं' यह खयाल हुआ कि यदि खुद बोध होता तो हमको भी बोध होना

है—तूने ईंट मारी है, मैं पत्थर मारकर जब तक दो चार गूमडा नही कर दूँ तब तक म्हारो गुस्सो शान्त नही होवे। सामने वाला हाथ जोडे कि भाईसाहब ! माफ करो म्हारो दिमाग फेल हो गयो। फिर भी वह कहता है– तू हाथ जोडे लेकिन म्हारो गुस्सो देखियो नही है, मैं भूलने वालो नही हूँ, थारे सूँ कसर निकालनी है। कोर्ट जायेगा, कचहरी जायेगा, सामने वाले का घर-बार, जमीन-जायदाद नीलाम करा देगा। वह पीछे-पीछे फिरता रहेगा फिर भी वह माफ करना नही जानता।

उत्तम पुरुषो के अन्य गुण क्षमाशीलता और साहस

लेकिन कृष्ण का स्वभाव निराला है। उन्होने उसको माफ कर दिया। द्रौपदी पाण्डवो को हस्तगत कर दी गई। कृष्ण लवण समुद्र को पार कर पाँच पाण्डवो को बोले कि तुम गगा नदी को जाकर पार करो तब तक मै सुस्थित देव से मिलकर आता हूँ। कृष्ण की अनुमति पाकर पाँचो पाण्डव गगा पर आए, नौका से नदी पार कर गए किन्तु कृष्ण के लिए नौका नही भेजी, छिपा दी और सोचने लगे कि कृष्ण शक्तिशाली है देखे—वे किस प्रकार नदी पार कर आते हैं। श्रीकृष्ण ने नाव नही आने पर एक हाथ से रथ को पकडकर दूसरे हाथ से गगा महानदी को पार किया कारण कृष्ण पुरुपोत्तम थे इसलिए उन्होने सोचा कि पाडवो को तकलीफ पड गई होगी इसलिए नौका वापिस नही आई।

पुरुपोत्तम कभी दूसरो का सहारा नही लिया करते। साधारण आदमी दूसरो के सहारे की अपेक्षा रखते है। वे हँसते-हँसते नदी को भुजाओ से पार करके बाहर आ गए।

मैं कह रहा था कि पुरुपोत्तम तीन प्रकार के होते है। वासुदेव को उत्तम पुरुप कहा है और वासुदेव नौ होते हैं। दूसरे दर्शनो मे यह जानकारी नही मिलेगी। राम भी नौ है। वैदिक परम्परा के लोग राम के नाम मे प्यार करते है लेकिन उनको नही मालूम कि राम कितने होते है। दशरथ-सुत के अलावा और भी राम हुए है, वे दो तीन बतला देंगे। लेकिन वीतराग वाणी कहती है कि बलदेव उनका पद है। वे राम भी नौ हो गए हैं। वे सब उत्तम पुरुप थे। लेकिन तीर्थंकर को धर्म उत्तम पुरुप कहा है। उत्तम होकर भी कोई कर्म काटने के मार्ग मे हार जाता है।

चक्रवर्ती ब्रह्मदत्त को चित्तमुनि ने कहा कि राजन् ! तुम अपनी

खैर चाहो तो पाप कर्मो का परित्याग करके आर्य कर्म करो। जिसके पास ६ खड का राज्य है, ९ निधान है, १४ रत्न है, पच्चीस हजार देव उनकी सेवा करते है। अव वताइए उस पुरुष को उत्तम पुरुप कहना चाहिए या नही।

साधारण आदमी तो देवी-देव का नाम लेते ही भाग जाते है। यदि कोई ऐसे विशाल भवन के वारे मे कह दे कि यहाँ पर देव का निवास है और उसमे थोडा चमत्कार हो जावे तो किसी को मुफत मे भी राखणो चाहो तो शायद रहने को तैयार नही होगा। क्या काई ऐसी हवेली नही मिलेगी या वगला नही मिलेगा जिसको वहुत उमग से वनाया लेकिन जरा सा शक पड गया तो वावू साहव वगले मे रहने मे सकोच करने लगे। साधारण लोग देव के नाम से डरते है और दूसरो की सहायता चाहते हैं। लेकिन पुरुपोत्तम के चरणो मे देवता रहते है। आप भी पुरुपोत्तम हो सकते है, लेकिन तव, जवकि पुरुष होकर पुरुपोत्तम वनने का प्रयत्न करे। लेकिन कदम-कदम पर भागते रहेगे, कायरता और निर्बलता दिखाते रहेगे, छोटे-मोटे सकट को पार नही कर सकेंगे, तव तक पुरुपोत्तम होना तो दूर रहा, सच्चे अर्थ मे पुरुष भी नही कहला सकेंगे।

नियम ग्रहण आवश्यक

वहुत से आदमी कहते है कि सौगध तो लेऊँ पर पार नही पडे। एक सोगन्ध लियो ओ टूट गयो। नये सिरे सू सौगध नही लेऊँ, टूट जावे तो पाप लागे। मैं कभी पूछ लेता हूँ कि दुकान करो उसमे कभी टोटा लग जावे तो धन्धा छोड दियो कई। एक वार दो वार टोटो लागियो, पहले किराणा रो धन्धो करता हा फिर कपडे रो कियो फिर टोटो लाग गयो तो, पाट रो शुरू कियो या और कोई धन्धो शुरू कियो। दक्षिण मे आया तो गिरवी रो धधो शुरू कियो। वो भी वरावर नही चलियो तो नौकरी कर ली, फिर फाइनेन्स रो धन्धो शुरू कर दियो।

यह क्या हुआ, धधा करना छोड दिया या नही छोडा ? गाव मे जहाँ शुरू मे रहते थे और आपके वाप-दादा जो धधा करते थे वहाँ आवश्यकता की पूर्ति नही होती इसलिए राजस्थान छोडकर मद्रास आ गये अथवा किसी दूसरी जगह चले गये। छोटे-छोटे गावडो तक मे पहुँच गये। एक-दो वार नही जमा तो साहूकार पेट जो वडे-वडे साहूकारो का गढ है, यहाँ पर आ गये। किसी वडे सेठ आदि का सहारा पकड लिया।

अव आपका धधा चल रहा है या बद कर दिया ? गाँवो मे नही चला तो भी बद नही किया।

मुझे तो यह देखकर आश्चर्य होता है कि ससार मे आप अपना काम-धधा करते है। नही चला तो भी हाथ नही टेकते। एक से दूसरे धधे मे चले जाते है लेकिन धर्म-साधना मे नियम लेने का सवाल आता है तो हाथ टेक देते है। अच्छे-अच्छे नौजवान कहते है कि सौगध पार नही पडता। सौगध लेकर टूट जावे तो महापाप और सौगध नही लेवो तो पाप। इण वास्ते महापाप सू वचना चावो हो। वगैर सोगन रे व्रत नियम पालन री कोशिश करूँला।

नियम तोड़ना और टूटना मे अन्तर

लेकिन मै जानना चाहता हूँ कि तोडना वडा पाप है या टूटना पाप है ? टूटना और तोडना इन दोनो मे कोई फर्क है ?

हम लोग महाव्रती है, तीन करण और तीन योग से हमको हिंसा, झूठ, अदत्त, कुशील, परिग्रह ये पाँच पाप करने नही, कराने नही और करने वाले को भला जानना नही। क्या साधना करते-करते किसी मुनि से स्खलन, कोई गलती या विराधना होना सम्भव नही है ? विराधना हो गई तो आप उसे तोड दिया कहेगे या टूट गया कहेगे—दोष लग गया या लगा दिया कहेगे ? लगने मे तो मजबूरी है परिस्थिति की विवशता है। लेकिन लगा देने मे मानसिक चचलता है, लापरवाही है, मन की कमजोरी है। इसलिए सबसे वडो आवश्यकता इस वात की है कि ससारी जीवन मे चाहे धर्म मे कामयावी हासिल करना चाहे तो पुरु-षोत्तम से आगे की वात याद करनी पडेगी। आगे कहा है "पुरिससीहेण" पुरुषो मे सिंह के समान थे। सिंह पीछे पग रखना नही जानता।

सिंहवृत्ति रखिए

सिंह और गीदड मे क्या फर्क है ? आप सिंह वनना चाहते है या गीदड ? माताएँ और वहनें भी जरा सोचे। वे सिंहनी वनना चाहेगी या गीदडी। चाहे सामने नाचती हुई तलवार हो, चाहे भाले वरछी तलवार वदूक लिए शिकारी मनुष्य खडे हो लेकिन शेर का वच्चा गुफा से निकलने के वाद ललकारने पर पीछे कदम रखना नहीं जानता। वह भाले, वन्दूक और वरछी से नही डरेगा और सामने वढ़कर हो सकता है।

चलाऊँला। कोई केवे कि म्हने ब्याज पर रकम री जरूरत है। मेरे से खत लिखा लेवो, लिखा-पढी कर लेवो और रुपया देवो। महाजन रा बेटा हो, दो पैसा उपार्जन करना पडे। लोग बोलेगे, महाराज ! मोटा धधा तो मोटा सेठ ले लेवे म्हाने तो छोटा धधा ही मिले। बाजार मे जो पुराने मोटे सेठ है उनके पास तो अच्छा-अच्छा लोग आजावे।

हमारे जैन कहलाने वाले भाई भी आज इस तरह से बोल जाते है। नतीजा यह होता है कि पैसा अशुद्ध होता है तो आहार अशुद्ध होता है। आहार अशुद्ध होता है तो मति भी अशुद्ध होगी। मै कह रहा था कि गृहस्थ को धधा करने के लिये मना नही है, लेकिन कैसा धधा करना मना है, यह आप जानते हैं।

जैन कुल मे जन्मे हो। तुम्हारे देव पुरुषोत्तम है। "पुरिससीहेण, पुरिसवर पुण्डरीयेण, पुरिसवर गधहत्थीणं।" गधहस्ती की गध से दूसरे जगली जानवर भाग जाते है, उसी तरह से प्रभु की देशना सुनकर मिथ्यात्वी भाग जाते है।

सुधर्मा स्वामी ने समवायाग सूत्र में कहा कि हे आयुष्मान जबू ! मैंने भगवान से सुना वह तुम्हारे सामने कह रहा हूँ। सुधर्मा स्वामी ने कृपा करके सूत्र का अभिप्राय समझाकर भगवान का परिचय दिया। आपने भी सुना, उस पर चिन्तन करना है।

भगवान महावीर के जीवन से हमको क्या लाभ ? मैंने कहा कि तीर्थंकर के पवित्र जीवन का स्मरण करने से हमारी बुद्धि मे पवित्रता आती है और पवित्रता के कारण हम भी अपना जीवन ऊपर उठाने मे समर्थ होते हैं। मै पहले एक दोहा कह गया था कि प्रीति करो लेकिन हम किसके साथ प्रीति करे ? कवि विनयचदजी ने कहा—

"तू सो प्रभु, प्रभु सो तू है, द्वैत कल्पना मेटो।
सत्-चेतन परमानंद विन परमातम पद भेटो रे ॥
सुज्ञानी जीवा, भजले रे जिन इक्वीसवां।"

यदि आपको, हमको अपना जीवन परम शान्तिमय बनाना है, दुःख-शोक से मुक्त होना है तो हम वीतराग के स्वरूप का चिंतन करें। कवि विनयचदजी कहते है कि "तू सो प्रभु, प्रभु सो तू है।" प्रभु के साथ तादात्म्य सम्बन्ध जोडकर कहते हैं—प्रभु तुम हो वही मैं हूँ, लेकिन आज तक मैंने पर्दा रखा। कभी सामायिक करने की बात कही तो बोला कि आजकल धधो बाडी बराबर नही चलता, बापजी ! अब आपरा दर्शन

करके जाऊं, धधा कारोवार एक वार अच्छा जम जाय तो फिर धर्मध्यान का ही काम है। इस तरह आप मे से कई भाई के लाल सामायिक करते, माला जपते, गुरुदेव के दर्शन करते ऐसी मागणी करते है।

उनको पता नही कि इस प्रकार जीवन आगे नही वढेगा। अत पर्दे को दूर करिये। निश्छल भाव मे प्रभु के साथ सम्वन्ध जोडकर आगे वढने का प्रयास करोगे तो अवश्य कल्याण के भागी वनोगे। सकल्प-वल से ही समाज, शासन की सेवा मे आगे वढा जा सकता है। जो आदमी आगे वढना चाहे उसको सकल्प की मजवूती अवश्य करनी होगी। जहा सकल्प की मजवूती नही वहाँ कुछ नही होता। अपने जीवन मे पवित्र सकल्प करके आगे वढने का प्रयास करोगे तो इस लोक और परलोक मे आनन्द, शक्ति और कल्याण के हकदार वनोगे।

मद्रास
(दि० ३०-७-८०, समय ६·३० प्रात)

१५

वीरवा ी से आर -तत्त्व ो उप ब्धि

प्रा ं ।

एगो वि नमुक्कारो, जिणव हस्स बद्धमाणस्स ।
ससार सागराओ तारेइ, नरं वा नारि वा ॥
जो देवाण वि देवो, ज देवा पंजलि नमंसति ।
तं देव-देवमहिय, सिरसा वदे महावीरं ॥

कल्याणकामी मुमुक्षुओ !

श्रमण भगवान महावीर, जिनशासन के अधिनायक और द्वादशागी वाणी के उपदेशक है । उनका स्मरण अत करण मे ज्ञान का प्रकाश प्रसारित करता है । जिनकी वाणी हम सुनते है और जिनकी वाणी का पठन करते है उनके स्वरूप को, उनकी दृष्टि को एव उनके जीवन को जब तक नही समझ लेगे तव तक उनकी वाणी का रहस्य नही समझ सकेंगे । हम कैसी वाणो का कथन कर रहे है यह ध्यान मे लाने के लिए जो वाणी की वागरणा करने वाले है उनके सत्स्वरूप को ध्यान मे लाना अति आवश्यक है । इसलिए सर्वप्रथम भगवान महावीर को भावपूर्ण वन्दन करे और उनकी वाणी से हेय, ज्ञेय, उपादेय तत्त्व को और उनकी वाणी के वस्तु तत्त्व को पहचानें ।

सुधर्मा जैसे गणधर ने इस वाणी को, भगवान की देशना के फूलो को एक-एक करके चुना और उनको व्यवस्थित ढग से मालाकार की तरह माला वनाकर हमारे सामने प्रस्तुत किया । अच्छी माला को जो धारण करेगा उसका गला शोभित होगा, उसके दिल और दिमाग मे तरी पहुँचेगी । माला पहनने वाले लोग जानते है कि उससे दिल और दिमाग मे तरी पहुँचती है । यह तो द्रव्य-माला की वात है ।

द्वादशांग वाणी . भाव-माला

मह भावमाला की वात कर रहे है। भावमाला क्या ? शास्त्रो की वाणी, द्वादशागी वाणी। यदि गणधर देव ने ग्रथन करने की कृपा नही की होती तो ये वचन बिखरे हुए होते। कहाँ किस वाचना का कैसा शब्द है, यह साधारण पाठक नही समझ पाता। उन्होने विखरे वचनो को एकत्रित कर अलग-अलग सूत्रो मे उनका गठन किया और उसमे एक माला रूप समवायाग सूत्र आपके सामने प्रस्तुत किया।

सुधर्मा स्वामी अपने शिष्य जम्बू से कह रहे है कि मै अपनी ओर से कुछ नही कह रहा हूँ। भगवान महावीर से मैंने जो कुछ सुना है, समझा है उसको हे चिरजीव शिष्य ! मै तुम्हे सुना रहा हूँ।

इस भूमिका के साथ अव यहाँ पर प्रश्न खडा होगा कि श्रमण भगवान महावीर की वाणी को सुनकर सुधर्मा ने कहा है तो वे भगवान कैसे थे ? हम तो उनके स्वरूप के प्रत्यक्षदर्शी नही है। जम्वू कह रहा है कि प्रत्यक्षदर्शी नही हूँ, लेकिन जम्वू से भी ज्यादा आप और हम प्रत्यक्ष-दर्शी नही है। महावीर को हम और आप प्रतिदिन नमन करते है लेकिन प्रत्यक्षदर्शी वनकर उनके स्वरूप को आप हम नही जानते।

स्वरूप दो तरह के होते है—अन्तरग और वहिरग। हम वाहरी स्वरूप को भी नही जानते तो भीतरी स्वरूप को जानने का तो प्रश्न ही नही है। वाहरी स्वरूप महावीर का कैसा था, कचनवर्णी काया और आकृति कैसी रमणीय थी हमारे सामने उनका साक्षात्कार करने वाला नही है तो अत करण की स्थिति का भी पता नही चल सकता, इसलिए उनके वारे मे जिज्ञासा होना सहज है।

सुधर्मा स्वामी जम्वू को उनका परिचय दे रहे है। दस विशेषणो का कथन आपके सामने कर चुका हूँ। कल का अन्तिम शब्द था कि महावीर स्वामी, जिन्होने यह वाणी कही है वे पुरुपो मे गधहस्ती के समान है। वे सहज पुरुपोत्तम ही नही लेकिन वे 'पुरिसवर गंधहत्थीणं' हैं।

विशेषणो का प्रयोग-भक्ति के उद्रेक मे

सुधर्मा कहते कहते अघाते नही। भक्ति का जव उद्रेक होता है [illegible] विशेपण प्रयोग मे लाये जाते है पर उनमे यथार्थता चाहिए।

पुराने जमाने के कुछ भाइयो को कभी गुरुसेवा मे [illegible] लिखते देखा। वे वहुत लम्बे-चौडे पत्र लिख डालते थे [illegible]

की भरमार होती थी। चार कषाय के जीतनहार, पाँच महाव्रत के पालनहार, छ काय के रक्षक, सात भय के टालनहार, आठ मद के वर्जनहार, ९ वाड शुद्ध ब्रह्मचर्य वाले, १० प्रकार का यतिधर्मधारी आदि जैसे विशेषणो के बोल लिखकर आपके यहाँ विराजित आचार्य आदि सतो को मेरा सविनय वदन कहना वगैरा वगैरा उपमा से पत्र लिखते थे। अपने साधर्मी बन्धु को पत्र लिखते तो देव, धर्म, गुरु भक्ति आदि लिखकर उनकी विशेष उपमा और श्रावक जीवन के नमूने की बात लिखकर पत्र द्वारा श्रावक जीवन का नमूना पेश करते। जब साधारण धर्मी बन्धु और धर्मगुरुओ के लिए हृदय खोलकर लिखते और अपनी भावना को प्रकट करते तो भला वीतराग परमपिता के लिए कितना आदर होगा।

सुधर्मा कह रहे हैं कि महावीर पुरुषोत्तम ही नही थे उससे भी ऊँचे थे। देवो मे सबसे ऊँचा इन्द्र होता है। मैंने जैसा कि कल आपसे कहा, चक्रवर्ती की पच्चीस हजार देव सेवा करते हैं, लेकिन इन्द्र तीर्थंकर की सेवा मे उपस्थित रहता है। चक्रवर्ती की सेवा मे इन्द्र उपस्थित रहे, यह जरूरी नही। तो चक्रवर्ती से भी कौन ऊँचा हो गया? धर्मदेव होता है।

कभी आपने यह बात सुनी होगी कि देव कितने प्रकार के हैं? यदि सुनी है तो याद नही रखी होगी।

पाँच प्रकार के देव

भगवान महावीर भगवती सूत्र के माध्यम से कहते हैं कि पाँच प्रकार के देव होते हैं। उनमे से तीन-चार प्रकार के देव मनुष्यो मे होते हैं-भविष्यदेव, नरदेव और धर्मदेव और तीर्थंकर को शामिल करे तो देवाधिदेव—चार प्रकार के देव मनुष्यो मे होते है और देव जाति के भाव देव पाचवे है। देव दिव्य गुणो के कारण दिव्य स्वरूप रखते है। चार प्रकार के देव मनुष्यो के बीच मे मिलते है, उनमे से नरदेव चक्रवर्ती को कहते है। चक्रवर्ती कहाँ मिलेंगे—मनुष्यो मे मिलेंगे। दूसरे है धर्मदेव—साधु-साध्वी। वे भी हमारे बीच मे ही है। तीसरे देवाधिदेव तीर्थंकर कहाँ मिलेंगे, वे भी मनुष्यो मे ही मिलेंगे। चौथे है भविद्रव्यदेव यानी होने वाले देव। देव गति का आयुष्य बध कर लिया है लेकिन अभी मनुष्य या तिर्यंच योनि मे मौजूद है। यहाँ की आयु पूर्ण करके स्वर्ग मे पहुँचेंगे तब भाव देव होंगे। अभी भविद्रव्यदेव हैं। ये चारो तरह के लोग मनुष्य लोक मे मिलते है।

भगवान के अन्य विशेषण

मैं भगवान महावीर की बात कह रहा था। महावीर के लिए कहा है कि वे पुरुषोत्तम है, इतना ही मत समझो। उनके लिए आगे के विशेषण है—

"लोगुत्तमेणं, लोगनाहेण, लोगहिएणं, लोगपईवेणं, लोगपज्जोअगरेणं"—ये पाँच विशेषण और बताये। तीर्थंकर देव भगवान महावीर मनुष्यो मे ही उत्तम नही है लेकिन सारे ससार मे उत्तम है।

अनुत्तर विमानवासी सर्वार्थसिद्ध विमान के देव

एक तरफ सर्वार्थसिद्ध देवो के बारे मे कहा है कि उनको किसी तरह के दुःख का लवलेश भी नही है। लेकिन स्वर्ग मे अनुत्तर विमान के देव भी तीर्थंकर से अधिक उत्तम नही होते। उनसे भी तीर्थङ्कर पद ऊँचा है। इसलिए ग्यारहवाँ विशेषण हुआ 'लोगुत्तमेण' भगवान कैसे है? लोक मे उत्तम यानी सारे ससार मे उत्तम है। चतुर्गतिक ससार है उसमे तीर्थ-कर से बढकर और कोई मनुष्य लोक मे रहने वाला प्राणी होता ही नही। इसलिए ससार मे देव, दानव और मानव लोक मे तीर्थंकर ही सर्वोत्तम है।

सर्वार्थसिद्ध के देव और अनुत्तर विमान के देव ससार मे प्राणियो मे सबसे ऊँचे माने जाते है। स्वाध्यायी अनुत्तर शब्द का अर्थ जानते होगे। जिससे बढकर कोई नही हो उसको अनुत्तर कहते है। सर्वश्रेष्ठ जिससे आगे ऊँचे दर्जे का कोई नही उसको अनुत्तर कहते है—'अनुत्तर' यानी प्रधान।

अनुत्तर देवो के पाँच विमान है। उन देवो से बढकर पुण्यवाणी वाला कोई दूसरा देव नही है। अन्य चार विमानो के नाम है—विजय, विजयन्त, जयन्त और अपराजित। इनमे रहने वाले देव भी अनुत्तर होते हैं। उनकी स्थिति जघन्य भी होती है और उत्कृष्ट भी होती है।

इनसे भी और ऊँचे देव होते है जिनका नाम है 'सर्वार्थसिद्ध' विमान के देव, उनकी उत्कृष्ट स्थिति ३३ सागरोपम की होती है। कम भी नही और अधिक भी नही है। उनका शरीर होता है छोटा-सा एक हाथ का। जैसे-जैसे ऊँचा दर्जा बढता गया वैसे-वैसे शरीर छोटा होता गया। उनका स्वरूप शास्त्रो से मालूम होता है। सात हाथ की ऊँचाई से लेकर घटते-घटते ६, ५, ४, ३ हाथ होते-होते अनुत्तर विमान के देव की ऊँचाई एक हाथ की ही रह गई। ऊँचाई तो इतनी-सी लेकिन उनकी

दिव्य शक्ति को देखकर चकित रह जाओगे, उनके दिव्य सुख को देखकर ताज्जुब करोगे। उनके जीवन की विशेपता इसलिये है कि उनकी कामना घट गई। वे सुखी इसलिए नही है कि उनके पास ज्यादा सम्पदा है, चौसठ मण वजन वाले मोतियो के झुमके उनके विमान मे लटक रहे है, यह सुनकर, पढकर आपका मन राजी होता होगा। आप भी सोचते होगे कि शुभ कर्म के वल से मैं भी सर्वार्थसिद्ध विमान में चला जाऊँ। लेकिन यह बात मत भूलिये कि सर्वार्थसिद्ध विमान के देवता सम्पदा और वैभव के कारण सुखी नही हैं, वरन् वे सुखी है पौद्गलिक कामना कम होने के कारण। वे उपशान्तभाव में रहने वाले है। उनमे क्रोध, मान, माया, लोभ अति मन्द दशा मे है। कारण कि ग्यारहवे गुणस्थान वाले कषाय को भी दवा देते है, शान्त कर देते है जैसे मट्ठी की राख से नीचे अगारे दबे होते है, ऐसे उपशान्त कषाय वाले पुरुष वहाँ पहुँचते हैं। साधना की शक्ति वहाँ वनी रहती है। सम्यक्त्व दशा है। मन स्थिति अच्छी है।

सुख, त्याग से

हम सतो के लिए कहा कि यदि साधु साधना करते-करते सयम मे रम जाय, इतना तल्लीन हो जाय कि उसको आपके भव्य भवन, कार, बगला और सजावट देखकर तिल-तुषमात्र भी आकर्षण पैदा नही हो। आपके रमणीय मुख चन्द्र का भी असर उस पर नही हो। सम्पत्तिशाली को देखकर वह सोचेगा कि मानव कितना दवा हुआ है, कितना पराधीन है। एक वोरी या टाट पर भी और भूमि पर भी नीद आ सकती है लेकिन उसको गद्दे के विना नीद नही आती। आप किसी बडे व्यक्ति के घर जाकर देखते है कि उसके यहाँ कितने गद्दे तकिये, सोफे आदि सुख के साधन है, साधु के पास कुछ नही है। लेकिन यह तरग आपके मन मे तभी तक आती है जव तक त्याग के स्वरूप को आपने नही समझा है। परन्तु सयमी पुरुप सोचता है कि यह कितना पराधीन है, इसको इतना साधन होते हुए भी नीद नही आती है और दूसरे को जमीन पर लेटकर तकिए के स्थान पर गर्दन के नीचे हाथ रखकर भी नीद आ जाती है। कम से कम आप श्रद्धा की दृष्टि से फैसला करो कि कौन सुखी है? आप का मन क्या कह रहा है?

दूसरो की सुख-सुविधा और साधनो को देखकर आप कहेगे कि वापजी! थोडी पुण्यवानी म्हाने भी दीजो। अरे भाई! किस लिए तरसता है, यदि ये सव तेरे पास हो गये तव तो और ज्यादा पराधीन हो

फिर कैसा नाथ ? घरवालो को नाथ भले ही समझा जाय। वह व्यवहार मे नाथ कहलाता है, स्वामीनाथ, प्राणनाथ वगैरा-वगैरा। आपकी इतनी सामर्थ्य नही है कि डाक्टर, हाकिम, चपरासी आदि भी आप का हुक्म माने और सब कुछ करते रहे। जब आपके हाथ की बात कुछ भी नही, तो झूठ-झूठ मे ही आप क्यो नाथ बने फिरते है ?

भगवान जिनेश्वर देव "लोगनाहेण' है। असख्य जीवो को मिथ्यात्व से हटाने वाले है। अप्राप्त वस्तु सम्यक्त्व दिलाने वाले, सम्यक्दर्शन को प्राप्त कराने मे सहायक बनते हैं। जो सम्यग्दर्शन पा चुका है लेकिन परिस्थितिवश विचलित हो गया उसको पुन रास्ते पर ले आने वाले है।

शास्त्र मे बताया गया है कि मुनि मेघकुमार विचलित हो गया। मेघकुमार भगवान के चरणो मे दीक्षित हुआ। जैन धर्म की मर्यादा है कि कोई राजकुमार दीक्षित होता है तो वह भी उससे पहले दीक्षित साधुओ से छोटा माना जायगा और उसका स्थान बडो के नीचे रहेगा। क्योकि जैन धर्म विनयप्रधान है।

श्रावक समाज को भी यह ध्यान मे लेना चाहिए कि बिना सामायिक वाले भाई सामायिक वालो के पीछे बैठेगे। अगर किसी को मजबूरी हो, सुनाई कम देता हो तो बात अलग है, ऐसी स्थिति मे वह दूसरे सामायिक वालो की आज्ञा लेकर आये, बैठे। जैसे शिष्य के लिए कहा कि वह गुरु के पाट या आसन के ठेस भी नही लगावे। परन्तु परिस्थितिवश सेवा का प्रसग आ जाय और आवश्यकता हो तो गुरु के आसन पर चेला बैठ सकता है। गुरु के पैरो का, सिर का मर्दन करना है और नीचे बैठकर मर्दन करना सम्भव नही है तो गुरु की आज्ञा से पाट पर बैठकर मर्दन कर सकता है। यो तो गुरु के पाट के ठोकर लग जाय तो भी आशातना होती है और उसके लिए गुरुजनो से क्षमा याचना करेगा। यह जिनशासन की मर्यादा है।

सतो का वंदन करते समय कभी चरण छूने की भावना हो तो यह ध्यान रखना जरूरी है कि सतो के आसन या ओघा आदि के पैर न लग जाय। कपडा या आसन के पैर लगने से गुरुजनो की अवहेलना—आशातना होती है। सतो के पास अविनय से बैठे और बोलते समय मुँह पर मुँहपत्ती नही लगाई जावे यह भी विनय भग है। दो भाई शास्त्र का पाठ पढ रहे हो, गुरुजी शिष्य को पढाते हो तो उनके बीच मे से भी नही निकलना चाहिए। यह शासन की विधि है। जैसे साधु के लिए ओघा या रजोहरण रखना जरूरी है वैसे ही श्रावक के लिए मुँहपत्ती मुँह के आगे जरूरी है।

तो मेघकुमार दीक्षित हो गया लेकिन रात्रि मे सोने के समय सारे साधुओ के पीछे उसका नम्बर आया। यहाँ वडे महाराज सोयेगे उनके वाद दूसरे नम्बर के वडे महाराज सोयेगे। ऐसा होते-होते हजारो साधुओ के वाद उसका नम्बर किनारे पर दरवाजे के पास आया। दूसरा पहर समाप्त होने आया। मेघकुमार को निद्रा निकालनी थी। सतो का आवागमन चालू था। कोई स्वाध्याय के लिए, कोई समाधान के लिए, कोई शरीर की चिन्ता निवारण के लिए आ जा रहा था। एक साधु आया और एक गया।

रात्रि का समय था, साधुओ के स्थान पर लाइट की व्यवस्था नही होती, हृदय की लाइट काम करती है। वाहर की लाइट की वहाँ व्यवस्था नही होती। उस समय किसी साधु-भक्त का ऐसा खयाल नही था कि महाराज अपने लिए लाइट नही जलाते लेकिन अपन तो गृहस्थ है, अपन जला सकते है। कई आने जाने वाले लोग टकरायेगे, माथा फोडेगे तो हँसी होगी। ऐसे कई प्रकार के तर्क-वितर्क निकालकर आज के भाई रास्ता निकालने की वात सोचा करते है।

पुराने जमाने मे राजा-महाराजा, राजकुमार, श्रेष्ठिवर आदि कई तीर्थंकर और जैन आचार्यो के भक्त थे लेकिन वे अपनी सुविधा के लिए इस प्रकार का रास्ता नही निकालते थे।

रात्रि भर साधुओ के आवागमन के कारण मेघकुमार को निद्रा नही आई। उसने देखा कि यह साधुपना तो मँहगा पडेगा। मुक्ति मिलनी है तो एक भव पहले मिलने की अपेक्षा पीछे मिलेगी। उसके मन मे चचलता आई। उसको नीद नही आई। उसने सोचा कि आगे क्या करना? कोई काम गुरु को पूछे विना नही करना। घराने का लडका था, मरना मजूर है लेकिन अनुशासन भग करना नही जानता। इसलिए शास्त्रो मे कहा है—'जाइसम्पन्ने, कुलसम्पन्ने'। जाइसम्पन्न का मतलव यह नही कि किसी वडे घर मे जन्म हो, ओसवाल हो। ब्राह्मण हो या क्षत्रिय हो। जाइ का अर्थ है मातृ पक्ष जिसका मातृ पक्ष निर्मल हो, माता, दादी आदि मे कोई ऐव न हो, वह जातिसम्पन्न माना जाता है। कुल से पितृ पक्ष की उज्ज्वलता अपेक्षित होती है। वात थोडी लम्वी हो गई, सक्षेप मे समेटू।

आप भूल गये होगे कि भगवान महावीर नाथ है। क्यो नाथ है? इसलिए नाथ है कि जिसका मन कमजोर हो गया, जो सम्यक्त्व पाकर

विचलित होने लगा ऐसे प्राणी को स्थिर किया और उसको मिले हुए चारित्रधर्म मे, सम्यक्त्वधर्म मे स्थिर करता है, वही नाथ कहलाता है।

भगवान महावीर ऐसे ही नाथ थे ।

प्रात काल मेघकुमार भगवान के पास गया। तव उसके कुछ कहने से पूर्व ही पिछली रात्रि के पिछले पहर मे घटित सारा वातावरण भगवान महावीर ने उसके सामने खोलकर रखते हुए कहा कि मेघ ! तेरे मन मे ऐसा आया, तू भूल गया कि पिछले भव मे तू मेरुप्रभ हाथी था, उस समय जगल मे भयकर आग लगी तब जगल के छोटे वडे जानवर तेरे द्वारा साफ किये मैदान मे इधर-उधर से शरण के लिए आने लगे। तूने खुजलाने के लिए अपना पैर उठाया कि उसी समय तेरे पैर की जगह पर एक खरगोश आकर बैठ गया। तूने पैर वापस किया तो खरगोश का कोमल स्पर्श देखकर तूने सोचा कि मेरे पैर के भार से यह प्राणी दव कर समाप्त हो जायेगा। मेरी थोडी तकलीफ के कारण उसके प्राण नही लूँ। मेघकुमार ! तूने हाथी के भव मे अपनी जान को जोखिम में डाल दिया। आज तू साध वनकर सन्तो के चरणो मे भक्ति से आया है। देवपति के लिए भी दुर्लभ सत चरणो मे निवास करते तुमको साधुओ के आवागमन के कारण रात्रि मे नीद नही आई। शशा को प्राण देने वाला तू इतने से कष्ट मे घवडा गया । साधु-महात्मा तेरे लिए आदरणीय, वन्दनीय है। उनके कारण तेरे को थोडा कष्ट हो तो वह महान् निर्जरा का कारण है।

भगवान के दो शब्द सुनते ही उसकी आत्मा जाग उठी। उसका मातृपक्ष निर्मल था, सुसस्कारित था। उसने कहा कि भगवन् ! क्षमा करे, अव कभी ऐसी गलती नही करूँगा। मैं अपना सारा शरीर मुनियो के लिए विसर्जित करता हूँ। वे मेरे पेट पर पैर रखकर चले जावे तो भी दुख नही मानूँगा। सच्चे माता-पिता मे सस्कार लिया है, मेरे सिर पर साधु पैर रखकर चले जायेगे तो भी कोई हर्ज नही। मैं आपकी आज्ञा का पालन करूँगा।

उसकी आत्मा स्थिर हो गई। इसलिए भगवान महावीर लोकनाथ हैं। एकेन्द्रिय से पचेन्द्रिय तक सव जीवो की रक्षा करने वाले, सवको अपने आत्मवत् समझने वाले, आप भी चाहे तो ऐसे वन सकते है, लेकिन अभी आप वने नही और महावीर वन गये।

१६
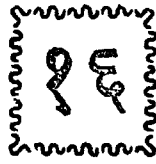
धर्म-राग से शासन की उन्नति

प्रार्थना

वीर' सर्व-सुरासुरेन्द्र महितो, वीरं बुधा सश्रिता
वीरेणाभिहत स्वकर्म-निचयो, वीराय नित्य नमः ॥
वीरात्तीर्थमिदं प्रवृत्तमतुल-वीरस्य घोरं तपो
वीरे श्री-धृति-कीर्ति-कान्ति-निचयो, हे वीरभद्र दिश ॥

धर्मप्रेमी वन्धुओ !

शासन-पति भगवान महावीर को सर्वप्रथम वन्दन किया गया है। इस श्लोक से अरिहन्त देवाधिदेव को वन्दन करने का जब भी प्रसग आता है तब साधक के मन मे अरिहन्त का स्वरूप क्या है, अरिहन्त कौन है, कैसे है, यह जिज्ञासा उत्पन्न होना आवश्यक है। यदि यह जिज्ञासा उत्पन्न नही हुई, इस तरफ लक्ष्य नही गया तो समझना चाहिये कि वह केवल नाम मात्र का नमोत्थुण बोला गया है, पढा गया है लेकिन इस तरफ लक्ष्य अभिमुख करके नही चला गया है।

द्रव्यक्रिया और भावक्रिया

हमको द्रव्य-पाठ नही करना है, द्रव्य के साथ भाव-पाठ करना है। नवकार मन्त्र की द्रव्य-माला के जाप से ही सतोष नही करना है, भाव-माला जपनी है। आप चक्कर मे न पड़े। कदाचित् आपका ख्याल होगा कि महाराज द्रव्य-माला को नही जपना और भावमाला का लक्ष्य रखना, यह क्या कह रहे है ?

जिनेश्वरदेव का सर्वसम्मत एक सिद्धान्त है कि द्रव्यक्रिया पुण्य

बध का कारण बन सकती है, किन्तु कर्मनिर्जरा का कारण नही बन सकती ।

द्रव्यक्रिया का मतलब है तन से और वाणी से क्रिया का होना। तन और वाणी से तो क्रिया होती रहे और मनीराम (मन) कही अन्यत्र भटकता रहे, यह छोटा सा-द्रव्य क्रिया का यह मतलब समझिये ।

द्रव्यक्रिया और भावक्रिया चाहे मेरा बोलना हो चाहे आपका सुनना हो, साधु साधुव्रत की साधना करता हो और श्रावक श्रावकव्रती हो, चाहे तप हो, जप हो, चाहे नमस्कार हो, एकता तन से कर रहा है, दोनो हाथ भी जोडे है, नमस्कार करने मे कितने अग नमाने पडते हैं ? ५३, तो भाई-बहिनो ने बराबर ५३ अग नमा लिये है । फिर पूरे तिक्खुत्तो का एक-एक पद शुद्ध बोला । बोलना ठीक है, अब झुकना ठीक है, जिस जगह सिर टेकना है, टेकता है । जिस जगह आवर्तन करना है, कर रहा है, तीन प्रदक्षिणा करके नमस्कार किया है लेकिन मनीराम (मन) कही और है, उपयोग का रूप दूसरा है या तो उपयोग मे सोच रहा है कि मैं नमस्कार करूँ, म्हारे वदन की तरफ लोग ठाठ से देखे कि कैसी वदना कर रहा है । यदि इस तरह का एक साधारण विचार भी आया तो कर्मनिर्जरा अत्यल्प होगी, इससे बहुत अधिक लाभ नही है। क्रम नही छूटे इसलिये विस्तार नही कर रहा हूँ । वचन और क्रिया से वन्दन कर रहा है, सब अग झुका रहा है, हर पद को बराबर बोल रहा है, ह्रस्व-दीर्घ का ख्याल भी रख रहा है लेकिन उपयोग की तन्मयता नही है तो भगवान महावीर उसके लिये भावक्रिया का प्रमाण नही देते । उसके लिये निर्णय किया कि वह नमस्कार कौनसा, क्रिया कौनसी ? तो कहा द्रव्यक्रिया है ।

एक छोटा-सा पद याद रखने के लिये बोल रहा हूँ । याद रखेगे तो सबूत रहेगा । द्रव्य क्या और किसको कहना ? तो शास्त्रकार ने कहा—

"अणुवओगो दव्व—अनुपयोगो द्रव्य"

उन्होने द्रव्य की परिभाषा की । द्रव्यक्रिया किसको कहना तो कहा कि—"अनुपयोगो द्रव्य ।"

द्रव्यक्रिया किसको बोलते हैं ? चाहे घटा भर व्याख्यान करता रहूँ लेकिन उपयोगशून्य होकर बोलूँ, खाली निशाना मारता जाऊँ तो मेरा व्याख्यान द्रव्य-व्याख्यान होगा । होगा तो व्याख्यान लेकिन उस

व्याख्यान को हमारी शास्त्रीय भाषा मे कहा द्रव्य-व्याख्यान। मैंने तो कहा और आपने सुना। सुना तो कौन एक-एक शब्द आपकी पकड मे आया लेकिन आपका उपयोग उसके भाव की ओर नही है तो आपका सुनना द्रव्य-सुनना रहा। भाव-सुनना नही रहा और हमारा बोलना भी भाव-बोलना नही होगा।

मैं कह रहा हूँ 'नमो अरिहन्ताण'—अरिहन्त को नमस्कार करता हूँ। अरिहन्त के चरणो मे हमारा लक्ष्य आत्मीय होता है। तब यह जिज्ञासा होती है कि अरिहन्त कौन और उनका स्वरूप क्या है? तो भगवान् सुधर्मा कृपा करके अरिहन्त का स्वरूप समझा रहे है। ऐसा ही तो जिज्ञासु जम्बू जैसा श्रोता और ऐसा ही तत्त्व का प्रतिपादक सुधर्मा जैसा वक्ता। दोनो का सुन्दर सयोग मिला है। हमको भी इस अमृत-रस का पान करना है। इस प्रकार की तन्मयता लाने की कोशिश के साथ सुनना है, पढना है, ध्यान करना है, तभी हम अरिहन्त का स्वरूप तादात्म्य भाव से हृदयगम कर सकेंगे, मन मे उतार सकेंगे, अरिहन्त के स्वरूप को मन मे उतार पाये और पाँच मिनिट तक ही पाठ किया तो वह हमारे लिये बहुत निर्जरा करने वाला होगा।

हमारे यहाँ लम्बे समय की महिमा नही है। दो घण्टा सुनाने वाला और सुनने वाला, अधिक समय तक जाप करने वाला ज्यादा लगन वाला है और ५ मिनिट वाला कम लाभ वाला है—यह प्रमाण-पत्र टाइम से नही दिया जाता है।

भगवान महावीर का आत्मिक स्वरूप

अभी जरा प्रभु की बात चल रही है। सुधर्मा कृपा करके जम्बू को कह रहे है, कुछ उस पर विचार करे।

कल हमने कहा था "लोगस्सउज्जोअगरेण ससार मे उद्योत करने वाले महावीर कैसे है? ससार मे उद्योत करने वाले महावीर प्रभु ने यह वाणी फरमाई है। यह तो सम्बन्ध बता रहे है। अब आगे का रूप कैसा है? इस पाठ मे एक भी शब्द सुधर्मा ने ऐसा नही कहा—जिसमे बताया है कि महावीर इतने लम्बे चौडे—यह उनका रग-रूप है, गठन वगैरह ये सारे शारीरिक परिचय अलग कर, यहाँ सुधर्मा आत्मिक परिचय मे कह रहे है कि महावीर कैसे हैं।

लोगुत्तमेण, लोगनाहेण, लोगहिएणं, लोगपइवेणं और लोगपज्जोअगरेणं

यहाँ तक हमने विवेचन कर दिया। ये कितने विशेषण हुए शायद आपने सख्या का ख्याल तो रखा होगा। १५ हो चुके है। लोगपज्जोअगरेण पन्द्रहवाँ विशेषण है।

आगे कह रहे है फिर भगवान् महावीर कैसे थे? क्या वे सूर्य की तरह, चन्द्र की तरह केवल उद्योत करने वाले है या कुछ ससार के लिये लाभ देने वाले भी है?

इस जिज्ञासा को सामने लेकर सुधर्मा थोडा खुलासा कर रहे है। सोलहवे विशेषण की ओर ध्यान दीजिये। पज्जोअगरेण हो गया। 'नमोत्थुण' का पाठ आप सामने ले सकते है। उसमे श्रेष्ठ पद है उसमे तृतीया करना इतना फर्क पडेगा।

अब कह रहे है कि भगवान महावीर जिन्होने यह आगम वाणी कही है वे कैसे महत्वशाली है? अभयदएणं चक्खुदयेणं मग्गदएणं सरण-दएण, बोहिदएण ये ६ पद बोल रहा हूँ। २१ विशेषणो की शब्दावली पूरी हो जायगी।

१६ वा विशेषण है 'अभयदयेण'। लोक मे उद्योत करने वाले ऐसे शक्तिशाली होते है तो प्राय देखा जाता है कि दूसरो के लिये भय पैदा करने वाले, डराने वाले, धमकाने वाले होते है, दूसरो को त्रास देते है लेकिन कहा गया है कि भगवान् महावीर ऐसे लोक प्रद्योत करने वाले है कि अभय देते है।

भय : अधकार और असावधानी में

अधेरे मे भय होता है लेकिन उजाले मे सारे हॉल मे आपको अकेला छोड दिया जाय--तो भय नही लगेगा, और अमावस्या का अधेरा है और अकेला छोड दिया जाय इस भवन मे तो हर बच्चा, बूढा और जवान इस बडे मकान मे अकेला घूम सकेगा क्या? रात्रि के अन्धेरे मे? लेकिन उजाला है तो अकेला बच्चा सारे हॉल मे इधर-उधर दौडता, चक्कर लगाता, घूमता रह सकेगा। उजाला भय मिटाता है और अधेरा भय फैलाता है। यह छोटी-सी बात सिद्धान्त की हो गई।

जब एक कमरे मे द्रव्यअधेरा, बाहरी अन्धकार फैला हुआ है तब भी डर लगता है तो इतने बडे ससार मे अज्ञान का अधेरा बढ रहा है तो डर लगने जैसी बात है ही। लेकिन डर लगता नही। ससार के लाखो लोग ऐसे है जिनको पता नही है कि जड क्या है, चेतन क्या है, आत्मा

रखता है तो उसको पाप कर्म से डरने की जरूरत नही। इसलिये कहा है कि जिसने आश्रव को रोक दिया, आश्रव के द्वार बन्द कर दिये है उसको पाप कर्म नही बँधेगा। इसलिए आप जिज्ञासु श्रोताओ से पूछने का प्रसग आया है। आपको बोलने का अभ्यास होगा, साहस होगा, ऊँचा-नीचा बोलकर भी ठिकाने आ सकते हो। आपको दूसरे भाइयो को यदि सिखलाना हो तो घबराने की आवश्यकता नही है। एक ने—कहा आश्रव के २० भेद है। आपने आश्रव के २० भेद बताये, लेकिन यदि थोडे मे कहा जाय तो ५ हो जाते है।

आश्रव का अर्थ

आश्रव का मतलब है जिसके द्वारा हमारे आत्मा की तलाई मे कर्मो का पानी आवे। वह कर्मो का पानी आने का द्वार है, रास्ता है, कारण है, हेतु है उसका नाम है आश्रव—जिसके द्वारा आत्मा-रूपी तलाई मे कर्मो का पानी आवे। यह कर्मो का पानी इस तलाई मे भरकर आपको—हमको दुखी कर रहा है, हमारी ज्ञानादि रत्नत्रय की फसल को नष्ट कर रहा है। इसलिए इस पानी को रोकना अत्यन्त आवश्यक है।

पहले तो इस आने वाले गन्दे पानी को रोकिये और फिर जो पानी इकट्ठा है उसको बाहर निकालिए। यह कब हो ? 'अभयदयेण' जबकि भगवान् महावीर की शरण लेगे। वे अभयदाता है उन्होने अनन्त प्राणियो को अभय दिया है। ससार के अनन्त प्राणी भयभीत है।

त्याग-प्रत्याख्यान अभयदान के कारण

कभी आप लोगो मे से किसी को कहे कि हरी वस्तु खाने के सौगन्ध ले लो तो कहेगे कि न मालूम कब विदेश जाने का काम पड जावे तो खाणी पडे। १५० या २०० के उपरान्त नही खाने का त्याग करा दो। आज के भक्त व्रत करके सत-महात्माओ को सतुष्ट करना भी चाहते है और दूसरी तरफ उनकी अभिलाषा है कि शरीर और इच्छा पर आँच नही आवे तथा मौके पर कोई चीज छूटे भी नही, जो आवे वे सब चीजे स्वाहा कर जाऊँ। यदि कहा जाय कि द्रव्य प्रमाण करो, १५ वस्तुओ से ज्यादा मत खाओ तो कहेगे महाराज दो-चार तो साग हो जावे, चूरण चटनी आ जावे, इलायची-सुपारी कोई घाल दे तो बापजी पछे कई वणे, पीछे कई बचे। २५ रखा दो। यह पद्धति अपने यहाँ सौगन्ध लेने के बारे मे चल रही है।

लेकिन व्रत लेने से आत्मा का नियमन होता है, कामना कसी जाती है और मन की दुर्बलता मिटती है, इस वात को लोग भूल जाते है। नियम लेने मे ऐसी पद्धति से चला जाता है कि शरीर पर भार पडने की वात न हो और जठे भार पडे उण जगह रास्तो निकाल लो। तन पर और मन पर भार नही पडे यह जो स्थिति है इससे हम अभयदाता तीर्थ-कर के चरणो मे पहुँचकर भी अभय नही वनते, भयभीत रहते हैं ।

शास्त्रकार कहते हैं कि सभी वनस्पतियाँ भयभीत रहेगी जव तक कि व्रत ग्रहण नही करोगे। वनस्पति के जीव तो मन वाले प्राणी नही है तो वे नही समझेगे। लेकिन हजार आदमियो की सभा मे आकर कोई यह कहे कि इनमे से १०० आदमियो को मारना है तो आप डरेंगे तो नही ? आपका मन कम्पित तो नही होगा ? आप सोचेंगे कि न मालूम सौ आदमियो मे मेरा भी नम्वर आ जाय, दूसरा भी सोचेगा कि न मालूम मेरा ही नम्वर आ जाय। इस तरह से सभी भयभीत रहते है। इसलिए शास्त्रकार ने कहा है कि यह निर्णय करलो कि अमुक-अमुक चीज खानी है और इसके अतिरिक्त नही खानी है। जो नही खानी है उनका त्याग कर लो।

इससे क्या होगा कि दूसरे प्राणी अभय हो जायेंगे। इन जीवो को आपसे भय नही होगा, मरने का डर नही होगा।

भगवान अरिहन्तदेव ने ऐसा रास्ता वताया है कि हमको कोई वोझ नही पडे, केवल अपनी वाणी और वृत्ति पर थोडा सयम करना पडेगा। आज यह सयम करना मुश्किल हो गया। लोग सयम करने मे वडी दुर्वलता अनुभव करते है। उनको यह विश्वास नही होता कि हम अपने नियत दिन भी नियम निभा सकेंगे। वे पहले से ही ऐसा नियम करते है कि जिसमे मन को रोकना नही पडे। कोई वोलेगा १० दिन महीने में ब्रह्मचर्य पालूँगा, दिन नियत नही करता, क्योकि मन मे गलती होने की शका रहती है।

गाधी जी लिखते है कि प्रतिज्ञा से आत्मविश्वास प्रकट होता है।

नियम प्रत्याख्यान का मतलव यह है कि हम एक समय नियत करेंगे तो मन पर अकुश डालने का मौका आयेगा, इच्छा पर अकुश रहेगा। इसके विना जिस दिन भी सयोग मिलेगा उस दिन त्याग करना मुश्किल है। जव इच्छा हुई तव खा लिया। थाल मे ५ साग आये उनमे खाने दो ही है तो दो ही खायेंगे और वाकी को निकाल देंगे। ऐसा तभी

होगा जबकि नियम लिया हुआ होगा। मान लीजिए कभी ऐसे श्रावक के घर मेहमान बन गये, जहाँ तिथि के दिन हरा साग बनता ही नही और थाल मे एक भी हरी सब्जी नही आई तो अनायास ही सौगन्ध हो गया। कई लोग ऐसे भी होते है कि सामने थाल मे जो भी आता है उसी मे सन्तोप मान लेते है। लेकिन यह आदत हरएक की नही होती। कई लोगो की आदत होती है कि सामने वाले को नीचा-ऊँचा कहे बिना खाना नही खाते, जैसे दाल के अलावा और कुछ नही है क्या ? आदि-आदि। आगे की बात आप जानते है। ऐसा कहते हुए भी खाया तो लेकिन मन आकुल-व्याकुल रहा, अप्रसन्नता रही।

मैं यह कह रहा था कि जिन भगवान के बारे मे आप सुन रहे हैं वे ऐसे थे कि उन्होने अनेक प्राणियो को अभयदान दिया और अभयदान के साथ ज्ञान चक्षु दिये। आज के चक्षुदान का खजाना अस्पतालो मे रखा जाता है। मरने के पहले कई व्यक्ति आजकल अपनी आँखो का चक्षदान कर जाते है, जिससे उनके मरण से थोडी देर पश्चात उनकी आँखे निकालकर दूसरे बिना आँख वाले व्यक्ति को लगा दी जाती है, तो उसको दिखने लग जाता है। आँख देने वाले भाई या बहिन अपनी द्रव्य-आँख दान मे देते है, लेकिन भगवान महावीर कहते है कि यो तो द्रव्य-आँख भी देना कठिन होता है, क्योकि द्रव्य-आँख दूसरे को देने वाला खुद चक्षुहीन हो जायेगा। लेकिन भगवान ने कहा कि ज्ञान की आँख देना सीखो। एक आदमी कितनो को ज्ञान की आँखे दे सकता है और एक आदमी अपनी आँख निकालकर दे तो कितनो को दे सकता है ? यदि अपने समस्त बन्धु जिनको ज्ञान नेत्र मिले है वे यदि ज्ञान देना चाहे तो कितनो को लाभ मिलेगा ?

भगवान् महावीर स्वय हमारे सामने मार्ग प्रस्तुत करते है और सुधर्मा फरमा रहे है कि हे जबू ! मैं जिनकी वाणी के बारे मे तुमसे कह रहा हूँ वे महावीर साधारण पुरुप नही थे, साधारण ज्ञानी नही थे बल्कि वे महान ज्ञानी थे। उन्होने अनन्त जीवो को अभय दिया और असख्यजनो को ज्ञान नेत्र दे दिये।

मार्गदाता-शरणदाता

तीसरा विशेपण है 'मग्गदयेणं'। भगवान् महावीर ने ससार के भयकर जगल मे भटकते हुए सभी सासारिक जीवो को मार्ग बताया।

कल्याण का हेतु अ ाओ

एक कर्म काटने का हेतु है और दूसरा कर्म बाँधने का हेतु है। सुख के लिये, शान्ति और कल्याण के लिये क्या चाहिए ? जीवन मे निर्भयता। बध का हेतु पकडने मे कल्याण है या तोडनें का हेतु पकडने मे कल्याण है ? वन्ध तोडने का हेतु अपनाने मे ही कल्याण है। जिसमें कल्याण है उस हेतु को पकडकर चल।

मर्यादा करिए

भाई सोचता है कि मैं गृहस्थ हूँ, ससार मे बैठा हूँ, संसार की वातें हमे अपनानी पडती है।

भाई ! तू गृहस्थ है तो इसका मतलव यह नही है आँख मूँदकर चलता रहे। तेरे को ससार मे रहते हुए भी विवेक की आँख खोलकर चलना चाहिये। यदि इस वात को ध्यान मे रखकर चलेगा तो डरने की आवश्यकता नही है।

साधु त्यागी है। पाँच आश्रवो का सर्वथा त्यागी है और गृहस्थ आश्रवो का सर्वथा त्यागी नही है। वह पूर्णरूप से हिंसा का त्यागी नही है, झूठ वोलने का त्यागी नही है, चोरी करने का त्यागी नही है, कुशील का त्यागी नही है और परिग्रह का त्यागी नही है। लेकिन आज मैं चाहता हूँ कि आप कुछ न कुछ मर्यादा करे। सामायिक मे बैठे हैं तव तो दो घडी के लिये १८ पापो का त्याग हो जाता है। लेकिन सामायिक मे नही है तो पहले मोटी हिंसा नही करने का त्याग है क्या ? मैं पूछ रहा हूँ सवको। कुछ-कुछ समझने वाले यदि कोई मिल भी गये तो त्याग पच्चक्खाण वाले १०० मे से पाच भी मिलने मुश्किल है। इतनी वडी सभा मे दो चार या दस-वीस भाई यदि कदाचित मिल जायँ तो कोई खास उपलब्धि नही होगी।

मैं यह कह रहा था कर्मवन्ध के हेतु छोड दे। पच्चक्खाण नही लेने वाले भाई क्या सोचते हैं ? और जिन्होंने लिया है वे भी क्या सोचते हैं ? हमारे यहाँ कहावत है—"श्रावक के लाडका पचक्खाण" आप एक हजार की मर्यादा रखे तो भी पाँच व्रत अगीकार कर सकते हैं। २० लाख की मर्यादा रखे तो भी कर सकते है।

एक आदमी ने कहा कि मैं हवाई जहाज मे यात्रा नही करूँगा, दूसरे कि म्हारे समुद्र यात्रा और रेल यात्रा रो भी आगार है और कदेई

भी जरूरी काम हो वह भाई बैंगलोर जाने की तैयारी करेगा। यह ससार का राग है। इसी तरह से किसी के परिवार मे कोई बीमार है और १० दिन तक अस्पताल मे उसके पास रहना पडेगा तो बीमार के पास रहेगे। लेकिन इधर सतो ने कहा कि श्रावण के दिन है, धर्म का प्रचार करना है, साधना करनी है, मोहल्ले-मोहल्ले मे एक-एक भाई-बहिन के पास जाकर पूछना है कि कौन-कौन भाई-बहिन व्रत वाले है और कौन-कौन सामायिक करते हैं, कौन-कौन युवक व्यसन वाले है और कौन-कौन व्यसन से मुक्त है, इस बारे मे तपास किया जाय, ऐसी समाज की योजना है तो कितने लोग इस काम को करने के लिए तैयार होगे? आप कहेगे कि बापजी! किससे तपास करे वे तो बोलने के लिए भी तैयार नही है। हमारे पास समय नही है।

आप मे से कई लोग बारात या जान में तो गये होगे। जान मे जाने के लिए कोई सगा-सम्बन्धी निमत्रण दे तो यह कहते है क्या—मेरे पास अभी तो समय नही है, इसबार तो नही चल पाऊँगा। अगर ऐसा कहेगे तो वह दुबारा आपके पास मनुहार करने आयेगा। बाहर से निमत्रण है तो पत्र देगा, पत्र से नही जाएंगे तो तार देगा या आदमी भेजेगा। तब तो आपको जाना ही पडेगा।

कभी धर्म के काम के लिये भी आपने ऐसा किया है, याद आता है क्या? साधु जी यहाँ विराज रहे हैं, चलो भाई व्याख्यान सुनने चले या प्रतिक्रमण-सामायिक करने चले, आप भी साथ पधारो, ऐसा भी कभी कहा है क्या? या यह कहा है कि साधु जी विराज रया है, जिणने आवणो होवेला वो आवेला, म्हारे केणे सूँ कुण आवेला, ऐसा तो कहते होगे।

घर मे टाबर सो रहे है, सवेरे का ६ बजे का टाइम हो गया है, प्रार्थना का समय हो गया है, टाबर अभी उठे नही। घर के बाल-बच्चो को उठाकर कभी कहा कि प्रार्थना का समय हो गया है, महाराज के पास चलो या यही बैठकर नवकार मत्र जपो, स्वाध्याय करो। क्या कभी आवाज देकर बाल-बच्चो को तैयार करते है और उनको साथ मे लेकर कभी साधु जी के पास गये है? गाडी मे कही जाना है, मान लीजिये काश्मीर जा रहे हैं वहाँ पर घूमने के लिए जाने का प्रोग्राम है। साथ जाने वाले ५ आदमी जल्दी तैयार होकर समय पर नही आये तो क्या उनको आवाज देकर नहीं बुलाओगे या इसमे भी पाप लगेगा? कहीं जाना हो तो आवाज दोगे, शादी या विवाह के लिए आवाज दोगे, माल

खरीदने के लिए भेजना है तो आवाज दोगे लेकिन धर्म के कार्यो के लिए आवाज नही दोगे। यह उल्टी समझ है या सुल्टी ? क्या इस तरह मे धर्म और समाज का उत्थान होगा और क्या पाप मार्ग घटेगा ?

हरेक जिज्ञासु मुमुक्षु है, महावीर का भक्त है, उसको प्रभु महावीर कहते है कि देखो मैं इसी जन्म मे कर्म काटकर मोक्ष जाने वाला हूँ। जो इसी भव मे मोक्ष जाने वाला है, अपनी करणी पूरी कर चुका है, अव उसे किसी सकल्प की आवश्यकता नही है। हमारे मन को मजवूत करने के लिये सकल्प करना होता है और विना सकल्प को मजवूत किये करनी नही होगी और जव तक करनी नही करेगा तव तक कर्म नही कटेंगे और शासन ऊँचा नही रहेगा।

आपने जान तो लिया है कि भगवान महावीर ने कहा है कि पाँचवे आरा के अन्तिम समय तक जैन धर्म टिकेगा या चलेगा। अभी साढा अठारह हजार वर्ष वाकी है केवल ढाई हजार वर्प वीते है। अभी तो यह धर्मशासन काफी समय तक चलता रहेगा। चाहे वगैर नाम के ही रहे लेकिन यह कायम रहेगा। लेकिन इसको अच्छी तरह से कायम रखने के लिये एडी से लेकर चोटी तक पसीना वहाना पड़ेगा। भगवान के शासन के लिए, वीतराग मार्ग के लिए यदि तन का श्रम और योगदान देने मे अलसाते रहे, मुँह वचाते रहे तो कल्याण से वचित रहोगे। शासन का हित नही होगा, तो ससार मे कल्याण और शाति नही रहेगी। इसलिए महावीर के भक्त अपना कर्तव्य समझकर शासन सेवा मे लगे। श्रावण के पाँच दिन आज वीत गये। आपको अपनी साधना का क्रम वनाकर चलना चाहिए। युवक भी शान्ति से देखते नही रहे, कर्तव्य की दृष्टि से आगे आवें, दूसरों को आगे लावे और शासन की ज्योति जगावे। यह लक्ष्य होगा और गाग के साथ कार्य लेकर चलेगे तो इस लोक और परलोक मे कल्याण और शान्ति होगी।

जैन भवन, मद्रास
(दिनाक १-८-८०, समय ६ ३० प्रात)

१७
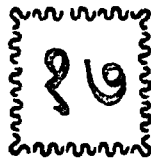
शांति का मार्ग : आचार-शुद्धि एवं वि ार-शुद्धि

प्रार्थना

अविनाशी अविकार, परमरस धाम हैं ।
समाधान सर्वज्ञ, सहज अभिराम हैं ॥
शुद्ध बुद्ध अविरुद्ध, अनादि अनन्त हैं ।
जगत शिरोमणि सिद्ध, सदा जयवन्त हैं ॥

कल्याणकामी मुमुक्षुओ !

पूर्ण पद का अधिकारी वनकर जिन्होने ससार के सामने अपना आदर्श रूप प्रस्तुत किया ऐसे सिद्ध प्रभु को इस मगलाचरण द्वारा नमस्कार किया गया है। अशरीरी होकर भी सिद्ध भगवान ससार के मुमुक्षुमात्र के ध्येय है, आदरणीय है, वन्दनीय है, और वे विश्व के आदर्श हैं। जव कभी भी कोई साधक वन्धन से मुक्ति पाना चाहेगा तो उसको सिद्ध के स्वरूप का अपने सामने आदर्श लेना पडेगा।

सिद्ध परमेष्ठी का आदर्श रूप

यद्यपि जीव और शिव मे वस्तुत. कोई अन्तर नही है, फिर भी व्यवहार मे प्रत्यक्ष रूप से अन्तर दिखाई देता है। एक सकर्मा है और दूसरा अकर्मा है। एक आवरण से आवृत है, ढका हुआ है और दूसरा खुला है, आवरण रहित है। एक वन्धन मे पडा हुआ है तो दूसरा वधन से मुक्त है। जिस किसी वधन वाले को वधन मुक्त होना है तो उसे किसका आदर्श सामने रखना चाहिए ? वधन वाला जवतक अपने सामने वधनमुक्त को लक्ष्य मे नही लेगा, वह स्वय भी वन्धनमुक्त नही हो सकेगा। यदि वह वधन वाला सोचता रहे कि मैं सी क्लास से वी क्लास मे और वी क्लास से ए क्लास मे राजनैतिक कैदियो के समान हो जाऊँ तो वह वधन मे ही है। कोई कैदी यह नही सोचता कि मैं उच्च कैटगरी मे रहूँ, अखवार

ज्ञानवान थे। वे अपने जीवन मे विशिष्ट प्रकार का अधिकार रखने वाले थे और लोकनाथ की स्थिति रखने वाले थे। इतना ही नही वल्कि उनका जीवन पूर्ण शुद्ध और पूर्ण निर्मल था।

कुछ विशेषण कल वताये थे "जीवदयेणम्" तक कल वोल गया था। उनकी योग्यता के साथ वे दूसरो के लिये भी हितकारी थे।

कोई खुद उज्ज्वल है लेकिन दूसरो के लिये निमित्तभूत नही वनता तो जनता उसे अपने लिए श्रद्धेय समझकर उपयोग करने के लिये तत्पर नही होती। लेकिन जव सुधर्मा स्वय कह रहे है कि भगवान महावीर स्वय निर्मल है, विशिष्ट है, दोषो से मुक्त है उसके साथ ही वे दूसरो के लिये हितकारी है, तो वे वास्तव मे इन गुणो को धारण करने वाले थे।

भगवान के विशेषण

इन विशेषणो की कहाँ तक वात कल हो चुकी थी ? श्रोता समुदाय की ओर से याद दिलायेगे क्या ? मैं आज आपको याद दिलाने वाला काम करता हूँ। आप मुझे रोज याद दिलाते रहे। कल की शब्दावली दुहरा देता हूँ।

"**अभयदयेण, चक्खुदयेणं, मग्गदयेणं, सरणदयेण, बोहिदयेणं**" यहाँ तक वताया था। श्रमण भगवान स्वय त्यागवान, शिक्षावान, विशुद्धिवान होते हुए भी दूसरे को देने वाले भी है।

भगवान मूकदाता थे

मैने 'देने' शब्द का प्रयोग किया है वह व्यवहार की भाषा मे है। व्यवहार की वात चल रही है। महावीर ससार को अन्न देने वाले है या जल देने वाले है या औषधि, वस्त्रादि देने वाले है ? जैसे कुछ लख-पति, करोडपति सेठ लोग दान देने वाले, सदाव्रत चलाने वाले, कपडे वितरण करने वाले होते है, इस तरह के द्रव्यदाता सैकडो मिल सकते है। कई माई के लाल ऐसे मिलेगे जो सुवह शाम बडे लेकर जायेंगे और कौओ व चीलो को इकट्ठा करेंगे; वन्दरो को इकट्ठा करेंगे, गौवो को इकट्ठा करेंगे, कबूतरो को दाना चुगायेंगे, इस तरह के दाता भी आपको सैकडो हजारो मिलेंगे। लेकिन महावीर मूकदाता थे।

दाता भी दो प्रकार के है। एक तो वोलते है, आवाज देकर पुकारते है। चवूतरे पर खडे होकर मोहल्ले के चौकीदार को आवाज लगाते हैं—

से निकलकर दस कदम चला और बीच ही मे चेतना वन्द हो गई, बीच ही मे जीवन-लीला समाप्त हो गई, भक्त सतो के दर्शन करने नही पहुँच सका, नदन मणिहार डेडके के जीव की तरह, तो क्या वह खाली हाथ गया या कुछ लेकर गया ? वाणी नही सुन सका लेकिन उसके भाव ठीक है; वाणी तो नही सुन सका लेकिन उसकी भावना थी कि वीतराग के चरणो मे पहुँचूँ उनकी शान्त मुखमुद्रा को देखूँ, उनके जीवन से कुछ ग्रहण करूँ तो वह भक्त उसकी जीवन-लीला बीच मे ही समाप्त हो जाने पर भी कुछ लेकर गया । स्वर्ग का अधिकारी बना ।

आपकी दुकान से सौदा लेने को एक भाई मद्रास आया । किसी कारणवश वह आपकी दुकान पर नही पहुँच सका, लेकिन माल लेने के इरादे से घर से निकला था और वीच मे ही जीवन-लीला समाप्त होगयी तो आपकी दूकान से तो उसको माल नही मिलेगा—सौदा करने पर ही मिलता, लेकिन हमारा माल आपके माल की तरह नही है । इसमे फर्क है । भावना शुद्ध है तो हमारा माल विना सौदा किये ही मिल सकता है ।

लेकिन कभी ऐसा मौका आ जाता है जबकि आवाज नही सुनाई देती । महाराज के पास हूँस लेकर आया कि दर्शन करे, सत्सग करे, लेकिन म्हारे पल्ले तो कुछ पडियो नही । ऐसी स्थिति के लिए शास्त्र मे भगवान कहते है कि चाहे उसके सुनने मे शब्द आवे या नही आवे, सूरत देखने मे आवे या नही आवे लेकिन उसकी भावना वीतराग के चरणो मे, सतो के चरणो मे पहुँचने की है । तव भी भाव रखने के कारण उसको शुभ फल अवश्य मिलता है । भावना रखने वाला एक-एक कदम बढाकर वहाँ तक पहुँचा है और पहुँचकर यदि उसने चिन्तन किया है, मनन किया है शान्त मुद्रा पर ध्यान किया है, धारण किया है तो अवश्य फल मिलेगा ।

मैं कह चुका हूँ कि दाता भी मूक और वोलने वाले ये दो तरह के होते है । सत भी ज्ञान की वाचना देता है । यद्यपि वे छद्मस्थ होते हैं, तीर्थंकरो की तरह पूर्ण नही होते तथापि वे भी ससार को अखूट निधि देते हैं । लेकिन उनका देना क्या है ? मूकदान । वात लम्बी हो गई ।

अभयदाता महावीर

भगवान महावीर ससार के जीवो को अभयदान देने वाले है, ज्ञान की आँखें देने वाले है, स्वय का मार्ग वताने के निमित्त वनने वाले है और

है तो उसका रास्ता है—एक श्रुतधर्म और दूसरा चारित्रधर्म को अपनाना। तश्रुधर्म से सबसे पहले विचारशुद्धि होती है और आचारधर्म से चारित्रशुद्धि होती है। वाणी का आचार, तन का आचार, मन का आचार ही हमारी आत्मशुद्धि मे सहायक होता है।

जरा सी शरीर सम्बन्धी, व्यवसाय सम्बन्धी, यश सम्बन्धी जीवन मे बाधा आ गई अथवा रुकावट आ गई, सामने देखा कि यह भाई हमारी तारीफ नही कर रहा है, कीर्ति नही बढा रहा है, आर्थिक विचारो मे रुकावट डाल रहा है तो मान बैठे कि यह हमारा शत्रु है या विरोधी है, ऐसा समझकर उस पर रोष आया, आर्तध्यान किया, रौद्रध्यान किया और अपनी आत्मा को नीचे गिरा दिया। महावीर ने कहा कि यह विचार मात्र ही सही नही है।

शत्रु कौन ?

भगवती सूत्र मे गौतम गणधर ने भगवान महावीर से प्रश्न किया—

"जीवा सयकड दुक्ख वेदेई परकड दुक्ख तदुभय कड दुक्खे"

कृपा करके बताइये कि जीव अपना किया हुआ दु ख भोगता है अथवा दूसरो का किया हुआ दु ख भोगता है या अपना और पराया दोनो का किया हुआ दु ख भोगता है।

अब इसका क्या उत्तर देना आपसे पूछे तो क्या उत्तर देगे। अपने किए हुए का फल स्वय ही भोगता है, बोलने मे तो उत्तर यही है लेकिन चिन्तन मे उतारो, बात को समझो। अडोस-पडोस को किसी के बारे मे पूछोगे तो कहेगे, अरे साहब आप इणने जाणो कोनी। ओ तो म्हाणो पूरो शत्रु है। इण रे पेट मे छुरियाँ हैं—

मुख कमलाकारं वाचा, शीतल चन्दनं।
हृदय कर्तरी सयुक्तं, त्रिविध धूर्त लक्षणम्॥

मुख कोमल कमल के समान सुन्दर है, वाणी अमृत जैसी है, वाचा शीतल चन्दन की तरह शीतल है। एक भाई बोलियो कि ओ तो म्हारो जानी दुश्मन है। लेकिन भगवान महावीर कहते है कि ये विचार रजोगुणी लोगो के समान है। साधारण ज्ञान वाले के विचार है लेकिन वास्तव मे तेरा शत्रु कोई बाहरी व्यक्ति नही है। तेरा शत्रु यदि कोई है तो वह तेरे भीतर है और यदि कोई मित्र है तो वह भी तेरे भीतर है।

ये विचार ज्ञानवान के है। मै यह प्रश्न आप लोगो से इसलिए कर लेता हूँ कि आप कुछ-कुछ याद रखते हैं या नही-और आपकी समझ मे बात आई या नही। आपसे पूछने पर मालूम हो जावे। समझ मे नही आया हो तो दुबारा स्पष्टीकरण कर दूँ।

प्रभु महावीर कहते हैं कि ये बाहरी शत्रु और मित्र मात्र तेरी कल्पना है, मिथ्या विचार है। इन मिथ्या विचारो से तू अनन्त काल मे कर्म बाँधता आया है और इस बार भी बाँध रहा है।

अधिकारलिप्सा अनादि

आपने सुना होगा कि मगधपति सम्राट श्रेणिक और महारानी चेलना का पुत्र कौणिक थोडा बडा हुआ, युवा अवस्था मे पहुँचा तब उसके मन मे अधिकार की भूख लगी। वह सोचने लगा कि सम्राट की आयु काफी हो गई है फिर भी राज्य सत्ता को छोड़ नही रहे है। ये हमको राज्य करने का मौका देने वाले नही है। न मालूम कब इनको सौ वर्ष पूरे होगे। जवानी मे हमको राज्य करने का मौका नही मिलेगा। यह मेरा काम है कि पिता से जल्दी छुटकारा पाकर रास्ता साफ करूँ, और साम्राज्य का भोग करूँ।

यह ससार की बहुत पुरानी लिप्सा है, लाखो, करोड़ो, अरबो, खरबो वर्षो से मानव की ममता शान्त नही होती है तो वह अपने प्यारे माता-पिता के अधिकारो को, मालिक के अधिकारो को खत्म करने की बात सोचने लगता है।

भारतीय सस्कृति मे चाहे जैन हो, चाहे वैदिक हो या और कोई हो, जीवन-काल के चार विभाग कर कहा गया है कि भाई २५ वर्ष की आयु तक विद्याध्ययन करो, अगले २५ वर्ष तक गृहस्थाश्रम के सासारिक कार्य कारोबार, व्यवसाय आदि करो, ५० वर्ष के हो जाओ, तो सासारिक कार्यो से किनारा कर लो।

आजकल हमारी सरकार भी ५५ वर्ष की आयु मे कर्मचारियो को रिटायर कर देती है। अगले २५ वर्ष धर्माचरण मे लगाओ और अपना अधिकार, हक हुकूमत अपने बच्चो को दे दो। यदि इस बात को समझ कर अपने अधिकार बच्चो को देते है, स्वय छोड देते है और बच्चों को सत्ता सँभला देते हैं तब तो सघर्ष की स्थिति पैदा नहीं होती।

लेकिन आजकल सासुजी सोचती है कि मैं हूँ तब तक मेरे से चाभियाँ लेने की किसकी ताकत है ? यह बीनणी हाल तक काई जाणे ? अच्छी तरह सूँ रसोई करणे रो भी हौसलो कोनी ? सेठ साहब सोचते है कि बाबू तो हाल तक टाबर है, इणमे हाल कारबार सँभालणरो कई हौसलो है। मारवाड मे कहावत भी है कि—"छोरा घर बसावे, तो बूढा-बूढी क्यो लावे" इस तरह के बडे लोग इस समझ वाले होते है।

अपनी अवस्था वृद्ध हो जावे तो भी घरवालो के भरोसे घर को नही छोडता समाज वालो के भरोसे—युवको के भरोसे समाज का काम नही छोडना चाहते और सरकार मे जो एक बार आ गये है वे सरकार की कुर्सी बहुत वृद्ध हो जाने पर भी नही छोडना चाहते। इन तीनो जगह अधिकार के लिए थापामारी की नौबत आ जाती है। कई नये वर्ग के लोग यह भी सोचते हैं कि सघर्ष करने के लिए तो हम सक्षम नही है, हमको मौका मिलेगा तब काम सभाल लेगे, अपने-अपने कर्तव्य का पालन करो। लेकिन ऐसे सतोषी, अपने आप मे मस्त रहने वाले जवान सब नही होते।

कौणिक के मन मे अधिकार की भूख जगी। वह भूल गया कि श्रेणिक कौन है ? मेरा पिता है और मेरे लिए उन्होने क्या-क्या नही किया। मेरे साथ पुत्र जैसा व्यवहार किया या शत्रु जैसा व्यवहार किया ? स्वार्थ के वशीभूत होकर कौणिक सारी बाते भूल गया। उसने अपने दस भाइयो को बुलाया और सगठन किया।

संगठन का आधार : भय अथवा भौतिक लाभ

बुराई के लिए सगठन जल्दी होता है, अच्छाई के लिए देर से होगा। या तो बुराई के लिए सगठन जल्दी होगा या तो भय से जल्दी होगा। आप पर कोई आफत आने वाली है यह सोचते है कि दूसरे पक्ष के लोग अपने को व्यापार से हटा देगे, प्रापर्टी छीन लेगे, कारोबार नष्ट कर देगें ऐसी स्थिति आ जाय तो और यूनियनो की तरह बाजार के लोग भी यूनियन बना लेगे, सारे बाजार के लोग सम्मिलित हो जायेंगे--यह सोचकर कि इसके बिना जिन्दगी रहने वाली नही है। चाहे हिन्दू हो, चाहे मुसलमान हो, या मारवाड़ी हो, गुजराती हो, तमिल हो—सब लोग यूनियन मे शरीक हो जायेगे। चाहे शराफा बाजार वाले हो, चाहे कपड़ा वाले हो या और कोई धधा करने वाले हो, सभी सम्मिलित हो जाते है।

कुक्कडे ने तेरी अँगुली काट ली थी जिससे घाव मे पीव पड गई थी और इस कारण तुझको नीद नही आ रही थी। तेरे पिताजी तेरी अगुली मुँह मे लेकर पीव निकालते थे। तेरे को फेक देने के कारण मेरे को उन्होंने ठपका दिया। मैं उनकी अर्द्धागिनी थी फिर भी तेरी खातिर उन्होने मेरे को अच्छा नही समझा। ऐसे परम उपकारी पिता को तूने क्या समझ कर जेल मे डाला ?

माता के थोडे उद्‌बोधन के कारण कौणिक के विचारो मे परिवर्तन हुआ। जब विचारो मे परिवर्तन हुआ तो अपना शत्रु समझने वाले श्रेणिक का आदर करने और उसके बन्धन काटने के लिए वह जेलखाने मे गया। श्रेणिक ने इसको आता देखकर सोचा कि न मालूम कि इस दुष्ट की और क्या मशा है ? कही यह मुझे बेमौत न मार डाले। इस भय से श्रेणिक ने अपनी अँगूठी मे रखा हुआ हीरा विष चूसकर अपने प्राणो का अन्त कर लिया।

कौणिक को अपने कृत्य पर बहुत पश्चात्ताप हुआ, इतनी ग्लानि हुई कि शर्म के मारे उसने राजगृह छोडकर चम्पा मे अलग राजधानी बना ली। यह है इतिहास की बात।

कौणिक को उस जगह राज्य करना खारा क्यो लगने लगा ? उसने सोचा कि इस जगह मेरे हाथ से पिता को बन्धन से डालने का अत्याचार-पूर्ण काम हुआ है। मैं इस जगह कैसे रह सकता हूँ। यह लौकिक उदाहरण है।

जब तक मिथ्या विचार थे तब तक क्या समझ रहा था और जब माता ने समझाया तब क्या समझने लगा। ऐसी लोक जीवन मे कई ऊँची-नीची कई घटनाएँ होती है और इसी कारण मानव राग-द्वेष मे गाफिल होकर परेशान रहता है।

अधर्म का मूल : मिथ्या आचार और विचार

भगवान महावीर कहते है कि अरे मानव ! तेरे को हमारी तरह से मुक्त होना है तो क्या कर ? दो काम कर। पहला धर्म है—सम्यक् विचार और दूसरा धर्म है सम्यक् आचार। अधर्म क्या है ? मिथ्या विचार और मिथ्या आचार। दुनिया भर मे अधर्म हो रहा है, आप मे भी आ जायगा। आपने कभी किसी की हिंसा करने का विचार किया होगा। मिथ्या विचार आने पर आपने झूठ बोलने का विचार किया, समाज मे झूठी बात फैलाने का विचार किया, यह हुआ मिथ्या विचार। दूसरी

और आपने कभी सोचा कि गलत भ्रान्ति हो गई है इसलिए सही स्थिति रखकर सबकी भ्रान्ति दूर कर दूँ, यह सम्यक् विचार है। एक धर्म है, दूसरा अधर्म। इस तरह से जीवन की हजारो घटनाओ के दो ही रूप है, धर्म और अधर्म।

मिथ्या विचार अधर्म और बध का कारण है। सम्यक् विचार धर्म है और पुण्य-धर्म का कारण है।

दूसरा नम्बर मिथ्या आचार का है। यह भी बध का कारण है।

धर्मनायक कौन ?

भगवान महावीर ने कहा कि उपदेश देना एक बात है और किसी को रास्ते पर लगाना दूसरी बात है और रास्ते पर चलाना अलग बात है। तीर्थंकर, आचार्य और धर्मसघ के नायक धर्म मे लगाकर ही अलग नही हो जाते है बल्कि धर्म पर चलाने का काम भी करते है। धर्म पर चलाने वाले को धर्मनायक कहते है। आपने गाँवनायक, नगरनायक, सघनायक, आदि शब्द सुने होगे। महावीर भगवान धर्मनायक है। धर्मनायक से लौकिक लिप्सा की पूर्ति नही होती। यदि समाज का नायक कोई बने तो उसको समाज की कुर्सी मिल सकती है। यदि कोई नगरपालिका का नायक बनता है तो उसको भी नगर की कुर्सी मिलती है इसलिए ऐसे आदमी को अपना समय देना भारी नही लगता।

अग्रेजी शासन के युग मे आनरेरी मजिस्ट्रेट हुआ करते थे। समाज के प्रतिष्ठित व्यक्तियो मे से किसी को यह आनरेरी पद मिल जाया करता था। सप्ताह मे एक या दो बार या नियत समय पर उसको अपने कोर्ट मे जाकर मुकदमो का निर्णय करना पडता था लेकिन उसको वेतन नही मिलता था, आदर मिलता था। छोटे-छोटे मुकदमे उसके पास आते थे। वर्तमान समय मे शायद यह प्रथा हटा दी गई है।

आज यदि किसी को सघ का नायक बना दे या धर्म का नायक बना दे तो साधर्मियो को सम्भालना उनका काम है। धर्म प्रवृत्ति मे किसी को कोई भ्रान्ति हुई है तो उसको दूर करने मे उसको रस आना चाहिए। धर्मनायक बनने वाले मे एक सघ की सहज वत्सलता होती है और सहज ही साधर्मी वत्सलता होती है। वह सोचता है कि तन क्या काम आयेगा ? मेरी वाणी क्या काम आयेगी ? मुझे टाइम मिलता है उसमे साधर्मी भाइयो का लाभ मिले तो लेऊँ, यश की आकाक्षा नही। अपना धधा छोडकर कभी नगर की व्यवस्था की बात हुई, कभी नया

कारखाना या इन्डस्ट्री खोलने की बात हुई, कभी कत्लखाना खोलना हुआ तो ऐसी चीजो के बारे मे उसको अपने विचार देने का मौका आता है। उधर तो वह कचरे मे भरे हाथ गदा करने को तैयार हो जायगा लेकिन जहाँ विशुद्ध अपना हित होता है वहाँ उसको समय मिलना मुश्किल होता है।

भगवान महावीर कहते है कि भाइयो ! तुम क्यो बुरा समझते हो ? मैं तीर्थंकर होकर इसी जन्म मे मोक्ष जाने वाला हूँ फिर भी धर्म का उत्थान कर रहा हूँ। मेरा भाई यदि गुमराह होगा, गलत रास्ते पर होगा और मै देखता रहूँ, एक आदमी आँखे न होने के कारण गड्ढे में गिर रहा है और दूसरा आँख होते हुए गिर रहा है तो अधा ज्यादा अपराधी या सूझता ज्यादा अपराधी, क्या पूछूँ आप से ? गिरने वाले को आँख की रोशनी नही है इसलिए गिर गया, दूसरा देख रहा है, कह रहा है कर्म फूटा इसका। मैं कहूँ और म्हारी नही माने, म्हारी बात चली जाय तो मैं क्यो कहूँ, कर्म मे होगा जो होगा। ऐसी समझ वाले कितने लोग होगे ?

इसलिए आज हमारे वीतराग मार्ग को मानने वाले लाखो की सख्या मे भक्त होते हुए भी एक-दूसरे को उपेक्षा भाव से देखते है। धर्ममार्ग की कोई साधना करता है या नही करता है, इसकी किसी को चिन्ता नही है। आने वाला, जाने वाला, कहने वाला कह देगा कि नास्तिक हो गया दिख पडता है। हल्की बात कर देगे लेकिन उसको प्रेम से रास्ते लगाने की बात नही कहेगे।

- भगवान ने जो सुन्दर सदेश दिया है, उत्तम चर्चा बताई है उसका चिन्तन करना है, मनन करना है, व्यवहार मे लाना है। ऐसा करेगे तो अपना जीवन परम शान्ति का अधिकारी बन सकता है।

सुधर्मा स्वामी ने जो ६ विशेषण आगे के आज बताये, उनको ध्यान मे रखे। भगवान उत्तम धर्मचक्र से चक्रवर्ती हैं। आपको उस चक्रवर्ती की वाणी सुनने को मिल रही है। आप उस पर चिन्तन करेगे, मनन करेगे, विचार करेंगे और जीवन को माजेगे तो आप भी भगवान महावीर की तरह परम शान्ति और परम आनन्द के अधिकारी बन सकेंगे।

जैन भवन, मद्रास
(दि० २-८-८०; समय ९-४५ प्रात)

१८
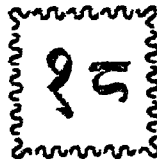
प्रवृत्ति-निवृत्ति का रहस्य

प्रार्थना

एगो वि नमुक्कारो, जिणवरवसहस्स वद्धमाणस्स।
ससार-सागराओ तारेइ, नरं वा नारिं वा॥
जो देवाणं वि देवो, जं देवा पंजलि नमसंति।
तं देव-देव महियं, सिरसा वदे महावीर॥

धर्मप्रेमी बन्धुओ!

परम वीतराग जिनेश्वर के उपदेशो का और उनकी शिक्षाओ का स्मरण करते हुए उनका हार्दिक अभिवादन करना हमारा आपका परम कर्तव्य है। इस रूप मे वंदन करने के बाद अब शासनपति भगवान महावीर जिन्होने ससार के जीवो का कल्याण करने के लिए, अपने तीर्थंकर नाम कर्म का भोग अदा करते हुए जो द्वादशांगी वाणी ससार के सामने देशना के रूप मे प्रस्तुत की, कुछ अपने कर्म हल्के करने को, आत्मा की शुद्धि करने को और चिन्तन को आगे गति देने के लिए, इस वाणी का हमें थोड़ा स्मरण करना है।

मानव चिन्तनशील प्राणी

मानव समनस्क है इसलिए उसका चिन्तन निरन्तर चलता रहता है। चाहे अर्थ का, चाहे काम का या मोक्ष का चिन्तन करता रहता है। उसका चित्त कभी चिन्तनरहित नही रहता, ऐसा कह दें तो कोई अति-शयोक्ति जैसी बात नही होगी।

चिन्तन की दो धाराएँ है। एक मन्द रूप मे चलती है जो अव्यक्त रहती है, दूसरी व्यक्त होती है। अव्यक्त चिन्तन की दृष्टि से हम कह

सकते हैं कि निद्रा मे कोई आदमी चिन्तन नही करता, तब समनस्क माना गया है या अमनस्क माना गया है ? मनोवैज्ञानिक चिन्तन करने वालो ने दो प्रकार की मन स्थिति मान्य की है ।

द्रव्यमन और भावमन

हमारे जैनाचार्यो ने द्रव्यमन और भावमन रूप दो पकार से मन की स्थिति स्वीकार की है । द्रव्यमन क्या और भावमन क्या ? मन का काम है चिन्तन करना । वचन योग से भाषा वर्गणा के पुद्गलो को लिया जाता है और भाषा के रूप मे परिणमन करके बाहर फेंका जाता है। यह वचन योग का परिणाम है । मनोयोग के पुद्गल अलग है । बात अपनी यह थी कि मन दो तरह के है एक द्रव्यमन और दूसरा भावमन ।

आप मे, हम मे और केवली तक मे द्रव्यमन का सद्भाव है । आप मे और हम मे द्रव्यमन भी है और भावमन भी है। द्रव्यमन का काम है सोचना, प्लान बनाना और उसको किस रूप मे परिणत करना इस प्रकार की योजनाओ को द्रव्यमन द्वारा मूर्त रूप दिया जाता है । भावमन केवल वेदन करता है ।

अच्छा हुआ, बुरा हुआ, अनुकूल लगा, किसी ने कुछ बोला वह मुझे कैसा लगा, कैसा छूआ, मन को कैसा लगा इन्द्रियो के सामने कुछ वस्तुएँ अनुकूल आई या प्रतिकूल आई । उन विषयो को ग्रहण करना और चिन्तन करने का काम मन का है ।

इन्द्रियाँ केवल अपने-अपने विषय को ग्रहण करती है । जैसे आँख का काम है रूप के विविध प्रकारो को ग्रहण करना । काला, नीला, हरा, केशरिया, पँचरगा, दुरगा भी देखा और राजस्थान का मोलिया भी देखा । आँख का काम देखना है । देखने के साथ उस पर मन को खुशी हुई नाखुशी हुई, अच्छे-बुरे का टिप्पण करता है यह काम मन का है ।

कई आदमी टिप्पण करने वाले होते है लेकिन हमारे तन मे भी जो टिप्पणी लगाने वाला है, वह मन है । यह द्रव्यमन की बात कही । भावमन का काम वेदन करना है, वह इतना-सा अपना सामर्थ्य रखता है। वह प्लान नहीं बनाता, चिन्तन नही करता, मनन नही करता । इसलिए शास्त्रकारो ने, धर्माचार्यो ने जीव का विभाग करते हुए द्रव्यमन सिर्फ पचेन्द्रिय जीवो मे माना है और भावमन एकेन्द्रिय मे पचेन्द्रिय तक सभी जीवो मे मान्य कर लिया है ।

को ग्रहण करते हुए हम मे जब तक अकषाय भाव नही आ गया तब तक विकार भाव उत्पन्न होगे। लेकिन मन को जीतने का अभ्यास करना है, विजय का अभ्यास करना है। जिसने स्वय इस अभ्यास को पूर्ण रूप से अख्त्यार कर लिया है वे वीतराग है, और वे हमको विकार-विजय की शिक्षा दे सकने है। इसलिए वीतराग विज्ञान के सदेश और वाणी के बारे मे चिन्तन करना, मनन करना हमारे लिए अत्यन्त आवश्यक है, लाभकारी है।

वीतराग का स्वरूप

वीतराग का विज्ञान कैसा होता है और वीतराग का स्वरूप क्या है इस बाबत पाँचवे गणधर सुधर्मा स्वामी समवायाग सूत्र की वाणी मे फरमाते है। भगवान वीतराग ने अपनी पूर्ण दशा मे शास्त्रो मे जो उपदेश दिया है, वह हे आयुष्मान जबू ! मैं तुमको बता रहा हूँ।

ये भगवान् महावीर कैसे है, उनका स्वरूप कैसा है यह मैं आपको कई दिनो से बता रहा हूँ। हमारा जो शास्त्रीय सदर्भ चल रहा है उसमे उनके रूप का ज्ञान नही कराया। शरीरधारी के दो चीजे होती है— पुदगलभाव भी होता है और आत्मभाव भी होता है।

पुद्गलभाव और आत्मभाव

पुद्गलभाव क्या होता है इसका जवाब आप श्रोताओ मे से कोई देगे तो मुझे खुशी होगी।

आप चाहे हमारे जैसे किसी तनधारी साधु को लीजिए, तीर्थंकर या गणधर को लीजिए इनमे से आप किसी का वन्दन करेगे तो दो रूप होगे, एक पुद्गलभाव और दूसरा आत्मभाव।

आप मेरे शरीर की लबाई को, मेरे रग-रूप को, मेरी आवाज को, मेरे स्वर को देखकर वर्णन करने लगें। ऐसी सूरत है, ऐसा रग है, इतनी लम्बाई है, ऐसी वाणी है, यह क्या हुआ ? पुद्गलभाव हुआ। लेकिन ज्ञानवान, ध्यानवान, शक्तिवान, अपरिग्रहवान शब्दो को उपयोग करके राग-द्वेष से ऊपर उठकर वीतराग भाव से किसी का चिन्तन किया जाय तो यह आत्म-भाव है।

उववाई सूत्र मे दो तरह से वदन किया है। पुद्गलभाव है, जो शरीर की पर्याय है। लेकिन आत्मा की दशा दूसरी है। यहाँ पर सम-

याग सूत्र में भगवान महावीर ने आत्मभाव का परिचय देकर हमारे हृदय को झकझोरा है। वे कहते हैं कि पुद्गलभाव की ओर मत देखो, आत्मभाव की ओर देखो इससे हमारा और जग का कल्याण होगा।

भगवान के विशेषण

भगवान महावीर के आत्मभाव के बारे मे कल कुछ विशेषणो का वर्णन किया था। "धम्मदयेणं, धम्मदेसएणं, धम्म-नायगेणं, धम्मसारहीण, धम्म-वरचाउरतचक्कवट्टीणं।"

इन विशेषणो से कहा कि भगवान अर्थदाता नही हैं, भोगदाता नही है। ससार के जीव भोगदाता और अर्थदाता की ओर ज्यादा कृतज्ञता प्रगट करने वाले मिलेगे। लेकिन यह ध्यान रखना है कि अर्थ, काम और भोग का आदान-प्रदान करने वाले हमारा इतना कल्याण नही करते, हमारे जीवन को ऊँचा नही उठाते, लेकिन धर्मदेव हमारे जीवन को ऊँचा उठाते है।

धर्मसारथी के गुण

भगवान धर्म के सारथी थे। इसका मतलब यह हुआ कि धर्म एक रथ है और मुमुक्षु जीव उस रथ मे बैठने वाला है और उस रथ मे बैठकर वह ससार रूपी अटवी को पार करना चाहता है। लेकिन चलाने वाला सामर्थ्यवान नही है, तो केवल रथ मे बैठने से काम नही चलेगा। गाडी बढिया है, डबल इजिन है, सचालन की सामग्री सब कुछ मौजूद है लेकिन कुशल ड्राइवर नही है तो क्या उस गाडी मे बैठने वाले भाई कुशलतापूर्वक मद्रास से बैंगलौर पहुँच जायेंगे। बैंगलोर पहुँचना तो दूर रहा, बैठने वालो को मालूम हो गया कि कुशल ड्राइवर नही है, एक छोकरा बैठकर चला रहा है तो वे उसमे बैठना कबूल नही करेंगे। हमारी बहुत बडी अभिलाषा बैंगलौर जाने की है। रथ भी मिल गया, वहाँ वालो ने ठहरने की सुन्दर व्यवस्था कर दी है। लेकिन रथ चलाने वाला कुशल सारथी नही है तो चाहे मोटर गाडी हो, बैल गाडी हो या घोडा गाडी हो तो कही पर मोड आयगा, घाटी आयगी तो उस जगह बैल या घोडे का पता भी नही लगेगा और बैठने वाले की क्या दशा होगी, आप स्वय विचार करले। इसलिए अच्छे चालक का होना आवश्यक है।

धर्म भी एक रथ है। धर्म रथ के दो घोड़े है—तप और नियम।

मैं कोई नई उपज की वात कह रहा हूँ, ऐसी बात नही है। हजारो वर्ष पहले हमारे धर्माचार्यो ने इस चीज को साफ कर दिया था कि धर्म जीवन का सारथी होता है।

हमारे आचार्य देवजी ने सघ को रथ माना है। यदि यह रथ सवल है, और उसको वहन करने वाला, चलाने वाला सुसस्कृत है, सशक्त है और सारथी भी तजुर्बेवाला मार्गदर्शन करने वाला है तो सघरूपी रथ से यात्रा पूरी करना मुश्किल नही होगा।

साधक को प्रेरणा उसकी योग्यतानुसार

अनेक उपमाओ से—मेरु और मन्दिर से भी सघ की उपमा दी है। अपना प्रसग सघ के बारे मे चल रहा है इसलिए कहा कि भगवान् महावीर धर्म रूपी रथ के सचालक है, सारथी है। उनके सामने समय-समय पर साधको को मुक्ति-मार्ग मे आगे वढाने का प्रश्न आता तो वहुत सुगमता से द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव किसका क्या है इस दृष्टि से किसके जीवन को किधर मोडना है यह देखकर-जानकर उसको उसी तरफ मोड देते थे। यह काम विना कुशल सारथी के नही हो सकता।

एक ओर भगवान महावीर के चरणो मे सयम की आराधना करने वाला एक वाल मुनि अतिमुक्तकुमार जैसा आता है और एक मेघकुमार जैसा आता है और एक भगवान नेमिनाथ के शासन मे गजसुकुमार जैसा आता है।

एक को वताया कि सयम ले लिया, लेकिन अव कैसे चलना है, कैसे वैठना है, किस तरह से सयम का पालन करना है। इस तरह की शिक्षा लो और स्थविरो के पास अध्ययन करो। एक शिष्य को तो यह आदेश दिया और स्थविरो के अधीन कर दिया। किसलिए ? इसलिए कि मोक्ष मार्ग की आराधना करने और उसके योग्य शिक्षा लेने के लिए। उसको इस मार्ग पर लगाकर कहा कि "पढम नाण तओ दया" देखो, पहले ज्ञान करो और फिर क्रिया करो।

जव कभी ऐसा मौका आता है तव सारथी को ऐसा आदेश देना पडता है। दूसरी ओर ज्ञान हो गया अव ज्ञान मे ज्यादा समय लगाने की आवश्यकता नही है।

गजसुकुमार को कहा कि श्मशान मे जाकर पडिमाधारी की तरह साधना करो। इस तरह का मोड विना प्रतिक्रमण जाने नही होता और जिन्होने छोटे-मोटे आचार्यो के पास अध्ययन नही किया है, ६ पूर्व

की जिसको वस्तुओ का ज्ञान आ गया है, वही पडिमा धारण करने का अधिकारी हो सकता है। लेकिन इससे पहले कोई चलना चाहे, जाना चाहे रास्ता बदलना चाहे तो उससे हॉ, ना का सशोधन कौन करे।

आचार्य या नायक तो अधिक साधुओ के वीच मे रहकर अपना समय देता है, सस्थाओ के लोगो को भी समय देना पडता है। इतने साधुओ की शका समाधान करनी पडती है। जो अन्य साधु है उनको भी आहार लेना पडता है, कमरा साफ करना पडता है, परिमार्जन करो, दोनो टाइम प्रतिक्रमण करो। २० साधु है तो प्रत्येक को तीन वार वदन करो तो ६० वार करना पडता है। आपका छुटकारा तो 'मत्थएण वदामि' कह कर ही हो जायगा, लेकिन साधु कल्प की मर्यादा है। सुबह प्रतिक्रमण के पहले वदन करना पडेगा, मध्यान्ह मे फिर वदना करनी पडेगी, श्रमण सूत्र पढने की आज्ञा ले तब भी वदन करना पडता है।

आपका तो सामूहिक वदन हो जाय तो भी मान लिया जायगा। लेकिन साधु को क्रमश करना पडता है। कोई आकर कहता है कि वाप जी अकेला विहार करने की इच्छा है, आज्ञा दे दीजिए तो- उसके वारे मे भी सोचना पडता है। शास्त्रो मे एक जगह कहा गया है कि जिस साधु मे आठ गुण हो वह अकेला विहार कर सकता है लेकिन यह देखना पडता है कि अकेला विहार करते समय वह वीतराग की आज्ञा को भग तो नही कर रहा है। उसका परीक्षण-निरीक्षण करके किसको एकाकी विहार करने की अनुमति देनी ? किसको सिंघाडे मे रहने की इजाजत देनी, किस साधु को सिंघाडे का मुखिया वनाकर भेजना, किसको आधीन रख-कर भेजना। ये काम स्वेच्छा से करने लगे तो सघ की व्यवस्था अच्छी तरह से नही होती है, इसलिए धर्मरथ को चलाने के लिए योग्य सार्थवाह चाहिए। तभी वह रथ सुन्दर ढग से आगे वढ सकता है।

भगवान के अन्य विशेषण

सुधर्मा फरमा रहे है कि महावीर कौन है। वे धर्मवाहन रथ के सारथी है। इतना ही नहीं चार विशेषण आगे के और आये हैं "धम्म-दयेणं, धम्मदेसएण, धम्मनायगेण, धम्मसारहीण, धम्म-वरचाउरतचक्कवट्टीणं" जो धर्म-रूपी चक्र के द्वारा चार गति का अन्त करने वाले है, इसलिए धर्मचक्र के चक्रवर्ती है। इस तरह से महावीर देव ने इस समवायाग सूत्र से उपदेश दिया है।

ये २२ विशेषण हो गये। नमोत्थुणं के पाठ मे कुछ शब्द और बीच मे आते है। इन शब्दो को या विशेषण को यहा न लेकर "अप्पडिहय-वरनाणदसणधरेण' को ले लेते है। सारथी है लेकिन एक सारथी समय का ज्ञान कराता है, सामने वाले के अधिकार का ज्ञान कराता है, लेकिन परिणाम का नही कराता। नतीजा क्या निकलेगा ? यदि उस वक्त साधु, साध्वी, श्रावक, श्राविका अमुक छूट माग रहे है उनको छूट देगे तो भावी परिणाम क्या निकलेगा इसको सारथी जान सकता है। छूट का परिणाम नही जाने और छूट दे दे तो क्या होगा ?

अप्रतिहत ज्ञान-दर्शनधारी

सारथी एक अच्छे कुशल डाक्टर की तरह अधिकारी के अनुकूल योग्यता वाला और हित को पहचानने वाला होना चाहिए। यदि हित को पहचानने वाला नही है तो काम नही चलेगा। इसलिए हरेक को धर्मसारथी वनने का अधिकार नही है। साधक जीवन के धर्ममार्ग पर चलना और साधना करने का अधिकार हरेक को है, लेकिन सचालन करने का अधिकार हरेक को नही है। खुद चलना और वात है और दूसरो को चलाना और वात है। सारथी का अतिशय ज्ञानयुक्त होना जरूरी है।

सुधर्मा कहते है कि महावीर देव ने हमको ज्ञान वताया है। वे कुशल नेतृत्व करने वाले सेनापति की तरह हैं। वे पूर्ण ज्ञान को रखने वाले है। उनका ज्ञान अप्रतिहत है। वीच मे कोई पर्दा रखने वाला है, उसको अप्रतिहत नही कहते। पर्वत या पहाड, झाड, वृक्ष, अज्ञान आदि किसी भी प्रकार के आवरण से जो ज्ञान रुके नही, उसको अप्रतिहत कहते है।

हम यह नही जान सकेगे कि दीवार के पीछे कौन है अतः हमारा ज्ञान प्रतिहत और महावीर का ज्ञान अप्रतिहत है। इसलिये अप्रतिहत ज्ञान, दर्शन को हासिल करने वाले वे है जिनका ज्ञान किसी द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव से नही रुके। काल से भी अपनी नजर रुक जाती है। रात्रि का समय हो तो जितनी दूर तक दिन मे देख सकते हैं उतनी दूर तक रात्रि मे नही देख सकते।

मानव की दृष्टि द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव से रुक जाती है। कभी सुख मे है, कभी चिन्ता मे है, कभी उन्माद मे है। आप का दिमाग इधर-उधर व्यस्त है, उस वक्त आपके सामने आने वाला भाई कोई वात कहना

एक भाई ने झूठ बोलने का त्याग किया तो अब बोलना क्या ? धर्मग्रन्थो का पाठ उच्चारण करना। एक ने झूठ बोलने की निवृत्ति लेकर प्रवृत्ति की। एक भाई सामायिक मे बोलेगा लेकिन ऐसा बोलेगा कि उसके कर्मो की निर्जरा हो । एक भाई सामायिक मे बोलियो लेकिन काई बोलियो, मालूम है काई मद्रास मे कॉई हो रह्यो है, किणरे अठाई या और कोई तपस्या है, इणरी लिस्ट तैयार करनी है। कुण अठाई पचखण नें आवेला, जद कितना बैंड होवेला, पीयर वाला कितरा वेश देवेला, प्रभावना मे कुण नारियल देवेला, कुण पतासा देवेला। बात तो इस तरह की कर रहा है तो क्या उसके सावद्य योग के त्याग का पालन होगा ? उसके कर्मो की निर्जरा होगी या बध होगा ? कोई उससे कहे कि अरे भाई तू तो सामायिक मे बैठो है, ये बातो क्यो कर रयो है ? सामायिक मे बैठो तो हूँ लेकिन जो बात मने मालूम है वह आपने मालूम नही है, उणरी जानकारी आपने भी होवेला। कई माताएँ-वहिने सामायिक मे बैठी-बैठी लम्बा चौडा प्लान बना डालती है और आधा घटा का समय बिता देती है। पताशा, नारियल और वेश की बाते करती है। सामायिक मे इस तरह की बाते करने से निर्जरा होगी या राग-द्वेष बढेगा ?

मुनियो के धर्म के बारे मे आपने सुना होगा। उसमे समिति और गुप्ति दो बाते कही गई है। सामायिक वालो को भी भाषा समिति का ध्यान रखना है।

टाबर को आपने मना कर दिया कि मैदान मे अन्य छोकरो के साथ गुल्ली-डडा, ककरी आदि का खेल नही खेलना है। लेकिन उसको क्या करना है यह नही बताया तो क्या टाबर चुपचाप बैठा रहेगा ? और कुछ नही करना है तो वह कागजो के टुकडे-टुकडे करेगा, मिट्टी का आँगन है तो उसको कुचर कर रेत निकालेगा, क्योकि बच्चे का स्वभाव है कि वह खाली नही रहेगा। उसको लिखने-पढने के लिए पेन्सिल, पाटी, पोथी देते तो वह अपना समय उसमे लगाता।

साधना शुद्ध हो

इसलिए तीर्थंकर देव ने कहा कि मानव सामायिक साधना को एक उदाहरण मानो। एक तरफ असयम को रोको और दूसरी तरफ सयम मे प्रवृत्ति करो। न तो तन योग स्थिर रहने वाला है, न वाणी और न ससार मे रहकर आदमी लम्बा समय बिताने वाला है और

मनोयोग तो क्षण भर भी खाली रहने वाला नही है। तो सामायिक साधना मे हमको करना क्या है? मन मे शुभ चिन्तन किया जाय, सामायिक का रूप कहा और छोटा सा श्लोक कहा—

त्यक्तार्तरौद्रध्यानस्य, त्यक्त सावद्य कर्मण।
मुहूर्त समतायास्त, विदु सामायिकं व्रतम्॥

कहा कि सामायिक क्या चीज है? पगड़ी टोपी उतारकर, कुरता खोलकर एक आसन पर विराजमान हो गये। हाथ मे जपनी ले ली और गटागट कर रहे हैं, झटाझट हो रहा है, घड़ी देखते रहते हैं कहीं सामायिक का समय तो पूरा नही हो गया। इस तरह से सामायिक अदा करने से कोई खास लाभ नही है।

महावीरदेव ने अपनी वाणी मे फरमाया कि जीवन में असयम दुख का कारण है। ससार मे मानव चौबीसो घटा आरम्भ, परिग्रह, विषय, कषाय में तल्लीन रहता है। उसके कर्मबन्धन को हल्का करने के लिए सामायिक साधना बनाई है। बात है तो अच्छे ढग से करने की। इसलिए अच्छे ढग से कर। थोडा कर, ज्यादा कर, लेकिन जो करता है, उसको अच्छे ढग से कर।

एक आदमी को हाल साफ करने के लिए कहा गया। वह साफ करने लगा। कुछ इधर झाडू मारा, कुछ उधर मारा, कही कागज के टुकड़े बिखरे रह गए, कहीं मिट्टी रह गयी फिर भी उसने कह दिया कि मैंने सफाई कर दी। एक दूसरे आदमी ने कहा कि हाल बडा है पूरा हॉल मेरे अकेले से साफ नहीं होगा, एक हिस्सा साफ करूँगा। उसने साफ करना शुरू किया और उसमे एक चिमटी भर भी रेत नही रखी और उस हिस्से का अच्छी तरह साफ कर दिया। धूल, कचरा कुछ भी नही रखा। इस तरह से कुछ अच्छा काम करने वाले व्यक्ति भी होते हैं। यह व्यावहारिक नजीर है। इस पर भी चिन्तन करना है। इसी तरह से हमारी सामायिक साधना कैसी होनी चाहिये।

दोय घडी निज रूप रमणकर, जग विसरावेला।
काम, क्रोध, मद, लोभ, दाग को, दूर हटावेला॥
करलो सामायिक रो साधन, जीवन उज्ज्वल होवेला।

सामायिक का लाभ अत्यधिक

महान अनन्त-अनन्त पुण्य का उदय होता है और ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय और अन्तराय कर्म का क्षय-उपशम होता है तब सामायिक

का लाभ आदमी को मिलता है, हरेक को नही मिलता। इन्द्र सामायिक के लिए तरसता है, ३२ लाख विमानो का स्वामी, जिसके आधीन पहले देवलोक के ३२ लाख विमान और दूसरे देवलोक वाले के २८ लाख विमान और असख्य देव देवियो का मालिक इन्द्र तरसता है और कामना करता है कि सामायिक का लाभ मुझे मिले। एक तरफ तो इन्द्र है तथा दूसरी तरफ आप है, जिनको सहज ही मे यह लाभ उपलब्ध है लेकिन आप समझते है कि गाठ धरदी माथे पर। आप कहेगे कि दिन भर सामायिक करे तो कई कमावो और बाल-बच्चो ने कई खिलावो या मूडो बाधकर महाराज की तरफ बैठ जाओ। ऐसा जवाब देने वाले मिलते हैं। वे सोच नही रहे है कि यह कितना कठिन और महत्वशाली है। उसमे हम तनयोग से, मनयोग से और वाणीयोग से घडी भर बैठकर सामायिक की साधना करे तो हमारे अनत-अनत कर्म समाप्त हो जाते है।

सामायिक मे धर्मध्यान ही करिए

आर्त और रौद्रध्यान का विसर्जन करे और धर्मध्यान को अगीकार करे। अभी शुक्लध्यान की बात नही कह रहा हूँ। आर्त, रौद्रध्यान को छोडकर जो धर्मध्यान मे लीन होता है और एक मुहूर्त का समय सामायिक या धर्मध्यान के चिन्तन मे लगाता है, उसका कल्याण होता है। यो दोनो हो गए, एक को छोडना और दूसरे को ग्रहण करना। खाने का विचार, पीने का विचार, बैगलोर जाने के लिए गाडी का विचार, टिकट लेने का विचार किया, यह सब आर्तध्यान है। बैगलोर जाना है कल लेकिन आज सामायिक मे बैठा विचार करे—कठे मिले है रिजरवेशन। पास मे बैठने वाला सुनले और कहे कि कैसे बात कर रहे हो तो जवाब देवे कि हमारे कल का रिजरवेशन कराना है। अरे अभी तो सामायिक मे बैठे होए कई विचार करो फिर तो मौको नही मिलेला। खुशालचन्दजी ओ काम करजो। यह कौन-सा ध्यान हुआ ? आर्तध्यान। यह जो हमारा हाल चल रहा है, उस तरफ दृष्टिपात नही करेगे। छोटा-सा धब्बा कपडे पर लग जाय तो उसे धोने का विचार करते हैं लेकिन हमारे आचार-विचार पर धब्बा लग रहा है उसको धोने का विचार नहीं करते।

पुराने जमाने मे श्रावक एक विशेष शब्द बोलते थे 'निस्सहि निस्सहि।' वे कहते थे, भगवान्! मै तन से, मन से, वाणी से सावद्य कर्मो का निषेध करता हूँ।

घर मे, समाज मे लडाई से वचना है तो गम खाना । यह लाउडस्पीकर के समान वात है घर-घर पहुँचती रहेगी । ज्ञान की बात तो याद नही रहेगी लेकिन अगर किसी से बोल-चाल हो गयी तो उसको रेडियो बना लेंगे और घर-घर पहुँचा देगे । अपना दिमाग खराव होगा और दूसरो का भी खराव करेंगे ।

समाज अपने ज्ञान साधना मे आगे बढने के वजाय पीछे हट रहा है । गलत आदतो का निराकरण कीजिए । सामायिक साधना का नियम करेंगे तो लाभ होगा । ज्ञानियो ने कहा है कि शरीर मे वीमारी ज्यादा रहती है तो कम खाना चाहिए । कम खाने से वल कम हो सकता लेकिन वीमारी नही होगी, ज्यादा खा लिया तो वीमारी आयगी । घर से खाकर गए और किसी ने हाथ पकड़कर कहा कि अरे, भाई साहव ! आज तो आपने म्हारे घर पर चालनो पडेला, दो कवा लीजो । अरे ! साहव, खाकर आया हूँ । फिर भी चालनो ही पडेला । लिहाजू स्वभाव के कारण चले गए । महाजन साहव की आदत ऐसी पड गई है कि ना ना कहते पायो उतार लेवे । सामनेवालो समझ लेवें कि झूठ वोलने की आदत पड गई है, इसण वास्ते केवे कि खाकर आया हूँ । सामने वालो विश्वास नही करे कि खाकर आया है । वो केवेला कि पधारो तो सही, रुचि होवे जितो लीजो । हाँ ना कहता हुआ भी दो-चार चक्कियो पर तो भाई साहव हाथ फेर ही देवे । यह खाने मे असयम है । इसी तरह से महाजन समाज रोग मे पडता है, शोक मे पडता है ।

आर्त-रौद्रध्यान छोडकर भगवान महावीर के सदेश और उनकी शिक्षा को अमली रूप देकर चलोगे तो सामायिक शुद्ध होगी, इस लोक और परलोक मे आनन्द, कल्याण और शान्ति प्राप्त करोगे ।

जैन भवन, मद्रास
(दि० ३-८-८०, समय ६ ४५ प्रात)

एक बात यह भी है कि सद्गुण और अच्छाई तो पीछे सरकती जा रही है पर बुराई आगे जा रही है। यह काल की विशेषता है। निर्बलता वढेगी तो मानसिक सवलता घटेगी। सम्यक् श्रद्धा घटेगी तो अश्रद्धा वढेगी। प्रीति घटेगी तो अप्रीति वढेगी। यह सव अवसर्पिणी के समय का प्रभाव है।

काल-प्रभाव से बचने के उपाय

उस प्रभाव से वचना कैसे ? इसके दो उपाय हैं। सम्यक्ज्ञान और सम्यक्क्रिया इसकी रोक के साधन है।

आपने कभी देश की स्थिति का निरीक्षण किया हो तो आपको मालूम होगा कि कुछ वर्षो से देश मे वाढ का प्रकोप वढने लगा है। नदियाँ अपना रास्ता वदलने लगी है। उनका जो क्षेत्र है, विस्तार है जरा का वह विस्तार तथा क्षेत्र भी वदल रहा है, तो मानव ने क्या किया, आपको मालूम होगा ? आप व्यापारी है, आपको इधर-उधर की वात मालूम न हो फिर भी जन साधारण मे जानकारी का आदान-प्रदान के साधन वहुत वढे हुए है इसलिए थोडी वहुत जानकारी हर एक को होगी।

प्राचीन ग्रन्थो का चिन्तन अधिक लाभप्रद

इसी तरह से भगवान महावीर ने देखा कि अवसर्पिणी काल का हीन प्रभाव मानव जगत को लेकर डूब न जाय इसलिए उन्होंने कहा कि मानव शास्त्रो की निधि तेरे पास है, इस ज्ञान की निधि से सम्यक्ज्ञान और सम्यक्आचरण का तू अवलम्बन ले तो तेरे सद्‌गुणो की जो पीछे हटने की स्थिति है, उससे पीछे न हटकर जगह पर कायम रहेगा।

इस दृष्टि से शास्त्रो की वाणी का चिन्तन होता है। इसलिए हजारो वर्ष हो जाने के वाद भी आज की सैकड़ो पुस्तके है उनको लेकर चिन्तन करने को अपेक्षा शास्त्रो की हजारो वर्ष पहले की वाणी को लेकर उसका चिन्तन करना अधिक लाभकारी मानते है।

अब उन्ही शास्त्रो मे से समवायाग सूत्र पर विचार आपके सामने चल रहा है। सुधर्मा स्वामी जो हमारे पाँचवे गणधर हैं, उन्होने भगवान की वाणी को जम्बू के सामने रखते हुए पहले उनके स्वरूप को वतलाया कि भगवान महावीर कैसे थे। एक विशेषण कल वताया था "अप्पडिहय-वरनाणदसण-धरेणं, विउट्टछउमेण" जो ज्ञान की वात करने वाले हैं उनका स्वय का भी ज्ञान पूर्ण होना चाहिए। जिनका ज्ञान पूर्ण नही होगा वे हमको सही मार्ग की जानकारी नही दे सकेगे। इसलिए भगवान को यह विशेषण दिया।

अव आगे का विषय है कि ज्ञान तो धारण कर लिया, ज्ञान पा लिया, दर्शन पा लिया लेकिन जीवन मे अपनाया नही तो वह पोथी के बैगन की तरह है। पोथी मे ज्ञान है लेकिन आचरण मे नही है तो वह ज्ञान हमारा सम्वल नही वन जाता।

भगवान महावीर के जीवन का स्वरूप वताते हुए सुधर्मा कह रहे है कि वे ज्ञानवान हैं। यही नही लेकिन उन्होंने क्या किया "विउट्ट-छउमेणं" करीव-करीव वहुत से भाइयो को, माताओ को नमोत्थुण का पाठ आता है। आप मे से कोई "विउट्टछउमेणं" का अर्थ वतायेगे ?

उन्होने प्रत्यक्ष ज्ञान और दर्शन को धारण किया। "विउट्ट और छउमेण" दो पद हैं। यदि शव्द को तोड़ा जाय और विभाग किया जाय तो शव्द अलग-अलग हो जायेंगे। पहला विउट्ट यानी अलग होना। छउमत्थ (छद्मस्थ) का एक अर्थ कपट वाला होता है लेकिन यहाँ केवल कपट अर्थ नही है। जो जीवन मे अज्ञान और मोह या छद्‌म दशा का

परिणाम है। जिनका अज्ञान दूर हो जाता है और मोह दूर हो जाता है वे क्या कहलाते है—"विउट्टछउमेणं"।

उपशान्त और क्षीण मोहनीय गुणस्थान का स्वरूप

ग्यारहवे गुणस्थान मे मोह का उपशम हो जाता है। ग्यारहवे गुणस्थान का नाम किसी को याद हो तो बतावे। इसका नाम है उपशान्त मोहनीय और बारहवे का नाम है क्षीणमोहनीय।

ऐसा सोचिए कि किसी तलाई मे गुदला पानी है और गुदले पानी को निर्मल करने वाली जडी या दवाई का प्रयोग किया जाय तो उस पानी मे रहा हुआ गुदलापन, कचडा, धूल आदि नीचे बैठ जायगी। नीचे जम जायगी लेकिन खत्म नही होगी। एक पात्र मे बहिन ने धोवन बनाया है उसमे राख नीचे बैठ गयी। पानी गुदला है बनाते समय दस-बीस मिनट बाद राख नीचे बैठ गयी और पानी साफ दिखने लगता है। कोई सत धोवण लेने आये और बहिन पानी बहराने लगी तो सत को शका हुई कि यह धोवण है या नही क्योकि साफ दिखता है। तब बहिन ने गिलास अन्दर हिलाई तो राख ऊपर आ गयी और मालूम हुआ कि यह धोवण है। इसी तरह से जिसका क्रोध, मान, माया, लोभ नीचे बैठ गया है, जैसे गुदले पानी का कचरा नीचे बैठ जाता है और ऊपर का पानी नितरा हुआ है उसी तरह से मोहनीयकर्म, क्रोध, मान, माया, लोभ नीचे बैठ जाते है उस स्थिति का नाम है उपशान्त मोहनीय।

दूसरा है क्षीणमोहनीय, क्रोध, मान, माया, लोभ, राग-द्वेष आदि ग्यारहवें और बारहवें गुणस्थान मे उदय मे नही रहते। तो फिर ग्यारहवें और बारहवे गुणस्थान मे क्या फर्क है। थोडी-सी गम्भीरता से सोचें। अपने दिमाग मे भी तो उत्तेजना, गर्मी या क्रोध भाव का उदय नही दिखता, लेकिन किसी ने जोर से चूटकी लगाई तो क्या होगा ? क्रोध एकदम ऊपर आयेगा। यह एक नमूना बताया है।

आप सभी श्रोता यहाँ पर बैठे है। आप मे कषाय का उदय भी मौजूद है लेकिन अभी ऐसे दिख रहे है कि कषाय का लव-लेश भी नही है। विनोदी भाषा में कहे तो आप ऐसे बैठे हैं जैसे अल्लाह की गाय हो। यह पता नही चल रहा है कि कौन उत्तेजित होने वाला है और कौन सभा भग करने वाला है। बाहर से तो ऐसी स्थिति है लेकिन भीतर मे चक्कर चल रहे है। इस अपेक्षा से उपशान्त नही हैं। लेकिन मन मे भी

आपके कषाय भाव दव गये है तो उसका नाम है उपशात और दूसरा है क्षीण मोहनीय इसमे कषाय पूर्णरूप से क्षीण हो जाते है।

मै यह बता रहा था कि, "विउट्टछउमेण" का मतलब है अज्ञान और मोह जिनका निकल है, विनष्ट हो गया है।

कथनी से आचरण कठिन

जीवन मे किसी को कहना तो आसान है लेकिन स्वय उस काम को करना मुश्किल है। किसी वृद्ध से कहा कि भाई साहव ! आप वयोवृद्ध हो गये हो अव तो धर्मध्यान मे लगो, ज्यादा क्रोध मत किया करो, गम खाया करो। इस तरह की बाते आप सौ वार दूसरो को कह देते है लेकिन स्वय घर मे, बाजार मे, या मुहल्ले मे कही वोलने लग जावे तो लोग तग आ जाते है। सामने वाला कोई कहे कि गुस्सा क्यो करो हो, ओ तो टावर है या भोलो है लेकिन खुद के साथ मौको पड जाय तो 'गम खाओ' कहने वाला भूल जाता है।

इसलिए कहा जाता है कि वोलना या कहना किसी को कठिन नही है लेकिन स्वय का अमल करना कठिन है। थोडो जाणो तो थोडो बोलो, कोई हरकत करी वात कोनी, लेकिन वो लक्ष्य लेकर काम करना।

वोलने मे जीभ हिलाई, होठ रो कपन कियो, दाँतो रो सहारो दियो तव शब्द निकलते है। इस दृष्टि से सुननो जितनो आसान है, जीभ हिलानो उतनो आसान नही है। सुनने मे कान हिलाना नही पडे और बैठे ही बैठे कान मे आवाज आ गयी। वोलने वाले की अपेक्षा सुनने वाले का काम कही आसान है।

भगवान महावीर केवलज्ञान, केवलदर्शनधारी ही बनकर नही रहे। उन्होने जाना और जानकर समझा कि अज्ञान और मोह वढ रहा है इसलिए इन दोनो का क्षय करना है। केवल वेले-तेले का तप करने वैठ गए तो इसी से काम नही चलेगा, जब तक छद्म भाव को समाप्त नही करेगे तव तक आगे नही वढ सकेगे। शूर पुरुष तो चलना शुरू करने के वाद वीच मे कभी नही अटकते।

तीन प्रकार के पथिक

साधना-मार्ग के पथिक तीन तरह के चलने वाले होते है। प्रथम वे जो एक लाइन शुरू करते है। व्रत-नियम लेते है और कदम आगे वढ़ाते हैं। वे सोचते है कि महाराज ने कहा है कि व्रत-नियम कुछ करना चाहिए।

दो कदम चले और सामने विघ्न या कठिनाई आई तो कहने लगे कि अपने तो इतना ही काफी है। आगे पार पडने वाला नही। इस तरह से वह भाई तो दो कदम चलकर कठिनाई देखकर बीच मे ही बैठ गया।

एक दूसरा भाई कह रहा है कि ओ रास्तो तो म्हारे पकडना नही। अरे साहब! सामायिक, सयम, साधना की बात महाराज केवे है। ठीक है सयम सू दुख मिटे, परिवार को रोग शोक मिटे, सयम राखण-वालो ने घणो लाभ है बात तो साँची है लेकिन अपो सू तो निभे नही। बोलियो बिना भी सजे नही। बोलो नही तो सू डो कई काम करो। कोई बोले तो उणने जवाब भी देणो चाहिए। कई भाइयो की आदत होती है जो यह समझते है कि सामने वाला बोल रहा है उसको जवाब नही देंगे तो यह जबान किस काम की, जवाब तो देना चाहिए।

कई भाई ऐसे होते हैं जो सोचते है कि मै गृहस्थ हूँ यदि जीवन मे व्रत, महाव्रत, गुणव्रत, आदि धारण करने की बात नही बन सके तो दो चार क्लाक सामायिक करने का अभ्यास जरूर नित्य करूँ।

सतत अभ्यास करिए

एक बच्चा भी मकान की छत के ऊपर चढ सकता है, लेकिन कब? वह धीरे-धीरे पग और घुटनो के बल सरकता हुआ ऊपर चढता है। दो सीढी चढा और फिसल गया, फिर चढने का प्रयत्न किया। ऐसा करते कई बार चढा, फिसला, रोया, माँ या पिता ने आकर गोद मे ले लिया और ऊपर पहुँचा दिया लेकिर बच्चे के मन ने साहस नही छोडा। चढने की गति नहीं है, पूरी सीढियाँ चढ नही सकता लेकिन देखा कि माँ बाप ऊपर चले गए हैं तो वह भी रोता-रोता उनके पीछे-पीछे चढ जायगा।

जैसे शरीरधारी बच्चा ऊपर चढने के लिए माँ-बाप के पीछे जाता है उसी तरह से ज्ञानधारी साधु भी अपने गुरु और गुरुवाणी के पीछे-पीछे आगे बढने का प्रयत्न करते है। देखा कि भगवान मोक्ष चले गए, सुधर्मा मोक्ष चले गए। जम्बू को केवलज्ञान हो गया, हम पीछे रह जायेंगे, थोडा-थोडा आगे बढे। जैसे बच्चा धीरे-धीरे ऊपर चढ जाता है, उसी तरह से साधु भी धीरे-धीरे आगे बढ जायेंगे। तो हम सब साधको मे साहस होना चाहिए। ऐसे मनोबल वाले भी होते है जो साधना को कठोर समझकर भी कदम आगे बढाते हैं।

उस साधक को हल्के दर्जे का माना है जो इस डर से कतराते है कि व्रत, नियम आदि लेगे तो कदम आगे नही चलेगा, इसलिए अच्छा है कि मैं इस रास्ते जाऊँ ही नही। ऐसे सोचकर जो साधना के मार्ग मे कदम रखे ही नही वह साधु कौनसी श्रेणी मे आता है? सबसे हल्की श्रेणी मे। वह यह भी नही सोच पाता कि ये हजारो आदमी आखिर तप मे, त्याग-व्रत मे, नियम मे, सयम मे चल रहे हैं तो चलो अपने भी कोशिश करे। नही चल सकेगे तो आगे देख लेगे। यह कहकर कदम वढा ले और फिर कठिनाई आवे, आगे की स्थिति के लायक मनोवल नही वने तप-वल नही आवे तो जहाँ तक पहुँच गये है वही कायम रहे अथवा आगे वढने की धीरे-धीरे कोशिश करे।

मान लीजिए, किसी भाई ने सोचा कि अठाई करनी है लेकिन तेला करते ही कमजोरी आ गई तो बीच मे ही छोड दिया, ऐसे भाई-वहनो को भी आपने देखा होगा। वीच मे ही पारणा कर लिया, इसकी अपेक्षा तो चलना ही नही था। पडोसी भाई-बहनो को देखकर किसी ने अठाई कर ली और पारणे के वाद उसका स्वास्थ्य बिगड गया, महाराज का व्याख्यान सुनने के लिए भी नही आ सकता तो ऐसी तकलीफ पाने के वजाय नही करना ठीक है।

फला भाई-वहिन ने वारह व्रत धारण कर लिया, लेकिन सासारिक आमोद-प्रमोद मे बाधा आयी इण वास्ते पालियो नही,इण वास्ते म्हारे तो वारह व्रत लेना नही। एक व्रत लियो उणमे भी टटो लग गयो इण वास्ते मैं तो लेऊँ ही नही।

पहले नम्बर का साधक वह है जो सोचता है कि धार लिया सो धार लिया, मार्ग स्वीकार कर लिया सो कर लिया, चाहे तन को कष्ट झेलना पडे तो भी पीछे नही हटूँगा। ऐसे व्यक्ति का प्रारम्भ उत्तम है। उत्तम मनुष्य वह है जो चालू किए हुए मार्ग को कष्ट सहकर भी नही छोड़ता।

महावीरदेव चलकर पार पहुँच गए और आपको, हमको अभी चलना है। यह मत सझझिए कि पचम काल मे मुक्ति नही है या केवल-ज्ञान नही है। यदि ऐसी कमजोरी का विचार करके आचरण मार्ग पर लगेंगे ही नही तो कुछ भी नही पा सकेगे। भगवान महावीर पार हो गए, इसलिए कि अज्ञान, मोह आदि विकारो को उन्होने समाप्त कर दिया।

बात यह है कि हम है तो भगवान महावीर की सन्तान लेकिन हमारा आचरण, हमारा मन, हमारा व्यवहार महावीर की सतान की तरह नही है।

धर्म साधना के लिए शुद्ध क्षेत्र आवश्यक

महावीर के भक्तो के सामने एक कुडकौलिक नाम के श्रावक की परीक्षा होने लगी, वह अपनी अशोक वाटिका मे भगवान की धर्मप्रज्ञप्ति का चिन्तन कर रहा था। यह जहाँ कही भी आप सुनेगे, पुराने जमाने के श्रावक या तो पौषधशाला मे बैठकर ज्ञान-ध्यान करते या इसी तरह के बगीचे-वाटिका मे या उद्यान मे बैठकर करते। अपने महल के कमरे मे नही। शयनागार मे बैठकर धर्मसाधना करने वालो का नमूना आप को शास्त्रो मे भूले-भटके भी नही मिलेगा।

हमे पहले से उसी जगह बैठना है जहाँ क्षेत्र शुद्ध हो, जहाँ वातावरण ससार के रग मे रगा हुआ नही हो। घर का वातवरण ससार के रगो मे रगा हुआ होता है और स्थानक, उपासरा आदि धर्मस्थानो का वातावरण ससारी रगो से रगा हुआ नही होता। वहाँ बैठकर धर्म-साधना के वातावरण को बढाना चाहे तो बढ़ सकता है। बढाना चाहे तो मैंने इन शब्दो का प्रयोग किया इसका मतलब यह है कि धर्म-साधना लिए बैठकर भी मन स्थिर नही है, इधर-उधर डोल रहा है तो धर्म साधना ठीक तरह से नही होगी।

ठीक है, ठडा हॉल है, हवा आ रही है, वहिन ने सोचा कि घर की किट-किट से घडी दो घडी के लिए वचेगे, घर मे तो माथा-पच्ची करनी पडे। इस प्रकार सोचकर यदि आप सामायिक साधना का मखौल उडाते हैं या दस्तूर के रूप मे या नाम के रूप मे करते आये तो साधना मे जो आनन्द आने वाला है वह नही आयेगा। लेकिन दस्तूर के रूप मे करने के वजाय आपने सोचा कि सामायिक मेरी साधना है। ऐसी साधना है जिस तरह से कमजोर वच्चा अखाडे मे जाता है और एक घन्टे के लिए कसरत कर रहा है, शरीर को—हाथ पाव को हिलाता डुलाता है और इस तरह करने पर छ महीने या वारह महीने बीतने पर उसके वदन मे स्फूर्ति आयेगी, वल-वीर्य और ओज वढेगा। एक तो यह वच्चा अखाडे मे जाने का नियम करके नियमित तौर मे जाता है और कसरत करता है। एक वह वच्चा जाता है जो अखाडे मे जाकर सामान आदि की व्यवस्था करता है। मुद्‌गर वगैरह सामग्री कमरे से निकालकर वाहर रखता है और रोज

खत्म होनेपर वापिस सामग्री अन्दर रखता है। ऐसा काम करनेवाले चपरासी वगैरह होते है। वह भी रोज जाता है लेकिन वहाँ पर व्यायाम नही करता तो क्या उसके वदन मे ताकत आयेगी ? वॉली-वॉल वगैरह के खेल मे जाल वाधना, मैदान साफ करना, गेंद वाहर चली जाय तो वापिस लाकर देना आदि काम करता है तो क्या उसके वदन मे खेल मे भाग लेने वाले वच्चे की तरह से ताकत आयेगी ?

शक्ति की अल्पता से निराशा क्यो

हमारे यहाँ जो आचार-मार्ग की साधना है। जिसने जन-जन के मन से राग-द्वेष को दूर कर दिया, खुद राग-द्वेष को जीत लिया और जन-जन को मार्ग पर लगा दिया, उनको केवलज्ञान हो गया। हमको भी मतिज्ञान, श्रुतज्ञान हो जाय तो यह भी चलने के मार्ग मे रोशनी करने वाला है। गैस की वत्ती के समान रोशनी नही है लेकिन छोटी चिमनी के समान है वह भी चिमनी हाथ मे लेकर बिना किसी से टकराये पार हो सकता है। छोटे टार्च को लेकर पार हो सकता है। यह जरूरी नही कि सबके हाथ मे गैस हो।

इसी तरह से चाहे केवलज्ञान न हो, मन पर्याय ज्ञान न हो, अवधि-ज्ञान न हो लेकिन मतिज्ञान, श्रुतज्ञान हो गया तो उससे सतोष मान लेगे।

सतो ने कहा है—यह चातुर्मास अभ्यास के लिए है। सामायिक का अभ्यास भी साधना है। यह भी वह अभ्यास है, जिससे आदमी अपने आपको चारित्र-मार्ग मे ऊँचा उठा सकता है, यदि ऊंचा उठने की भावना से करे। लेकिन भावना से ऊँचा उठने का तरीका न पकड़कर किया जाय, नाम के रूप मे किया जाय तो आनन्द नही आयेगा।

नियम-पालन दृढ़ता से हो

जो लोग वारहव्रत धारण नही कर सकते उनके लिए हमारे आचार्यो ने चौदह नियम चितारने की वात कही। आपमे से क्या कोई भाई चौदह नियम लेने के लिए खडा होगा ? क्या कुछ जवान नियम लेने के लिए मिलेगे ? लेकिन कुछ कहेगे कि दस नियम करादो और कोई मनवार करके रास्ते मे रोकले तो नियम भग को टटो लाग जावे। ऐसी धर्म पद्धति पकड़कर चलोगे तो कल्याण होगा क्या ? जो भाई-वहन चौदह नियम धारण करेगे, उनकी साधना आगे वढेगी। जिसमे तीन का नियम

कि मेरे को खाने-पीने मे १० चीजो से ज्यादा नही लगती। इतना अपने आप पर, सयम के बल से विश्वास हो गया। पहले देखा कि कल, परसो कितनी चीजे लगी थी। दो दिन मे खान-पान के व्यवहार और आचरण को सामने रखकर अनुमान कर लिया कि जो चीजे कल लगी वे ही परसों लगी, लम्बी तृष्णा को काम कर दिया। कुल २० चीजे रख ली। सतो ने जो रास्ता बताया था उससे भी पांच कदम पीछे हटे।

मन यदि ढीला रहा तो पार नही पड़ेगा। मन को कसने की जरूरत है।

सुधर्मा स्वामी ने बताया कि भगवान इस तरह के हो गए कि जिन्होने राग-द्वेष को जीतकर मोक्ष जाने से पहले द्वादशागी वाणी का उपदेश दिया। हमे भी उनकी शिक्षा को ग्रहण करके ज्ञान-बोध लाभ करके क्रिया की गति को आगे बढाना चाहिए। यदि क्रिया की गति चलेगी तो धीरे-धीरे चलकर भी मजिल पार कर सकते है। यह मत समझिए की कोई चला ही नही तो हम कैसे चल सकते है। थोड़ी देर के लिए क्रोध आता है तब मुँह से अपशब्द निकलते है लेकिन थोडी देर बाद क्रोध शान्त हो सकता है। खान-पान मे कई सब्जियो की जरूरत होती है लेकिन व्रत ले लिया तो कम से भी काम चल सकता है।

मानले कि शरीर आरामतलबी से रह सकता है, कष्ट पाकर नही रहता। लेकिन मार्ग मे कदम बढकर चलेगे तो आगे भी बढ सकेगे।

एक लडकी अपने बाप के घर मे तो मनचाहा जैसी उठती-बैठती है, खाना-खाती, मनचाहा पहनती, लेकिन ससुराल मे जाकर कैसी रहेगी ? आपको तो शायद अनुभव नही होगा, मेहमान की तरह से जाओ तो सयम नही करना पडे लेकिन ससुराल मे जाकर किस तरह से रहती है ? दिन भर बैठी रही। खाने मे मनचाहा साग आज नही मिला तो क्या बड-बड करेगी। सास तो कुछ महीनो तक स्वतन्त्र रूप से काम नही करने देती इसलिए चौका उसके कब्जे मे नही आता फिर भी पहले-पहले चुपचाप रहती है। उसके बाद वह अपने सारे व्यवहार को बदल लेती है तब तो वह पराये घर मे जाकर सम्मान या इज्जत पाती है और घर मे भी उसका प्रभाव बढता है।

सुधर्मा स्वामी कहते है कि महावीर की तरह तुम्हे आगे बढ़ना है

तो साधना के मार्ग मे क्रिया करो, आचरण करो। केवल जानकर और सुनकर ही मत रहो। चार महीनो तक सतो के समागम मे अभ्यास करो, आपको अपने आचरण को वदलना है। विजय के मार्ग पर जीवन को ज्ञान और क्रिया के साथ आगे वढाया तो इस लोक और परलोक मे आनन्द, कल्याण और शाति प्राप्त कर सकोगे।

जैन स्थानक, मद्रास
(दि० ४-८-८०, समय ९ ३० प्रातः)

२

जिन-ध ं : तर -तार -

प्रार्थना

वीर सर्व-सुरासुरेन्द्र महितो, वीरं बुधा संश्रिता ।
वीरेणाभिहत स्वकर्म-निचयो, वीराय नित्य नम ।।
वीरात्तीर्थमिद प्रवृत्तमतुल, वीरस्य घोर तपो ।
वीरे श्री-धृति-कान्ति-कीर्ति निचयो, हे वीर भद्रं दिश ।।

आत्मसाधक वन्धुओ !

हम ससार के सभी मुमुक्षु जीवो का प्रमुख लक्ष्य है कि हमको अपना शाश्वत शुद्ध स्वरूप प्राप्त करने को मिले । इस लक्ष्य के अनुसार हर मुमुक्षु यह विचार करता है कि ससार का इतना विशाल जो प्राणी मडल है वह सव प्रकार की भौतिक सुख-सुविधा पाकर भी शान्त नही है, निश्चिन्त नही है, आनन्द का अनुभव नही कर पा रहा है । लेकिन वाहर के भौतिक सम्वन्धो से, सामग्रियो से, मित्र-कलत्र और भौतिक उपयोग और भोग की सामग्रियो से सर्वथा दूर रहने पर भी सिद्ध प्रभु अजर-अमर स्वरूप को पाये हुए अशान्ति से सर्वथा दूर और दुख के वन्धन काट चुके है, सदा जयवन्त है ।

वाह्य सामग्री सुख का साधन नहीं

जव वाहरी सामग्री न होने पर भी वे पूर्ण शान्त हैं और हम सव वाहरी सामग्री का अवार पाकर भी दु खी है तो इसका मतलव यह हो गया कि वाहर के साधन-सामग्री को प्राप्त करना सुख पाना नही, इसमे आसक्त होना आनन्द नही, इससे स्नेह करना शान्ति का कारण नही, दु ख एव अशान्ति का ही कारण है । वीच मे कदाचित रहना पडे तो इनके

बीच मे रहकर भी हम इस आसक्ति से, राग से, द्वेष से और स्नेह से किनारा करे, अपने जीवन को शान्ति के साधन मे लगावे और शास्त्रो की आज्ञा का पालन करे। यह हमारे जीवन को आनन्द का मार्ग वताने वाला साधन है। इसलिए इस परम दशा के सिद्ध स्वरूप का वन्दन करने के वाद, इस महापुरुप ने क्या रास्ता वताया इस पर मै थोडा-सा चिन्तन शास्त्रो के आधार से करना चाहता हूँ।

भगवान महावीर का उपदेश

समवायाग सूत्र की भूमिका प्रस्तुत करते हुए महान उपकारी पचम गणधर श्री सुधर्मा स्वामी ने जम्बू को लक्ष्य करके कहा कि "हे जम्बू! मैं जो शास्त्र तुमसे कह रहा हूँ वह इतना महत्त्वशाली है—इतना विश्वास करने लायक है कि इसको कहने वाले रागादि दोषो मे रहने वाले नही। वे सिद्ध है, निर्दोष है, वीतराग है, स्वय पूर्ण पद पा लिया है, इसलिए उनका वताया हुआ मार्ग हमारे लिए शान्ति का साधन हो गया है।"

इस पर जम्बू ने जिज्ञासा प्रकट की कि "पूर्ण ज्ञानी, निर्दोष जीवन वाले महावीर कैसे है, कृपा करके मुझे समझावे।" ४० विशेपणो से महावीर का स्वरूप समझाने का उसमे से कुछ परिचय दिया गया। दो दिन पहले कहा गया था कि भगवान् महावीर—

अप्पडिहयवरनाणदसणधरेण, विउट्टछउमेण, जिणेणं

जावएणं तिन्नेण तारएण, वुद्धेण वोहएणं मुत्तेण मोअगेण॥"

यहाँ तक विचार कर दिया अर्थात् महावीर पूर्ण ज्ञानी, परम शान्ति के अधिकारी वने तो वे जिन हो चुके। वस्तुत प्राणी को सताने वाला है राग-द्वेष। भगवान महावीर ने राग को जीत लिया, द्वेष को भी जीत लिया। राग और द्वेष को जीत लिया तो दु.ख का मूल कट गया, इसलिए वीतराग हो गए। वे स्वय जिन हुए और दूसरो को जिन होने का रास्ता वताने को उन्होने देशना दी, इसलिए कहा—"जिणेण जावएण।"

भगवान महावीर की अद्वितीय वि ` ा

ससार के प्राणी ऐसे देखे जाते है कि किसी को कोई अच्छा ऊँचा पद मिल गया, श्रीमत सेठ वन गया, अधिकारी, नायक या नेता वन गया, पडित वन गया तो वह सोचेगा कि अपने पास आने वालो को कुछ सिखाऊँ। सेठ देखता है कि मुनीम को कुछ ज्ञान दूँ लेकिन वह यह भी सोचेगा कि कही मुनीम सीखते-सीखते मेरे जैसा सेठ स्वय नही वन जाय,

इसलिए वह उसको सिखाता हुआ घबरायेगा। पडित सोचता है कि इसको सिखाऊँ, पढाऊँ लेकिन कही ऐसा न हो कि मेरे से भी आगे बढ जाय और मेरा शिक्षक पद ले ले, कुलपति या चासलर बन जाय। ऐसा मौका नही आवे उतना ही इसको अभ्यास देना चाहिये।

लेकिन आप आश्चर्य करेगे जिनेश्वर महावीर के जीवन की एक विशेषता है। वे स्वय जिन वने और दूसरो का इस ओर उन्होने ध्यान आर्कषित किया और कहा—"मानव ! आ जाओ तुम भी मेरी तरह राग-द्वेष पर विजय प्राप्त करके जिन वन जाओ। तुम भी इस मार्ग पर चलोगे, पुरुषार्थ करोगे तो कर्म का आवरण टूटेगा और तुम भी जिन वन जाओगे।"

ससार मे देखा जाता है कि कोई विशेष ज्ञान अर्जन करता है और उसके पास पहुँचकर कोई कहता है कि मुझे भी यह ज्ञान सिखा दीजिए तो वह उसको ज्ञान तो वतावेगा लेकिन चोटी की वात अपने हाथ मे रखेगा। कोई वैज्ञानिक होगा तो असली भेद नही वतायेगा। कल-पुर्जे कोई मगायेगा तो भेज देगा, लेकिन भीतरी रहस्य की चीज नही बतायेगा, उसे अपने ही हाथ मे रखेगा। शराबियो की भी यही स्थिति है।

किन्तु महावीर की यह विशेषता है कि वह खुद जिन बने और केवल उपदेश देकर ही नही रहे, ससार को मार्ग वताया कि जिन कैसे होते हैं और जिन बनने का रास्ता कैसा है। कैसे रास्ते पर चलकर तुम भी जिन वन सकते हो। किल्ली कुजी नही वताई जाय तो क्या वह वरावरी का दर्जा ले सकता है ? वे ऐसी वात नही सोचते कि कही—यह चेले से गुरु न बन जाय और वरावरी का दर्जा न ले ले।

आप क्या सोचेगे ? आपका मुनीम है, आप से काम सीखने वाला है। क्या आप उसमे ऐसी क्षमता पैदा कर दोगे कि वह मुनीम ही नही रहे, सेठ वन जाय। ऐसे दिल वाले आप मे से कौन-कौन हैं ? कदाचित् उसकी हैसियत और योग्यता वढकर अलग होने जैसी हो जाय तो आपके मन मे और चेहरे पर फर्क तो नही पडेगा ? वह आपके पास आकर कहे कि म्हारे मन मे अव ऐसो विचार है कि आपरी नौकरी छोडकर खुद रो स्वतन्त्र धधो करूँ। यह सुनकर आपके चेहरे पर कुछ फर्क तो नही पडेगा ? क्या आप सोचेगे कि आपारो वोझो हल्को हुओ। इणने सहारा देता हा, अव दूसरे ने सहारो देवण रो मौको मिलेला। आप ऐसा नही सोच सकेंगे। आपको उमके अलग होने की वात मे अफसोस होगा। क्योकि संसार के

प्राणी जब तक अपने आपको ऊँचा बनाये रखने की इच्छा रखते हैं तब तक दूसरे को अपने से आगे बढता देखकर प्रसन्नता अनुभव नही कर सकते।

लेकिन हमारे महावीर कैसे हैं ? वे अपने पास आये हुए साधक को अपने से नीचा रखने मे राजी नही थे। वे चाहते थे कि आज जो मेरा चेला है, भक्त है वह भी मेरे समान भगवान् बन जाय। "जिणेणं जावएण, तिन्नेणं तारएण" मैं जिन हो गया हूँ, मैंने राग और द्वेष को जीत लिया है तो अन्य लोग भी क्यो पीछे रहे ? राग-द्वेष को जीत लिया तो भवसागर पार होने मे क्या बाकी रहा ?

राग-द्वेष विजय : सबसे बड़ी साधना

सबसे बडी साधना यदि कोई है तो वह है राग-द्वेष को जीतना। राग-द्वेष और मोह को जीत लिया तो भवसागर को पार करने मे कहाँ रुकावट है। यदि उसको एक करोड पूर्व तक भी ससार मे रहना पडे, शरीर मे रहना पडे तो भी मुक्ति मार्ग मे कदम आगे बढाने से उसे कोई रोक सकेगा क्या ?

केवली के मुक्त होने से बाधक : आयु कर्म

शास्त्रो मे ऐसा विधान है कि जब तक आयु कर्म बाकी है तब तक केवली बनने के बाद भी उस आत्मा की मुक्ति नही होती। वीतराग हो चुका, जिन हो चुका, सर्वज्ञ हो चुका लेकिन अभी ससार मे रहना बाकी है। क्यो बाकी है ? इसलिए कि अभी तक आयुष्यकाल बाकी है। चार घाती कर्मो को क्षय कर चुका और उनको क्षय करने के कारण वीतराग हो गया, सर्वज्ञ हो गया, पूर्ण हो गया लेकिन फिर भी आयु कर्म रोक रहा है क्योकि आयु कर्म की अवधि बाकी है।

"जिणेण जावएण, तिन्नेणं, तारएणं" मैं इसका विवेचन कर रहा हूँ। जिनेश्वरदेव स्वय भवसागर से तिर चुके और निमित्त बनकर दूसरो को भी तारने वाले हैं ऐसे महावीर भगवान् ने यह द्वादशागी वाणी कही है। मैं आपको बता रहा हूँ कि ससार का साधारण प्राणी जिस काम मे पूर्णता पा लेता है उस पर अपना अधिकार बना लेता है तो वह अपने पास मे रहने वाले प्रिय से प्रिय व्यक्ति को अपने समान बनाने की बात नही करता।

दूसरी बात यह चली कि जब वीतराग हो गये गाडी प्लेटफार्म

पर लग गई, अव उनको ससार मे रुके रहने का कारण क्या ? वर्तमान मे इस प्रसग पर वात चल रही है। तो मैंने कहा कि घाती कर्म नष्ट हो गये है परन्तु अघाती कर्म रह गये। आयु पूर्ण होते ही शेष तीन अघाती कर्म भी निराधार अथवा निर्बल हो जायेगे। वे क्षण भर भी टिक सकेगे।

कभी-कभी ऐसा होता है और हुआ है कि एक करोड़ पूर्व की आयु वाले ने नौ वर्ष की उम्र मे दीक्षा ग्रहण की। हमारे यहाँ सयम धारण करने की कम से कम उम्र नौ वर्ष वताई है। नौ वर्ष की उम्र वाले को सयम लेने का अधिकारी मान लिया जाता है। यह तव होता है जबकि कुछ तो पूर्व के सस्कार प्रवल हो और कुछ घर का वातावरण शुद्ध हो, सस्कार को तेज करने वाला हो, ऐसे सयोग व वातावरण मे पला हुआ व्यक्ति ही वचपन मे सयम मार्ग का अधिकारी वनकर आगे वढ पाता है। किसी ने नौ वर्ष की आयु मे दीक्षा ली एव साधना की, हलु कर्मी होने से अधिक कठोर साधना नही करनी पडी। कारण कर्म हल्के ,हो तो कर्मो को क्षय करने मे लम्वा टाइम नही लगता। नौ वर्ष समाप्त होते ही उसने केवलज्ञान प्राप्त कर लिया। दीक्षा ली और थोडे समय मे ही कर्म क्षय करके केवलज्ञानी वन गये। लेकिन उसकी उम्र करोड पूर्व की है इसलिए वह करोड पूर्व तक केवली होने के वाद भी ससार मे धर्मोपदेश करेगे। मोह के समुद्र को पार करने से कहा गया – भव-सागर तिर गये। उन्हे कुछ पार करना वाकी नही रहा, वे सोन क्रोड पूर्व तक ससार मे उपदेश करते रहे। क्योकि राग-द्वेपादि विकारो को जीत लिया, इसलिये यह कहा गया— उसने भवसागर पार कर लिया। भगवान महावीर स्वय तिर गये उसी तरह दूसरो को भी भवसागर पार करने का रास्ता वताया।

साधु के लिए उपदेश देना जरूरी नहीं

कुछ केवली मूक केवली होते है, इसका मतलव क्या ? केवली के लिये यह जरूरी नही है कि वह देशना दे हो। इसी तरह से हर साधु के लिए भी जरूरी नही है कि वह उपदेश दे। पॉच महाव्रत पालन साधु के लिए जरूरी है। जो पाँच महाव्रत नही पाले, समिति-गुप्ति की आराधना नही करे, राग-द्वेप को नही जीते उसकी मुक्ति नही होती।

जिस साधु मे व्याख्यान देने की कला नही है, अभ्यास नही है वह भी राग-द्वेप को जीतकर कर्म वन्धन को काटकर परम पथ का अधि-

श्रावक भी पापोपदेश न दे

भाई का काम क्या हो गया, अँधेर हो गया। आज के सम्यक्दृष्टि और श्रावक कहलाने वाले भाई-बहन भी जिनेश्वरदेव का यह स्वरूप समझकर चिन्तन करे कि भगवान महावीर ने स्वय तरने के बाद दूसरो को तारने के लिए बोध दिया, स्वय तीर्थंकर पद प्राप्त करने के बाद भी जन साधारण को तारने का काम किया तो हममे से जो मध्यम लाइन पर चल रहे है, पाप का जीवन बिता रहे है उन लोगो को धर्मी जीवन गुजारने की प्रेरणा देना अच्छा है या नही ?

श्रावक के बारह व्रतो मे से आठवाँ व्रत क्या है ? यह आप जानते होगे। वह अनर्थदण्डव्रत है और पाप कर्म का उपदेश देना, श्रावक के इस आठवे व्रत का अतिचार बताया गया है। "पाप कम्मोएसे" वह स्वय चाहे पाप कर्म से पूरा नही हटा है, अभी ससार मे बैठा है तब भी उसका यह ध्यान रहता है कि मैं आवश्यकता के अतिरिक्त हर किसी को बिना प्रयोजन पाप कर्म का, आरम्भ-समारम्भ का, ससार के प्रपच का वृथा उपदेश न दूँ और न मार्गदर्शन ही करूँ, ऐसा श्रावक का ध्यान रहता है। इसके अतिरिक्त वह चाहता है कि मैं चाहे बाजार मे बैठूँ, घर मे बैठूँ, मडली मे बैठूँ या किसी के साथ जाऊँ तो धर्मी जीवन का सुन्दर उपदेश दूँ। अल्पारभ का धधा कैसे करना यह बताऊँ। श्रावक चाहेगा कि महारभी का अल्पारभी धधे मे मोड करूँ।

किसी को पूछा जाय कि खाने मे क्या बनाया जाय ? मेहमान आ गये है, उनको कैसा खाना खिलाया जाय ? तो कोई कहेगा कि आलू की खिचडी बनाई जाय। गर्मागर्म कोफ्ते आलू-प्याज के बनाये जायँ, उसके भीतर मिर्ची डाली जाय, वगैरा वगैरा सलाह देकर यह कहेगे कि अच्छा स्वादिष्ट भोजन बनाया जाय। एक ने तो ऐसी सलाह दी।

दूसरा सलाह देने वाला सोचता है कि कम से कम पाप हो ऐसा भोजन बनना चाहिये। वह खिलाने वाले को समझाता है कि तुम परिवार वाले हो, समाज मे बैठो हो, घर मे विवाह या शादी है लेकिन तुम जैन हो इसलिये ऐसी व्यवस्था करनी है कि रात्रि मे नही खाना पडे। कद की सब्जी नही बनानी है क्योकि इसमे जीवो का कितना घमासान होता है। पेट तो दूसरी चीजो से भी भर जायेगा। बहुत से दूसरे साग है,

महावीर-सदेश

भगवान महावीर का सिद्धान्त है कि पाप से घृणा करो लेकिन पापी से प्यार करो, घृणा मत करो। कभी सुना होगा महावीर के सदेश मे कहा है कि—

यही है महावीर सदेश, यही है महावीर सदेश।
घृणा पाप से हो, पापी से कभी नहीं लवलेश ॥
भूल सुझाकर प्रेमभाव से, करो उसे पुण्येश।
यही है महावीर सदेश, यही है महावीर सदेश ॥

भगवान महावीर की सच्ची ज्योति, उनका सदेश, उनकी शिक्षा और उनके वचन हमारी रग-रग मे रमे हुए होने चाहिए। यदि आप महावीर के सच्चे भक्त है तो उनके वचनो और सिद्धान्तो को हृदय मे वैठाकर अमर रूप देने का प्रयत्न करो।

भगवान महावीर कहते है कि पाप से घृणा करो, पापी से घृणा मत करो। इसका कारण यह है कि पाप सदा-सदा छोड़ने योग्य रहेगा, कभी धर्म नही वनेगा लेकिन पापी कभी धर्मी वन भी सकता है, वह धर्मी वन कर वदल सकता है, सदा पापी नही रहता।

वालक बड़ो से अधिक सरल एवं धर्मी

जन्म हुआ तव जन्म काल मे वचपन मे कोई कर्म पाप मे लीन था क्या ? आपके वच्चे तथा आपके अडोस-पडोस मे रहने वाले किसी मासाहारी के वच्चे और कसाई के वच्चे दूध पीने वाले थे या कसाई और मासाहारी के वच्चे खून पीने वाले थे ? एक डाकू का वच्चा, चोर का वच्चा और हिंसक का वच्चा भी जन्मते ही चोर, डाकू या हिंसक नही होता। वचपन मे हर प्राणी धार्मिक जीवन का नमूना होता है। वह हिंसा नही करता। कपट, छल छिद्र नही करता। आपके यहाँ कोई राजकीय व्यक्ति आकर पूछे कि आपका मुनीम कहाँ है ? आपके हिसाव-किताव की वहियाँ कहाँ है ? तो आप उसे वताने मे आना-कानी करेंगे लेकिन यदि वह आपके वच्चे से प्रेमभाव से पूछेगा कि तुम्हारे पिताजी रोजनामा करते है वह वही कहाँ है ? तो वह वता देगा, तो आप मे सचाई ज्यादा है या आपके वच्चे मे ज्यादा है ?

आपके किसी पडोसी से आपकी लड़ाई या वोल-चाल हो गई तो शाम को प्रतिक्रमण के समय क्या आप उससे खमत-खामणा कर लेगे या पक्खी के दिन उससे क्षमायाचना कर लोगे और लडाई का निमित्त भूल जाओगे ? हाथ जोड़कर खमत खामणा तो कर लोगे ? नही। किन्तु आपका टावर कल गली मे अपने साथियो के साथ खेल रहा था और खेलते-खेलते एक वच्चे ने उसको पत्थर मार दिया। खून आगया। दोनो के घरवालो से आपस में लडाई-झगडा हुआ। वच्चे के पट्टा वॉधा और वह ठीक हो गया। दूसरे दिन वह फिर खेलने गया जिसने पत्थर से मारा था उसके साथ खेलेगा तो नही या वोलेगा तो नही ? वह उसके साथ खेलेगा और उससे वोलेगा। भाई-भाई मे लड़ाई हो गई तो वे एक दूसरे के साथ वोलने को तैयार नही होगे। जैन कुलधारी होकर भी क्षमा करने की शक्ति आपसे ज्यादा आपके वच्चे मे रही। ईमानदारी आप मे ज्यादा है कि वच्चे मे ? कभी-कभी अप्सरा जैसी सुन्दर वाई को देखा तो विकार भाव आपके मन मे जल्दी आएगा या उसके मन मे ?

तो वच्चे मे अहिसा ज्यादा मात्रा मे है, सत्य ज्यादा है, अदत्त का ग्रहण नही करना भी वालक मे ज्यादा मात्रा मे है। ब्रह्मचर्य की वात भी उसमे ज्यादा है। जिसको आप विकार भाव से देखते है, वह यदि प्यार करने वाली हुई तो वालक झट जाकर उसकी गोद मे बैठ जायेगा, उसके गले लगेगा और छाती से चिपक जायेगा। वह उसे अपनी मॉ समझ लेगा क्योकि वच्चे मे निर्विकार भाव होते है। लोभ-लालच की वात बच्चे मे नही होती, सीसा देखेगा, चाँदी देखेगा या नोट देखेगा तो उसके ठोकर मारकर आ जायेगा। तो वच्चा वचपन मे पाप से दूर था। वडा होने पर सगत के कारण पापी वन जाता है।

इसलिए कहा कि पापी से घृणा मत करो क्योकि पापी पीछे वना है, जन्म के समय पापी नही था। अड़ोस-पड़ोस मे चोरी करने वाले, हिसा करने वाले, शराव पीने वाले, धर्म की निंदा करने वाले है। तो उनसे घृणा करने के वजाय प्रेम करो और उनको पास मे बैठाकर धर्म की प्रेरणा देना सीखो। यह उपदेश तुम्हारे लिए लाभकारी वनेगा। यदि ससार के प्राणी घृणा करने के वजाय धर्ममार्ग पर लगाने का कर्तव्य करना सीख जायँ तो खुद के जीवन को भी पाप से हल्का रख सकते है और ससार का भी भला कर सकते है लेकिन यह वात तव आयगी जव

भगवान महावीर का सही स्वरूप समझेगे। वे खुद तर गये और दूसरो को भी तार गये।

हम छोटे-बडे सब उनके भक्त एव प्रतिनिधि है। हमारे कर्तव्य को ध्यान मे लेकर हम भी दूसरो को सद्‌मार्ग पर लाने का प्रयत्न करेंगे, प्रमाद त्यागकर धर्ममार्ग के रक्षक बनेगे तो हमारी आत्मा इस लोक मे, परलोक मे कल्याण, शान्ति और आनन्द पाने की अधिकारी हो सकेगी।

जैन स्थानक, मद्रास
(दिनांक ६-८-८०, समय १० प्रात)

अव जव कि वह असीम करुणाकर की निर्दोष वीतराग वाणी हमको पढने को, सुनने को मिली है तो उस पर चिन्तन करना, मनन करना, उसके अनुसार जीवन को ढालना आपका, हमारा और विश्व के हर मानव का कर्तव्य है।

भगवान् जिनके लिए पहले ही हम कह चुके है कि वे वीतराग हैं, इसलिए उन्होने जो प्रवचन कहा है उसके पीछे कोई लौकिक कामना नही, यश की कामना नही, महिमा की कामना नही, भेट की इच्छा नही और पूजा की कोई अभिलाषा नही है। केवल एकमात्र उन वीतराग के अन्त करण मे कामना रही कि विश्व के प्राणी दु ख-मुक्त कैसे हो। कितनी उच्च निर्मल भावना वाले है हमारे महाप्रभु ! तो आप को उनके जीवन की महानता का अपने हृदय मे विचार करना चाहिए और सद्गति का अधिकारी वनना चाहते है तो अपने हृदय को विशाल वनाना होगा। हम अपने स्वार्थ के घेराव मे घिरे रहेगे, अपने तन का भला चाहेगे, अपने तन और परिवार के भले मे यदि दुनियाँ को भुला-कर रहेगे तो महावीर की वाणी की सही आराधना नही कर सकते।

पक्ष-प्रतिपक्षमय जगत

महावीर ने अपनी वाणी मे कल्याण मार्ग क्या कहा, जरा उनकी आगम वाणी देखिये। मैं आपके सामने समवायाग सूत्र का कुछ सदेश दे रहा हूँ। उसमे से एक सूत्र आपके सामने चल रहा था "एगे किरिया" "ऐगे अकिरिया"।

प्रभु महावीर ने कहा कि जव जीव एक है, आत्मा एक है और उसके द्वारा होने वाली क्रिया भी एक है तो सूत्र के पहले भाग मे वताया कि क्रिया एक है, दूसरे भाग मे कहते है कि क्रिया है तो उसका प्रतिपक्ष चाहिए। क्रिया का प्रतिपक्ष क्या ? अक्रिया। जीव का प्रतिपक्ष अजीव। धर्म का प्रतिपक्ष अधर्म। पुण्य का प्रतिपक्ष क्या ? पाप। कर्म का प्रति-पक्ष क्या ? अकर्म। यह ससार का एक युगल चलता है। एकपक्षी वस्तु नही है, हर एक वाजू का दूसरा वाजू है। इसीलिए यह सावित होता है कि जीव कर्म सहित है तो अकर्मा जीव भी है।

कर्म सहित और कर्म रहित जीव

जीव के दो विभाग होगये—सकर्मा और अकर्मा। सकर्मा जीव को हम देखते है लेकिन अकर्मा जीव को नही देखते। सिद्धो का जीव अकर्मा

है तो सागर अथवा समुद्र भी है। तलाई है तो उसका बड़ा रूप समुद्र भी है।

इसी तरह सकर्मा जीव है तो अकर्मा की स्थिति भी है। एक सक्रिय है और एक अक्रिय है। इसलिए समवायाग सूत्र मे बताया कि 'एगे किरिया' चाहे वह क्रिया मन से हो, चाहे वाणी से हो, चाहे काया से हो।

क्रिया के साधन और तरीके

क्रिया करने के साधन तीन है—मन, वचन और काया, और क्रिया करने के तरीके भी तीन है—खुद क्रिया करना, दूसरे से क्रिया करवाना और क्रिया करने वाले का अनुमोदन करना।

आप ने यह मकान स्वय बनाया है क्या ? जैन समाज के लोगो ने इस जैन भवन को स्वय तो नही बनाया। क्रिया तो आपने की लेकिन कैसी क्रिया की ? जो आपके करने योग्य क्रिया थी वह क्रिया आपने की। आपने अपने हाथ से चूना, पत्थर का सयोग करके दीवार खडी नही की। लेकिन आपने हुक्म दिया, नक्शा पास करवाया। उसके लिए सामान सीमेंट, चूना, पत्थर, लोहा आदि मँगवाने की व्यवस्था की, कुछ कारीगर और मजदूर लगवाये और यह इमारत खडी करवा दी।

अब इस क्रिया को आप ने खुद ने नही की। यदि दूसरो से कराते, कही आप की इच्छा के विपरीत, जिस तरफ दीवार होनी चाहिए उस तरफ जाली हो गई और जाली की जगह दीवार हो गई वह भी ठीक नही बनी तो कही ऐसी नौबत आ जाती है कि उसको तुडवा कर फिर से बनवाई जाय। इसलिए क्रिया करने का तरीका बदला।

एक क्रिया खुद की जाती है। सामायिक की क्रिया खुद करे, भोजन करने की क्रिया खुद करे, खुद करने से ही आपका पेट भरेगा। लेकिन मकान बनवाने की क्रिया खुद नही की। दूसरे से बनवाया। मकान भी सर्दी, गर्मी, बरसात मे आपकी जरूरत का काम पूरा करता है। बनाने का काम तो ठेकेदार ने और कारीगरो, मजदूरो ने किया, आपने तो निर्देश देने का काम किया।

एक रूप मे यदि अच्छा होने का अनुमोदन किया, तो क्रिया के तीन भेद हो गये और साधन भी तीन प्रकार के हो गये।

शुभ और अशुभ क्रिया

शरीर से की जाने वाली क्रिया के दो भेद कर दीजिए—एक शुभ और दूसरी अशुभ। तन से, मन मे और वाणी से की जाने वाली क्रिया एक शुभ होती है और दूसरी अशुभ होती है। अव शुभ क्रिया के भी तीन भाग है, शरीर से शुभ क्रिया करना, शरीर से शुभ क्रिया करवाना और शुभ क्रिया करने वाले को भला कहना। इसी तरह से वाणी से करना, करवाना और करने वाले का अनुमोदन करना। मन से भी करना, करवाना और करने वाले का अनुमोदन करना। ये ९ विकल्प शुभ क्रिया के और ९ विकल्प ही अशुभ क्रिया के है।

एक ने तो जीव की रक्षा की या मरते हुए प्राणी को वचाने का काम अपने तन से किया, और दूसरे ने कहा कि जरा भाई सावचेती से उसको वचाना, मारना नही। दोनो ने काया से जीव की रक्षा की, करवाई और करने वाले को अच्छा कहा। इसी तरह से एक ने जीव की रक्षा नही की अर्थात् मरते हुए प्राणी को नही वचाया और दूसरे ने जीव की हिंसा की। दोनो की क्रिया हो गई। एक ने खुद हिंसा की और दूसरे से हिंसा करवाई और हिंसा करने वाले का अनुमोदन किया। यह तन से हिंसा करने का विकल्प हो गया। इसी तरह मे वाणी से और मन से भी हिंसा करने के तीन विकल्प हो गये। ये भी कुल मिलाकर ९ विकल्प हो गये।

अनुकपा से सुख-साता की प्राप्ति

भगवती सूत्र मे जव वेदनीय कर्म के साता और असाता का भेद चला और पूछा गया कि भगवन्! साता वेदनीय का बध कैसे होता है? जिसके द्वारा शारीरिक और मानसिक सुख-शान्ति का अनुभव हो ऐसे साता वेदनीय कर्म के बध का कारण क्या है? तव भगवान ने बताया—अनुकपा करने वाले को साता वेदनीय का बध होता है। लेकिन यदि शुभ योग के साथ हमारे अन्त करण से ममत्व का विसर्जन हो जाय और मन के भावो मे शुभ भाव आ जावे तो मन की क्रिया से निर्जरा का कारण होगा। इस निर्जरा की करणी मे भगवान ने कहा कि मानव क्रिया करते-करते जिन्दगी गुजारता है, लेकिन क्रिया ऐसी कर कि जिससे बधन कटे ऐसी क्रिया मत कर जिससे वन्धन वढे।

क्रिया से बन्ध और मोक्ष दोनो

एक सन्त ने कर्म की महिमा वताते हुए कहा कि 'किरियाए बधो,'

क्रिया से बध होता है किन्तु क्रिया से बध भी होता है और मोक्ष भी होता है ।

वात इतनी सी समझने की है। जिसको हम वीतराग का सिद्धान्त कहते है वह सिद्धान्त भी दो तरह का होता है क्या ? एक तरफ तो कहते है कि क्रिया से बध होता है और दूसरी तरफ कहते है कि क्रिया से मोक्ष होता है। लेकिन जरा शान्त मन से चिन्तन करेंगे तो आपकी समझ मे आयगा। क्रिया का मतलव दो अर्थों मे यहाँ करना चाहिए ।

एक क्रिया का मतलव तो यह है कि कर्मबध का कारण है उसको क्रिया कहते है और दूसरी क्रिया का मतलव है—हमारे मन, वाणी और शरीर की चेष्टा। हमारे आत्म-प्रदेशो मे जो स्पन्दन, हल-चल होती है उसका नाम क्रिया है। तो शरीर का, मन का और वाणी का स्पदन रूप भी क्रिया है। वह सब ही कर्मबध का कारण नही होता। लेकिन जिस क्रिया के पीछे प्राणातिपात का लक्ष्य है, हिंसा का लक्ष्य है, झूठ और चोरी का लक्ष्य है, राग है, द्वेष है, मोह है, माया है—ऐसे विकारी भाव है वहाँ सारी क्रिया बध का कारण होगी। भगवान महावीर ने कहा कि मानव तन पाया है, फिर जैन धर्म मिला है तो जरा ऐसी क्रिया कर कि जिससे तुम्हारा वन्धन टूट जाय।

क्रिया-क्रिया में अन्तर

आज के इस विज्ञान के युग मे आपने वडे-वडे घरो मे किसी वाई को अरटिया या चर्खा कातते देखा नही होगा, लेकिन गाँवो मे आज भी कई घरो मे वडी-वडी औरते चर्खा कातती है। चर्खा कातने की क्रिया करती हैं। चर्खा घुमाते-घुमाते धागे की एक कोकडी तैयार हो रही है। पूरी तैयार होने पर उसने कोकडी उतार कर रख दी, उधर से एक वच्चा आया और कोकड़ी लेकर घुमाने लगा।

वुढिया ने भी क्रिया की और वुढिया के पोते ने भी क्रिया की। वुढिया की क्रिया ने रूई मे से पूणी को निकाल दिया, धागा तैयार किया और कई कोकडियाँ तैयार की। उसमे एक भी तार उलझा नही था। लेकिन वच्चे ने कोकडी उठाई और इधर-उधर खिलौना समझकर उसको घुमाया, तार घुमाया और दो-चार या दस मिनिट मे क्या किया ? वुढिया की नजर उस पर पडी तो वोली—अरे, तूने मेरी घटो की मेहनत को क्या कर दिया, खत्म कर दिया।

दुनियाँ की कहावत है "कातियो पीजियो, हुओ कपास"। मैने घटो मेहनत करके एक-एक तार निकालकर कोकडी बनाई और तूने मेरी मेहनत को व्यर्थ कर दिया। ऐसा क्या हो गया ? बच्चे ने भी तो क्रिया ही की थी। लेकिन उसकी क्रिया अज्ञान के साथ होने के कारण बच्चे की क्रिया ने कोकडी के धागे को उलझा दिया। उस बाई ने उस उलझाए हुए तार को बच्चे के हाथ से लेकर वापिस सुलझाने का काम शुरू किया। यदि बुढिया समय से पहले सँभाल लेती तो क्या कोकडी के उलझे हुए तारो को सुलझाने मे देर लगती।

मैने शब्द कहा—'समय से पहले' अधिक उलझने से पहले यदि बुढिया के हाथ मे तार आ जाता तो जल्दी सुलझ जाता। आपने देखा होगा कि कपड़ा बुनने वाला जुलाहा कपडा बुनने के लिए ताना-बाना लगाता है। कई वक्त तार बीच मे उलझ जाते है, लेकिन वह बडी चतुराई से उस उलझे हुए धागे को निकाल लेता है।

सुलझने वाली क्रिया करिए

आपको कौन सी क्रिया करनी है ? उलझ तो गये हैं भवसागर में, ससार के भँवर मे उलझ गये है। भवजाल मे उलझ गये है। इस भव-जाल को सुलझाना है। इसके लिए ऐसी कौन सी क्रिया करनी है और इस क्रिया को किस तरीके से करना है जिससे हमारी आत्मा जो भवजाल के झमेले मे उलझ गई है उसको इस उलझन से निकाला जाय, ऐसी क्रिया करनी है। अच्छा धधा करना है, या हीरे का व्यवसाय करना है या सोना चादी का व्यवसाय करना है, क्या करना है ? ये सारे के सारे धन्धे बन्ध के कारण हैं। ये आत्मा को बन्धन मे उलझाने वाले हैं, भ्रमर-जाल से बचाने वाले नही है।

भ० महावीर ने अपनी चेतना से, अनुभव से और पूर्ण ज्ञान से यह समझा कि जितना-जितना मानव तू ममता मे उलझकर काम करेगा वह तेरे लिए भ्रमर-जाल मे फँसाने वाला होगा। यदि तू जीवन को मुक्त करना चाहता है तो सत्सग मे आकर धर्म की आराधना कर, साधना कर। तेरी आत्मा इससे सुलझेगी, वह क्रिया शुभ है, इसे आज करने वाला आगे अक्रियावादी बन जायगा।

सयमी साधु की गोचरी क्रिया भी तप

एक तो मिथ्यात्वी क्रिया करता है और दूसरा [illegible]

क्रिया करता है। सम्यग्दृष्टि से भी आगे बढे तो एक सयमी सत क्रिया करता है। यदि क्रिया से बध ही माना है तो हिलने से चलने से घूमने से यदि पाप ही लगता है तब तो उपासरे से बाहर गोचरी के लिए भी जाने जरूरत नही है। गोचरी के लिए जाएगा तो दस घर घूमना भी पडेगा। इतने घरो मे जाने-आने से कही सघट्टा भी लगेगा। सचित्त पृथ्वी से, वनस्पति से स्पर्श के कारण भी दोष लगेगा, इससे पाप लगेगा तो क्यो नही उपासरे मे ही बैठा रहे, और भक्त आवे उनसे जो पा लिया, जो मिल गया उससे सतोष कर ले तो क्रिया से बचेगा। क्रिया से तो बचेगा या नही बचेगा, लेकिन पाप से बचेगा। या पाप बढ जायगा ? यह सोचने की बात है।

भगवान महावीर देव ने कहा कि शरीर वगैरह की क्रिया यदि यत्न से करता है, तप समझकर करता है तो वह तुम्हारे लिए भिक्षाचरी तप है। बारह प्रकार के तपो मे भिक्षाचरी भी तप माना गया है।

छोटे गाँव मे भिक्षा के लिए जाने वाले को पाँच दस घरो मे जाने पर ही काम चल जायगा और बडे नगर मद्रास जैसे होगे तो कभी बीस-तीस घरो मे जाना पडेगा। कितनी नाले चढनी पडेगी, कितनी उतरनी पडेगी, कितना हलन-चलन करना पडेगा, इससे कितना कर्मबन्ध हो गया होगा। तो पीछे क्या करना ?

क्रिया बन्द करके जगह की जगह ही ले लेना, यदि जगह पर ले लिया तो हमारे शरीर की क्रिया होगी वे हमसे यतना वाले ज्यादा है या अयतना वाले ज्यादा है। हम खुद गमन करके लावे तो गवेषणा करने का अवसर मिलता है। एक घर मे गये, नही मिला तो हमारी परीक्षा होती है। नही मिला तो मन मे बिगाड नही लाना चाहिए। गये जीना चढ़े और आपके मन माफक काम बन गया तब तो मन सतुष्ट रहेगा, ठीक है आधा काम तो बन गया है एक-दो घरो मे और जायेंगे तो पूरा काम बन जायगा। कभी ऐसा भी होता है कि ऊपर गये और बाई असूझती हो गई। कभी किसी बच्चे ने लाइट जला दी, रोटी हाथ से गिर गई, सारा मामला बिगड गया। मत्थेण वदामि हुआ और वापिस लौटे। महाराज ने सोचा कि 'आज तो गजब हो गया। ऐसा जानता तो आता ही नही। तीन-चार नाले भी चढी-उतरी, टाइम फालतू गया।' उस वक्त मन को नही बिगाड कर हम अपने मन मे यह समझ कर चलें कि नही मिला तो कोई बात नही, तप तो हुआ। परीषह सहन हुआ, कभी शुभ मिलन हुआ कभी अशुभ मिलन हुआ। कभी किसी धनवान के यहाँ गये तो

मत्थेणं वंदामि करके अन्दर से ही वेरा दिया और कभी-कभी वहिन बैठी की बैठी रह गई । न भाई उठा, न वहन उठी । कभी यह सवाल हुआ कि महाराज आये है । वाई वोली म्हारे घर मे सब कुछ है वोलो आपको क्या चाहिए । एक-एक बात पूछकर झुझलाने का मौका देती है । यदि सीधे सावधानी से चलते है तो घूमते हुए क्रिया होती है । क्रिया होते हुए भी इससे मुनि की परीक्षा होती है । यह भी तपस्या हो गई इससे निर्जरा होती है ।

विवेकपूर्वक क्रिया करिए

ऐसे ही भगवान् महावीरदेव ने गृहस्थो के लिये भी कहा कि मानव ! तुम गृहस्थ जीवन मे हो लेकिन गृहस्थ जीवन मे भी एक विवेकी गृहस्थ को भी ससार मे ऐसी क्रिया करने का लक्ष्य होना चाहिए कि कर्मों का बधन हल्का हो और आत्मा शुभ कर्म करने की भागी बने ।

लेकिन यह वात सुनकर अच्छी समझना और बात है और उस पर आचरण करना और बात है । यदि महावीर-वाणी का एक तत्त्व भी आप अपने मे बैठा ले तो समझू कि आपका तप भी, आपका जप भी, आपका सत्सग भी सब कुछ सवल और सार्थक हो सकता है । लेकिन क्रिया मे विवेक नही आयगा, क्रिया मे ज्ञान की ज्योति नही जगेगी तब तक शुभ क्रिया भी नही होगी । एक कवि ने कहा है—

छोड दे कर्म बध हेतु, हिये धर टूटन का वेतू ।
दया भव अर नव मे सेतु, बाँध दिल जो चाहे जेतु ॥
कृष्णलाल साची कहे, चेत सके तो चेत ।
कर सुकृत मत गाफिल रह तू, शिर पर आया श्वेत ॥
आतमा सुख पासी भारी ।
टले नही कर्म रेख टाली, शुभाशुभ भुगते नर नारी ।"

कर्मबध के हेतुओ को तोड़ो

अनन्त काल से वीतराग का एक ही सिद्धान्त चल रहा है कि मानव ! कर्म का फल विना भोगे छूटना नही होगा । यदि कडवे कर्मों का फल भोगना नही पडे, पूर्व कर्मों से वचने का उपाय चाहे तो पहला उपाय है, कर्म वाधने मे सावचेत रह । यदि वाधेगा नही तो भोगना भी नही पडेगा । यदि बाँधने मे सावचेत नही रहा तो भोगना पडेगा ही । इसलिए कहा गया कि "तोड दे कर्म बध हेतु" जिन कारणो से कर्मो का बध

होता है उनको छोड दे। जो कर्म तोडने के कारण है उनको हृदय मे धारण कर और कर्म बाँधने के कारणो को छोड दे।

बंध और निर्जरा के कारण

बात बहुत आसान है। एक ही चाबी को घुमाने से ताला बन्द होता है और उसी को घुमाने से ताला खुल जाता है। मन ही बुरे भावो से कर्म बध करता है और अच्छे भावो से कर्म तोडता है। ससार मे जब अनुराग की भावना है तन के प्रति, कुटुम्ब-कबीले के प्रति, भाई-भतीजो के प्रति, उससे बध होता है। लेकिन एक साधर्मी के प्रति, देव, गुरु, धर्म के प्रति, धर्मी ससार के प्रति, धर्मी सघ के प्रति यदि अनुराग है तो क्या होगा ? बात समझ मे आ रही है ?

आपको बच्चो के साथ प्रेम है, मारवाड मे हो और बच्चा रे बीमार होवण री कोई खबर या समाचार आवे तो आप पाँच दिन मारवाड मे चैन से रह सकोगे क्या ? और यदि यह बात सुन लो कि मद्रास मे एक धर्मी भाई जिसको कुटुम्ब कबीला नही है, अकेला धन्धा कर रहा है, वह बीमार हो गया है, उसकी तबियत ठीक नही है, यह खबर सुन लो तो पोते की बीमारी सुनने से जितना दुख हुआ उतना ही दुख होगा क्या ?

जिस राग को आप कर्मबध का कारण कह रहे हो उसके साथ चिपक रहे हो लेकिन धर्मी भाई के प्रति अनुराग करने से कर्मो की निर्जरा होती है, शुभ कर्मो का बन्ध होता है, ससार मे शान्ति मिलती है, परलोक मे सुख मिलता है, उससे आप दूर भाग रहे हो।

साधर्मी वात्सल्य रखिए

जैसा कि मैंने आपको समता साधना के लिए, सामायिक के लिए सदेश दिया है उसी तरह से आपको एक बात यह समझनी है कि जैन सघ को ऊँचा उठाना है, जैन समाज मे शान्ति लानी है, प्रियजनो और गुरुजनो का मान रखना है तो जैन समाज को साधर्मी वात्सल्यता भी सीखनी पडेगी। कुटुम्ब-परिवार-वत्सलता तो आप मे है। कोई बच्चा बीमार पड गया, पोता बीमार पड गया उसके माँ बाप सँभालने वाले घर पर है, फिर भी आप उसको सभालने के लिए मारवाड से चलकर आयेगे। यह क्या है ? यह मोह है। इस मोह से कर्मबध होता है या कर्म काटते है ? शुभ कर्म का बध होता है या अशुभ कर्म का ? अशुभ कर्म का बध होता है। यह मोह है।

लेकिन ऐसे ही यदि देव पर अनुराग हो, धर्म पर अनुराग हो, गुरु पर अनुराग हो, वीतराग का धर्म जितना फैल सके उतना फैलाने मे मदद करूँ। जैन धर्म की वृद्धि के लिए मेरी तिजोरी का पैसा लगे तो उसे लगाकर धर्म को फैलाने मे मदद करूँ। इस प्रदेश के लोग जैन धर्म के बारे मे कम समझते है तो उनको समझाने का प्रयत्न करूँ। अपने गरीब साधर्मी भाइयो के लिए, जैन धर्म के लिए किसी के मन मे तडफन आती है क्या ? धर्मगुरुओ के लिए तडफन है क्या ? जैन भाइयो के जहाँ-जहाँ घर है उनकी आर्थिक स्थिति निर्बल है, उनके लिए तडफन आवे तो यह मोह हट जाय। कर्म बधेगे नही, कटेगे।

दया और वात्सल्य में अन्तर

इसमे वत्सलता है, यह दया भाव नही है। दया भाव तो किसी दीन पर होता है, दु खी पर होता है। जो कमजोर है वह दया का पात्र कहा जाता है। लेकिन एक साधु को तकलीफ मे देखकर, श्रावक या धर्मी भाई को तकलीफ मे देखकर हृदय मे जो तडफन होती है वह दया-भाव नही वात्सल्य-भाव है। कभी आपने देखा होगा कि शाम के वक्त बछडे को जब दूध चुगाने का टाइम होता है तब गाय दौडी-दौडी आती है और दरवाजा बद होता है तो उसके पास आकर अम्बे-अम्बे की आवाज लगाती है। मारवाड मे यह चीज ज्यादा देखने को मिलती है, यहाँ भी मिलती होगी। जब तक दरवाजा नही खुलता और जब तक बछडा आकर उसके स्तन के पास नही लगता तब तक उसका बोलना बन्द नही होगा। उसमे वात्सल्य भाव है। बछडे को अपना समझकर ऐसा करती है।

इसी तरह से एक जैन भाई को देखकर जो देव-गुरु और धर्म पर श्रद्धा रखता है, जो अरिहन्त को देव मानता है, निर्ग्रन्थ को गुरु मानता है और केवलियो के धर्म को धर्म मानता है, ऐसे भाई को दुःख मे देखकर आप के हृदय मे तडफन आनी चाहिए। उसके रहने और खाने-पीने की व्यवस्था नही, धन्धा नही मिला है तो उसकी सहायता करनी चाहिए और यह समझना चाहिये कि यह दूसरो के पास क्यो जाता है ? यह मेरा घर, उसका घर है मेरा धन्धा, उसका धन्धा है—ऐसी लहर आप मे से किसी के मन मे आती है क्या ? इस क्रिया को आप शुभ मानते है या अशुभ मानते है ?

समय नजदीक आ रहा है मुझे भी समय के माफक बात समेट लेनी चाहिए। एक छोटी-सी कडी कहकर समेट लूँगा।

राग के विष को साधर्मी वात्सल्य का अमृत बनाओ

हमारे जैन समाज मे, भारतवासियो मे जो राग भाव है, सत चाहते है कि उस राग के जहर को अमृत बना ले। जहर भी कभी बन सकता है क्या ? आपका सामान्य अनुभव कहेगा कि नही बन स जहर खाने से आदमी मर जाता है। लेकिन इस जहर के ऊपर तरह के प्रयोग करके इसको दवा के रूप मे काम मे लिया जाता है कई बीमारियाँ ठीक हो जाती है। सखिया एक प्रकार का जहर हो अफीम को तो आप लोगो मे से कइयो ने देखा होगा। लेकिन और वैद्य लोग सखिया को भी दवा के रूप में काम मे आने लाय लेते है। सखिया को गोमूत्र मे भिगो कर साफ किया जाता है। भी बहुत काम मे आता है। गोमूत्र मे रखकर सखिया का शोधन जाता है। उससे उसका जहरपन मिट जाता है और फिर वह कई रोग मिटाने की क्षमता वाला बन जाता है। एक कवि ने कुछ का इस प्रकार कहा है—

> जैनियो कौमी सखावत, इन दिनो जाती रही।
> एक भाई पिट रहा है, दूसरा खुश हो रहा।।
> आपकी आपस की उलफत, इन दिनो जाती रही।
> हिन्दुओं की कौमी सखावत, इन दिनो जाती रही।।
> जैनियो कौमी सखावत, इन दिनो जाती रही।

सामायिक करने वाले भाइयो को सामायिक से पहले वत्सलता सीखने की आवश्यकता है। साधर्मी वत्सलता हो सामायिक और जप-तप के अधिकारी बनेगे।

जिस कौम मे धर्मी भाइयो के साथ वत्सलता नही है, ए दूसरे को सुखी देखकर प्रसन्न नही होता और दूसरे को दुःखी देखक नही होता वह कौम कभी ऊँची आई नही, आती नही और आने भी नही। चाहे उस कौम मे दस-बीस या पचास करोडपति हो चाहे हजार दो हजार लखपति होगे, समाज मे कई छोटे-बडे होगे भाई-भाई मे प्रेम नही है, समाज मे वत्सलता नही है तो गरीब की तरफ कोई ध्यान नही देगा। गरीबो को भोजन मुफ्त दिया ज है, कोढियो अधो और लूले-लगडो की तरफ ध्यान जा रहा है. साधर्मी भाइयो का पता नही है। अडोस-पडोस वाले साधर्मी भाइ क्या नम्रावन है ? एक भाई दूसरे भाई को बढा हुआ देखकर जल रहा है

कैसे बढ गया, किस तरह इसको एक धक्का दे, कैसे चौपट कर दे ? छोटा बडे को देखकर राजी नही होता और बडा छोटे को देखकर उसकी सहायता नही करता। कोई जरा-सा बडा नही कि अहकार मे झूमने लग जाता है। इसी कारण से जैन समाज जैसे ऊँचे समाज मे जन्म लेकर भी लोग प्रसन्न नही हो रहे हैं। एक दूसरे भाई के साथ कधा से कधा मिलाकर चले और हजार पाँच सौ घर हैं तो आपको कोई कही से निकाल सकता है क्या, या खदेड सकता है क्या ? आप मे यह भावना कब आयेगी ? ममता घटे, सभी जैन भाइयो मे एक दूसरे के प्रति वात्सल्य भावना आवे तभी यह सम्भव हो सकता है।

हमारे बुजुर्गो मे ऐसी कहावत है कि पाली वगैरह कुछ ऐसे स्थान थे जहाँ पर कोई नया जैन भाई वाहर से आकर बसता तो यह प्रथा थी कि उसको एक-एक ईट और एक-एक मुहर सोने की हर घर से दी जाती। धर्मी भाई सोचते कि हर घर से एक मुहर और एक ईंट दी जायगी और दूसरी तरह की कोई मदद नही भी की जायेगी तो भी उस भाई की आर्थिक स्थिति ठीक हो जायेगी और वह अपना धधा शुरू करके घर चला सकता है। लोग सोचते वाहर से आया हुआ भाई हमारे नगर मे आया है, वह इधर-उधर हाथ पसार कर नही रहे, वरावरी का भाई बनकर रहे। ऐसा सब समझते थे तब जैन समाज मे सुख-शान्ति थी और समाज सब का प्रेम-पात्र था। आज भी विज्ञान के युग मे जैन समाज को ऊँचा उठने का मौका रहना चाहिए।

साधर्मी भाइयो के प्रति वात्सल्य की भावना जगेगी तो आपका जीवन आगे बढकर समाज, देश और विश्व का कल्याण कर सकते है। भगवान महावीर की वाणी सुनकर उस पर आचरण करके आगे बढेगे तो आत्मा और विश्व का कल्याण होगा।

जैन भवन, मद्रास
(दिनाक ५-१०-८०, समय १० प्रात)

२२

साधक का लक्ष्य : क्रिया से अक्रिया की ओर

प्रार्थना

वीर सर्व-सुरासुरेन्द्रमहितो, वीर बुधा सश्रिता ।
वीरेणाभिहता स्वकर्म-निचयो, वीराय नित्य नम ।।
वीरात्तीर्थमिदं प्रवृत्तमतुल, वीरस्य घोर तपो ।
वीरे श्री-धृति-कान्ति-कीर्ति निचयो, हे वीर भद्रं दिश ।।

जिनशासनप्रेमी बन्धुओ !

परम वीतराग जिनेश्वर देव भगवान् महावीर जिनका धर्मशासन चल रहा है और जिनकी द्वादशाग वाणी को लेकर हम तत्त्व-अतत्त्व पर विचार कर रहे है उनको हार्दिक वदन करना हम सबका कर्तव्य है।

वदन भी एक क्रिया है और गुणगान केवल वाणी की क्रिया है। इस प्रकार क्रिया के अनेक रूप है। वाणी का तप, मन का तप और शरीर का तप—इस प्रकार हम तप के भी तीन भेद करते है। क्रिया होकर भी एक क्रिया बध को काटने वाली है जैसा कि समवायाग सूत्र के पहले समवाय मे कहा है। आपको ध्यान होना चाहिये, कुछ दिन पहले हमने क्रिया के सम्बन्ध मे विचार किया था। पहले समवाय मे भगवान ने कहा कि "एगे किरिया एगे अकिरिया"—क्रिया एक है और अक्रिया भी एक है। उसके बाद दड पर विचार चला। अशुभ क्रिया होती है तो दड का कारण होती है और शुभ क्रिया दड को काटने वाली होती है।

हमारा लक्ष्य

हमको अशुभ से शुभ मे आना है और शुभ मे आकर भी विराम नही करना है, टिकना नही है, शुभ से सतुष्ट नही होना है। शुभ क्रिया

से शुद्ध की ओर आगे बढ़ना है। शुद्ध क्रिया से आगे बढ़कर अक्रिय हो जाना है।

सामान्य सांसारिक प्राणियो की प्रवृत्ति

इस प्रकार चार विभाग हो गये। ससार के सामान्य प्राणी अशुभ क्रिया मे सदा रचे-पचे होते है। अशुभ मे रहने के लिये, अशुभ क्रिया मे पड़ने के लिये उनको कहने की आवश्यकता नही पडती। समझाने की आवश्यकता नही होती, प्रेरणा की जरूरत नही होती। शायद ही कोई ऐसा दिन बीता हो, शायद ही किसी को बुलावा देकर कहा हो कि—भाई खा ले, भोजन करले। भोजन किये विना कैसे काम चलेगा। विना प्रेरणा किये ही वह भोजन करेगा। नौजवान होने पर शादी के लिये प्रेरित होगा और सयोग नही मिला तो गली-गोचर मे टकरायगा। इसके लिये प्रेरणा करने की आवश्यकता नही है।

इसीलिए एक कवि ने कहा है—

> है सर्वश्रुत परिचित अनुभूत, भोग बन्धन की कथा।
> पर से जुदा एकत्व की उपलब्धि केवल सुलभ ना॥

ससारी प्राणियो की सहज रुचि-प्रवृत्ति इन्द्रिय-विषयो की ओर है।

विषय-विकार

शब्द, वर्ण, गध, रस, स्पर्श पांच इन्द्रियो के पाँच विषय है और इन पाँच इन्द्रियो के अलावा मन है। यह अलग हुकूमत करता है। यह शब्दादि विषयो के अलावा कषायो मे भी जाता है। विषय मे भी कौन-सा विषय अनुकूल है, अनुकूल मे मन द्वारा राग पैदा होता है और प्रतिकूल के लिए मन मे रोष पैदा होता है। इस तरह इन्द्रियां पाँच है और इन्द्रियो के विषय कितने ? २३ ? और विकार कितने ? २४०। अब विकार क्या है इस बात को समझ लेगे। जीवन मे विकार हटाना सीख जावे तो वह शिक्षा आप के लिए भव-तारक बन जायगी।

विषय को लोगो ने समझा है लेकिन समझने वाले भी विषय मे प्रविष्ट होते है और नही समझने वाले पशु-पक्षी भी विषय मे प्रवेश करते है। अनुकूल से पशु को भी राग होता है और प्रतिकूल से पशु को भी द्वेष होता है। अच्छा खान-पीना मिला, अच्छा घास और आटा मिला,

रहने के लिए अच्छे स्थान की व्यवस्था होगई, इनसे पशु का मन भी प्रसन्न होता है। जिस जगह वह बाँधा जाता है उस जगह की सफाई अच्छी होनी चाहिये, सर्दी, गर्मी और वरसात से वचने का प्रवध रहे तो पशु खुश होगा या नही ? आप को भी गर्मी मे विना वारी या खिडकी वाले स्थान पर वैठा दिया जाय या इस हाल मे उस जगह दीवार के सहारे वैठा दिया जाय जहाँ पर हवा नही पहुँचती है तो आपके मन मे रोष आयगा और सेठजी को अच्छी हवादार जगह पर वैठा दिया जाय, नीचे गलीचा विछा दिया जाय तो मन मे राग आ जायगा। इसी तरह पाँच इन्द्रियो के २३ विषय हैं, और उनके मूल विकार राग और द्वेष दो ही हैं। लेकिन इन दो का अन्य विकारी पदार्थों के साथ सम्बन्ध होने से २४० भेद हो जाते है। मैं अभी इस पर विस्तार से विवेचन नही करूँगा। मूल विषय पर थोडा-सा प्रकाश डाल देना चाहता हूँ।

शुभ, अशुभ और शुद्ध – तीन प्रकार की क्रिया

आप सामायिक करने वैठते हैं, स्वाध्याय और ध्यान करने वेठते हैं तो शुभ विचारो से चितन करेगे तो वहुत अच्छा हो सकता है और अशुभ से शुभ की ओर वढेगे।

अव आपको मनुष्य जन्म मिला है तो कौन-सी क्रिया करने के लिये मिला है ? मैं कह गया हूँ कि अशुभ क्रिया के अधिकारी अनन्त जीव हैं। शुभ क्रिया के अधिकारी अनन्त जीव नही होते, असख्यात जीव होते हैं लेकिन शुद्ध क्रिया के करने वाले सख्यात जीव ही होते हैं।

अव वताना यह है कि शुद्ध क्रिया क्या होती है, शुभ क्रिया क्या है और अशुभ क्रिया क्या है। इन तीनो के वाद शुद्ध क्रिया की साधना से अक्रिय दशा पा लेते है। ग्यारहवें, वारहवे और तेरहवे गुणस्थान वाले शुद्ध क्रिया वाले हैं। गुणस्थान क्या है यह तो आप जानते होगे। स्वाध्यायी भाई वतायेगे कि ये क्या है और कितने होते है ?

दण्डस्थान और गुणस्थान

ससार के जीवो के दण्ड के स्थान २४ हैं लेकिन विकास के स्थान १४ हैं। कोई दड पाता है, सजा पाता है या कर्मो का फल भोगता है, ऐसे स्थान २४ हैं। लेकिन जिन जगहो मे आपका आध्यात्मिक विकास होता है वे १४ हैं और आध्यात्मिक विकास के सोपानो का नाम है गुणस्थान। जिसमे आपके विचारो का एव आचार का परिष्कार हो, गति हो, हमारे

विषय-कषाय कटें, आत्मा के चैतन्य गुण का, उपयोग गुण का तथा सयम गुण का विकास हो ऐसे स्थान भगवान ने १४ बताये है। इन १४ गुणस्थानों को पार करने के बाद उसका ससार के जन्म-मरण के चक्कर मे आना नही होता।

शुभ से शुद्ध की ओर : साधक का लक्ष्य

जन्म-मरण के चक्कर से जो मुक्त होना चाहेगा। उसको शुभ क्रिया से शुद्ध क्रिया मे आना होगा। शुभ क्रिया जहाँ है वहाँ शुभ कर्मो का बध होगा, पुण्य का बध होगा। शुभ क्रिया मे चाहे हम संवर की क्रिया करे, निर्जरा की क्रिया करे, इन सब मे पुण्य बध जारी रहता है। हाँ, अन्तर इतना है कि वहाँ निर्जरा भाव ज्यादा होता है और पुण्य भाव कम होता है।

जैसे मिसाल के रूप मे देखिये—आप सामायिक मे बैठे हैं तो यह सवर क्रिया है लेकिन सामायिक मे जब आप स्वाध्याय मे सलग्न होगे, आप ध्यान मे सलग्न होगे तब आप आने वाले विषयो के वेग को रोकेंगे। क्रोध का प्रसग आया तो उसको आपने रोक लिया, शमन कर लिया अथवा आने वाले कषाय का उपशमन कर लिया। इस तरह आपने योग की प्रवृत्ति पर, इन्द्रियो की प्रवृत्ति पर काबू पा लिया तो यह सवर के साथ निर्जरा की आराधना हो गई।

अब इसमे लक्ष्य क्या है ? लक्ष्य हमारा शुद्ध क्रिया की ओर जाने का है। सवर और निर्जरा सामूहिक सवर निर्जरा क्रिया कहलाती है। लेकिन सामायिक मे लोग पुण्य का उपार्जन भी करते है और पुण्य का बध भी करते है। मनयोग शुभ है, विचारो मे शुभ योग की प्रवृत्ति है, क्रिया मे शुभ योग की प्रवृत्ति है. मन, वचन और काया मे शुभ योग की प्रवृत्ति होना पुण्य का कारण है। इसमे हमने मनयोग की प्रवृत्ति करते समय यह ख्याल किया कि देखो कभी आर्तध्यान प्रवेश नही कर पावे, रौद्रध्यान प्रवेश नही कर पावे। इस पर आपने नियन्त्रण किया यह शुभ क्रिया पर कठोरता करके निर्जरा का लाभ मिला लिया।

प्रवृत्ति-निवृत्ति का समन्वय

यह खूबी है जैन धर्म की। यह प्रवृत्ति के साथ निवृत्ति और निवृत्ति के साथ प्रवृत्ति है। अशुभ से निवृत्ति करना और शुभ मे प्रवृत्ति करना। शुभ मे जहाँ तक राग-द्वेष आकर हमला करते है, उनका उपशमन करते हुए वीतराग-भाव की तरफ जाना, ग्यारहवें गुणस्थान से वीतराग-भाव

चालू हो गया। ग्यारहवे गुणस्थान का नाम है उपशान्तमोह, बारहवे का क्षीणमोह, तेरहवे गुणस्थान का नाम सयोगी केवली और चौदहवे गुणस्थान का नाम अयोगी केवली । ग्यारहवे गुणस्थान मे कषायो का उपशमन हो गया। यह वीतराग स्थान है, राग का उदय नही है, शरीर क्रिया कर रहा है, लेकिन शुद्ध क्रिया है जहाँ राग-द्वेप और विषय-कषाय का विल्कुल उदय नही है, मोह का विल्कुल सम्बन्ध नही है ऐसी क्रिया जहाँ होती है उसका नाम है शुद्ध क्रिया।

अक्रिय दशा

चौदहवे गुणस्थान मे सभी प्रकार की क्रियाओ पर कट्रोल किया जाता है। शरीर का हिलना-डुलना विल्कुल नही होता, आँख की पलक भी नही गिरती। मन से न अशुभ विचारो का सचार होना, न शुभ का सचार होना। वाणी से कुछ नही वोलना अर्थात् यहाँ तक त्याग कर दिया "अहाउय पालइत्ता अनोमुहुत्तद्धावसेसाए जोगा णिरोह करेमाणे"... तप्पढमयाए मणजोग निरु भइ ...वइजोग निरु भइ... कायजोग निरु भइ, आणा०—

उत्तराध्ययन सूत्र के २६ वे अध्ययन मे अक्रियदशा पर विचार करते हुए कहा है कि आत्मा मुक्ति की तरफ किस तरह आगे वढता है। सवसे पहले मनयोग का निरोध करके वचनयोग का निरोध करता है फिर काययोग का निरोध करता है, श्वासोच्छ्वास का निरोध करके अ इ उ ऋ लृ इन पांच ह्रस्व अक्षरो के उच्चारण मे जितना समय लगता है उतने समय तक अक्रिया मे रहता है और शुक्ल ध्यान के चतुर्थ चरण मे चार अघाती कर्मो को काटकर मुक्त हो जाता है। यह सव अक्रिय दशा की वात है।

सामायिक, शरीर का विश्राम नहीं

सामायिक करने वाला सोचे की मेरी सामायिक घटे भर की है इसमे मुझे किसी से वोलना-चालना नही है। मैं धर्मक्रिया की प्रवृत्ति कर रहा हूँ। मेरे को आर्त, रौद्र ध्यान से वचकर धर्मध्यान मे जाना है। लेकिन आजकल सामायिक मे वैठे हुए क्या सोचते है ? घर की किट-किट सूँ वचण वास्ते धर्मस्थान मे जाकर सामायिक लेकर वैठनो है। हवादार वारी के पास जाकर वैठ गया, माथो टिकावण वास्ते वारी के पास दीवार को सहारो ले लियो। वैठने मे भी माई का लाल अच्छी से अच्छी जगह चुनकर वैठना चाहता है। यह भूल जाता है कि साधना करने वाले लोग तो श्मशानो मे जाकर भी तप और साधना करते है। हजारो दिक्कते सहे

विना कर्म काटे नही जाते। लेकिन अपनी हालत क्या है कि घडी भर भी गर्मी मे बैठकर सामायिक नही की जाती। वह सोचता है कि तकलीफ घर और दुकान पर सहते रहते है, धर्मस्थान मे तो तकलीफ मिटावण वास्ते और घर री परेशानी सूँ बचण रे वास्ते आया हूँ। उठे भी आकर तकलीफ उठाऊँ तो आवणे मे फायदो ही काई। सामायिक मे बैठकर तो शरीर को विश्राम देवणो है—यह सोचकर सामायिक मे बैठ जाता है। सामायिक मे क्या क्रिया करनी है इसका कोई ख्याल नही है। अकर्मण्य होकर बैठ जाता है। शरीर को आर्तध्यान, रौद्रध्यान से बचाया तो, लेकिन मन खाली रहने वाला नही है।

सामायिक साधना : विषय-कषाय हटाना

मन को धर्मध्यान मे लगाने के लिए चार आलम्बन है। मन को निर्विकार बनाना है और इधर-उधर की चचलता से रोकना है तो किसी काम के साथ उसको जोड दीजिए। काम के साथ जोडने से मन उसमे लगा रहता है जिस काम मे जुडेगा। वाणी से बोलना होता है तो जहाँ जरूरत होती है वही बोला जाता है। नही तो विना बोले घटो का समय निकाल देते है लेकिन विना सोचे, विना विचार किये घटों का समय तो दूर मिनटो का समय भी निकालना मुश्किल हो जाता है। चाहे घर मे बैठे, चाहे दुकान मे बैठे, चाहे साधु सतो के पास आवे, दिमाग मे कुछ न कुछ चक्कर चलता ही रहता है। अब दिमाग जो चक्कर खाता ही रहता है उसको इधर-उधर से मोडने के लिए ससार के विषय कषायो को मोड़ने के लिए यह हमारा सामायिक साधना का रूप है।

सामायिक की उन्नति के रूप

जैसे अहिंसा के रूप अनेक होते है उसी तरह सामायिक के रूप भी अनेक है। हमारे यहाँ साधना रूप सामायिक है। श्रावको की सामायिक और होती है और साधु-सन्तो की सामायिक और होती है। ग्यारहवे से लेकर बारहवे गुणस्थान और तेरहवे गुणस्थान वालो की सामायिक मे और आपकी सामायिक मे काफी फर्क है। पाँचवे गुणस्थान मे भी कुटुम्ब या परिवार के बीच मे रहने वालो मे और प्रतिमाधारी श्रावको की सामायिक मे फर्क है।

आनन्द श्रावक की तरह जिन्होने अपने लम्बे-चौडे कारोबार का काम अपने पुत्र के सुपुर्द किया और शीलव्रत का नियम् करने के बाद

चालू हो गया। ग्यारहवे गुणस्थान का नाम है उपशान्तमोह, बारहवे का क्षीणमोह, तेरहवे गुणस्थान का नाम सयोगी केवली और चौदहवे गुणस्थान का नाम अयोगी केवली। ग्यारहवे गुणस्थान मे कषायो का उपशमन हो गया। यह वीतराग स्थान है, राग का उदय नही है, शरीर क्रिया कर रहा है, लेकिन शुद्ध क्रिया है जहाँ राग-द्वेष और विषय-कषाय का बिल्कुल उदय नही है, मोह का बिल्कुल सम्बन्ध नही है ऐसी क्रिया जहाँ होती है उसका नाम है शुद्ध क्रिया।

अक्रिय दशा

चौदहवे गुणस्थान मे सभी प्रकार की क्रियाओ पर कण्ट्रोल किया जाता है। शरीर का हिलना-डुलना बिल्कुल नही होता, आँख की पलक भी नही गिरती। मन से न अशुभ विचारो का सचार होना, न शुभ का सचार होना। वाणी से कुछ नही बोलना अर्थात् यहाँ तक त्याग कर दिया "अहाउय पालइत्ता अन्तोमुहुत्तद्धावसेसाए जोगा णिरोह करेमाणे"·· तप्पढमयाए मणजोग निरुंभइ ...वइजोग निरुंभइ ..कायजोग निरुंभइ, आणा०—

उत्तराध्ययन सूत्र के २९ वे अध्ययन मे अक्रियदशा पर विचार करते हुए कहा है कि आत्मा मुक्ति की तरफ किस तरह आगे वढता है। सबसे पहले मनयोग का निरोध करके बचनयोग का निरोध करता है फिर काययोग का निरोध करता है, श्वासोच्छ्वास का निरोध करके अ इ उ ऋ लृ इन पांच ह्रस्व अक्षरो के उच्चारण मे जितना समय लगता है उतने समय तक अक्रिया मे रहता है और शुक्ल ध्यान के चतुर्थ चरण मे चार अघाती कर्मो को काटकर मुक्त हो जाता है। यह सव अक्रिय दशा की वात है।

सामायिक, शरीर का विश्राम नहीं

सामायिक करने वाला सोचे की मेरी सामायिक घटे भर की है इसमे मुझे किसी से बोलना-चालना नही है। मैं धर्मक्रिया की प्रवृत्ति कर रहा हूँ। मेरे को आर्त, रौद्र ध्यान से बचकर धर्मध्यान मे जाना है। लेकिन आजकल सामायिक मे बैठे हुए क्या सोचते हैं? घर की किट-किट सूँ वचण वास्ते धर्मस्थान मे जाकर सामायिक लेकर बैठनो है। हवादार वारी के पास जाकर बैठ गया, माथो टिकावण वास्ते वारी के पास दीवार को सहारो ले लियो। बैठने मे भी माई का लाल अच्छी से अच्छी जगह चुनकर बैठना चाहता है। यह भूल जाता है कि साधना करने वाले लोग तो श्मशानो मे जाकर भी तप और साधना करते है। हजारो दिक्कते सहे

क्षेत्र कहलाते है। इन्ही क्षेत्रो मे रहने वालो को धर्मकरणी करने का, पाप को रोकने का और साधना करके जीवन को शुद्ध बनाने की कला आती है। आपने भाग्ययोग से भरतक्षेत्र मे जन्म पाया है। जिस क्षेत्र को चौवीस तीर्थकरो ने अपने पावन पदो से पवित्र बनाया है उसी क्षेत्र मे हम जन्मे है। अब भी यदि हम विषय-कषायो मे रमे रहे तो जिन्दगी में फिर कल्याण का मौका अन्यत्र नही आयेगा। यह मौका हाथ से नही चला जाय। थोडा-सा ध्यान देकर इस मौके को हाथ मे ले लिया तो कल्याण हो जायगा। इसके लिये सामायिक साधना को श्रेष्ठ बताया है।

जीवन उन्नत करना चाहो तो, सामायिक साधन करलो।
नरलोक मे स्वर्ग बसाना हो तो, सामायिक साधन करलो॥
साधक सामायिक सघ बने, सब जन सुनीति के भक्त बने।
आकुलता से बचना चाहो तो सामायिक साधन करलो॥

यह न सोचिये कि महाविदेहक्षेत्र ही उत्तम है और कल्याण का साधन वही पर है, ऐसा नही है। भरतक्षेत्र भी धर्म करणी का अधिकारी है। तीर्थकरो ने यहाँ जन्म लेकर यहाँ के परमाणुओ को शुद्ध कर दिया है। आपने हमने भी भरतक्षेत्र के मध्य खड मे जन्म पाया है। अनार्य क्षेत्र मे जन्म पाने वालो को यह सुध-बुध नही है कि कर्तव्य क्या है और अकर्तव्य क्या है। वहाँ कम से कम लोगो को धर्म का ज्ञान है। सत्सग से उपदेश मिले तो वे कहेगे कि माँस खाने मे और कुशील मे कोई बुराई नही है। स्त्री और पुरुष दोनो राजी होकर मिलते है तो इसमे पाप क्या है? पश्चिमी लोग ऐसा बोलते हैं कि ब्रह्मचर्य व्रत की जरूरत क्या है? दोनो व्यक्ति मिलकर एक दूसरे के मन को राजी करते है तो यह पुण्य है। कोई आदमी झूठ बोले तो उससे कहे कि झूठ क्यो बोला तो वह कहता है कि बाप जी! दूसरो को मन राजी होवे, सब प्रसन्न होवे, हँसने लग जावे तो झूठ बोलने मे थोडो दोष लग गया तो क्या है? इसी तरह से पश्चिम के लोग थोडी बहुत आदमियो की सेवा करना, पशुओ की सार-सम्भाल करना सद्गुण सीखे हैं, लेकिन ब्रह्मचर्य क्या चीज है, इसकी भी आराधना करनी चाहिये, यह पश्चिम की हवा मे सस्कार नही है।

बच्चो को भी सुसंस्कारी बनाइये

कही पश्चिम की हवा तुम्हारे भी घर मे न घुस जावे इसका ख्याल राखजो। थे पइसा के पीछे तो रात-दिन लाग रह्या हो। थारा टाबर-

टावरी कठे जावे, कठे बैठे, उणारी रुचि कई है, किसके साथ बात करते है, उनमे धर्म के सस्कार कैसे है, इसका कोई ख्याल आपको नही है। पैसे मे इतना मस्त हो जाते हो कि पैसा मिल गया तो भगवान् मिल गया। लेकिन याद राखजो कि पैसा काम नही आवेला। बाल-बच्चो के सस्कार बिगड गये तो परेशानी उठानी पडेगी, सदमा होगा, दु ख होगा तो फिर कोई उपाय नही है। इसलिये यदि अपने बच्चे-बच्चियो का पवित्र जीवन देखना चाहे तो यह देखिये कि आपके बच्चे सदाचारी है या नही। माता-पिता का आदर करने वाले और भक्ति करने वाले है या नही। चकमा या धोखा देने वाले तो नही है, उन पर कट्रोल रखने का ऐसा सिलसिला रहेगा तो मन मे प्रसन्नता सदा कायम बनी रहेगी। लेकिन यदि उनमे सदाचार नही है और हीरे की अगूठी २५ हजार की कीमत की पहनकर घूम रहा है, गले मे सोने की लड पहन रखी है और आवारा की तरह से घूम रहा है, न आचार है न विचार है। यह भी नही जानता कि माँ-बाप और बडो का आदर कैसे करना, सघ के साथ मे प्रेम का कैसा व्यवहार करना, साधर्मी भाई के साथ वात्सल्य कैसे रखना, गुरुदेव की भक्ति करना, उन्होने रास्ता बताया है तो उपकार नही भूलना यदि इस प्रकार के सस्कार उनमे नही होगे तो आपके बच्चे-बच्चियाँ पढे-लिखे होकर भी अपने जीवन को ऊँचा नही उठा पावेगे। इस बात का ख्याल जैन समाज को केवल अपने लिए ही नही सारे विश्व के लिए करना है।

इसीलिए कहा है—"साधक सामायिक सघ बने"। साधनाशील सामायिक करने वालो का सघ बनाओ उसमे यह ध्यान रहे कि सामायिक की साधना दस्तूर के रूप मे नही हो। धर्मध्यान करके अशुभ से शुभ क्रिया की ओर आगे बढो। यदि ऐसा करेगे तो आपके जीवन मे दुर्विचार और कुविचार घटेगे, जीवन मे शान्ति आयेगी तो आपका जीवन पवित्र होगा। आप सोचेगे कि हमने ससार मे बहुत कुछ राग और भोग कर लिया है। अब भोग से सम्बन्ध छोडना चाहिये, ऐसी भावना कब आयेगी? तब आयेगी जब इसके लिये प्रयत्न करेगे। जब तक ऐसी भावना नही आयेगी, राग और मोह को नही छोडेगे तब तक आत्मा को शान्ति मिलने वाली नही है, ऐसा समझकर उत्तम सदेश पर चलने की कोशिश करेगे और दृढ सकल्प के साथ आगे बढेगे तो जीवन मे आनन्द मिलेगा और प्रसन्नता प्राप्त होगी।

क्षेत्र कहलाते है। इन्ही क्षेत्रो मे रहने वालो को धर्मकरणी करने का, पाप को रोकने का और साधना करके जीवन को शुद्ध बनाने की कला आती है। आपने भाग्ययोग से भरतक्षेत्र मे जन्म पाया है। जिस क्षेत्र को चौबीस तीर्थकरो ने अपने पावन पदो से पवित्र बनाया है उसी क्षेत्र मे हम जन्मे है। अब भी यदि हम विषय-कषायो मे रमे रहे तो जिन्दगी मे फिर कल्याण का मौका अन्यत्र नही आयेगा। यह मौका हाथ से नही चला जाय। थोडा-सा ध्यान देकर इस मौके को हाथ मे ले लिया तो कल्याण हो जायगा। इसके लिये सामायिक साधना को श्रेष्ठ बताया है।

> **जीवन उन्नत करना चाहो तो, सामायिक साधन करलो।**
> **नरलोक मे स्वर्ग बसाना हो तो, सामायिक साधन करलो ॥**
> **साधक सामायिक संघ बने, सब जन सुनीति के भक्त बने।**
> **आकुलता से बचना चाहो तो सामायिक साधन करलो ॥**

यह न सोचिये कि महाविदेहक्षेत्र ही उत्तम है और कल्याण का साधन वही पर है, ऐसा नही है। भरतक्षेत्र भी धर्म करणी का अधिकारी है। तीर्थंकरो ने यहाँ जन्म लेकर यहाँ के परमाणुओ को शुद्ध कर दिया है। आपने हमने भी भरतक्षेत्र के मध्य खड मे जन्म पाया है। अनार्य क्षेत्र मे जन्म पाने वालो को यह सुध-बुध नही है कि कर्तव्य क्या है और अकर्तव्य क्या है। वहाँ कम से कम लोगो को धर्म का ज्ञान है। सत्सग से उपदेश मिले तो वे कहेगे कि माँस खाने मे और कुशील मे कोई बुराई नही है। स्त्री और पुरुष दोनो राजी होकर मिलते है तो इसमे पाप क्या है ? पश्चिमी लोग ऐसा बोलते हैं कि ब्रह्मचर्य व्रत की जरूरत क्या है ? दोनो व्यक्ति मिलकर एक दूसरे के मन को राजी करते हैं तो यह पुण्य है। कोई आदमी झूठ बोले तो उससे कहे कि झूठ क्यो बोला तो वह कहता है कि बाप जी ! दूसरो को मन राजी होवे, सब प्रसन्न होवे, हँसने लग जावे तो झूठ बोलने मे थोडो दोष लग गया तो क्या है ? इसी तरह से पश्चिम के लोग थोडी बहुत आदमियो की सेवा करना, पशुओ की सार-सम्भाल करना सद्गुण सीखे हैं, लेकिन ब्रह्मचर्य क्या चीज है, इसकी भी आराधना करनी चाहिये, यह पश्चिम की हवा मे सस्कार नही है।

बच्चो को भी सुसस्कारी बनाइये

कही पश्चिम की हवा तुम्हारे भी घर मे न घुस जावे इसका ख्याल राखजो। थे पइसा के पीछे तो रात-दिन लाग रह्या हो। थारा टाबर-

इसलिये मैं यह चाहूँगा कि मारवाड के सेठ लोग और सौराष्ट्र के सेठ लोग लाखों-करोडो कमाने मे तो सहयोग देते हैं लेकिन इस तप मे भी सहयोग करे। ये एक से ग्यारह होवे तो मेरे मन मे प्रमोद होगा। मद्रास के भाई भी ऐसा तप करने की योग्यता रखते हैं। वे भी इनको सहयोग देगे, साथ देगे ऐसी मैं आशा करता हूँ।

जैन स्थानक, मिन्ट स्ट्रीट, मद्रास
(दिनांक १२-१०-८०, समय १० प्रात)

तप-प्रेरणा

भाई तेजराज छाजेड तप की आराधना के साथ जीवन भर के लिये सजोडे शीलव्रत लेना चाहता है। यह भी सत्सग मे रहकर राग और विकारी भावो को त्यागकर जीवन मे ऊँचा उठना है। जिस उत्साह और उमग से तप के साथ शीलव्रत ले रहा है यह सराहनीय है और आप लोगो के लिए अनुकरणीय है। ये जीवन भर इसकी आराधना करेगे, मन को आगे बढा पायेगे तो आत्मा को शान्ति मिलेगी।

सूचना—नवपद की आराधना के दिन नजदीक आ रहे है। ६ दिन तक आयम्बिल तप के साथ यह आराधना की जाती है। जो भाई आयम्बिल करना चाहे वे आयम्बिल करेगे। जो आयम्बिल नही कर सके वे दूसरे तप से वचित नही रहे।

आचार्यश्री भूधरजी महाराज राजस्थानमे श्रेष्ठ सत हुए है उन्होंने चतुर्विध सघ की बहुत सेवा की है। विजयादशमी के दिन उनका भी जन्म दिन है। आप लोग शायद आचार्य भूधरजी से परिचित नही है। राजस्थान मे आचार्य रघुनाथजी, जयमलजी, कुशलाजी उनकी परम्परा मे है। इन तीनो की परम्परा के संत मडल और श्रावक मडल है। मैं आपको इनके जीवन से परिचित कराने का प्रयत्न करूँगा। हर भाई-बहन त्याग तप और आराधना मे योगदान देकर उनके प्रति श्रद्धा व्यक्त करेगे तो कर्तव्य का पालन होगा, निर्जरा होगी। ओली के लिए प्रचार प्रसार करने की बात ध्यान मे ले लेवे। छठ से पूर्णिमा तक आयम्बिल व्रत करने की बात भी ध्यान मे ले लें।

थोडे दिन पहले जामनेर के भाई ललवाणी जी मद्रास मे आकर ६० दिन तक उपासरे मे रहकर मौन व्रत की साधना कर गये। उनकी जगह उनसे प्रेरणा लेकर नानचन्द भाई जो कच्छ के मूल निवासी हैं उन्होने सकल्प लिया है कार्तिक शुक्ला पूर्णिमा तक मौन व्रत के साथ सवर साधना करेगे। ४५ दिन का कठोर व्रत करेगे। खाने-पीने का उपाधान तो आपने देखा होगा लेकिन ये ४-५ दिन तक मौन व्रत के साथ स्थानक मे रहेगे, यह दूसरा नमूना होगा। ये अकेले नही रहने चाहिये।

इसलिये मैं यह चाहूँगा कि मारवाड के सेठ लोग और सौराष्ट्र के सेठ लोग लाखो-करोडो कमाने मे तो सहयोग देते है लेकिन इस तप मे भी सहयोग करे। ये एक से ग्यारह होवे तो मेरे मन मे प्रमोद होगा। मद्रास के भाई भी ऐसा तप करने की योग्यता रखते है। वे भी इनको सहयोग देगे, साथ देंगे ऐसी मैं आशा करता हूँ।

जैन स्थानक, मिन्ट स्ट्रीट, मद्रास
(दिनांक १२-१०-८०, समय १० प्रात)

२३

आन्तरिक रमणीकता
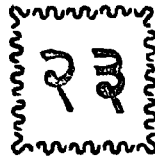
प्रार्थना

भवबीजाकुरजननाः रागाद्या क्षयमुपागता यस्य ।
ब्रह्मा वा विष्णु र्वा, हरो जिनो वा नमस्तस्मै ॥

मुमुक्षु बन्धुओ !

ससार के पामर प्राणियो को भवबधन से मुक्त कराने वाले जिनेश्वर कहलाते है । कई लोग ऐसे होते है जो नाम से परिचय पाकर एक सीमा मे बँधे रहते है । लेकिन यहाँ एक परिभाषा बताई है कि जिन्होने भव-बीजाकुर—जन्म-मरण के वीज को अकुरित करने वाले, बढाने वाले ऐसे जो राग-द्वेष के बीज है उनको जिन्होने क्षय कर दिया वे जिनेश्वर देव है ।

उन जिनेश्वर को शायद कोई शकर के नाम से कह दे, "शंकल्याण करोति इति शकरम्" शकर शब्द का अर्थ है कल्याण करने वाला । 'श' का अर्थ होता है कल्याण और 'कर' का अर्थ होता है करने वाला । कल्याण का निर्माण करने वाला, जीव को कल्याण मार्ग पर पहुँचाने वाला ऐसा जो महापुरुष है उसका नाम है शकर । लोग बाहर से चिपके रहते हैं वहाँ हमारे वीतराग मार्ग के आचार्यो ने उनको सही शिक्षा और दिशा दी कि देखो तुम्हे बाहर के बजाय अपने अन्तर् से चिपके रहना है ।

वीतराग-मार्ग, गुणोपासक

वीतराग मार्ग गुणो का पुजारी है, केवल नाम का पुजारी नही । जो नाम से चिपका रहता है, जाति से चिपका रहता है वह वीतराग मार्ग

का उपासक नही है। लेकिन जो गुणो को जानकर उपासना करता है वह भवबीजाकुर को जानता है ' रागाद्याः क्षयमुपागता यस्य।"

बहुत सीधे बोल है। दुबारा इसलिये कह रहा हूँ कि समझ मे आ जावे। जिस महापुरुष के रागादिक दोष क्षय हो चुके है, वे क्या ऋषभदेव, अजितनाथ आदि चौबीस तीर्थंकरो के नाम से ही कहलाते है तब तो सीमधर, युगमदर आदि विहरमान तीर्थंकर और आगामी चौबीसी के पद्मनाभ आदि के नाम से होगे जो नाम भी नये होगे जो पिछले तीर्थंकरो से मिलते नही है उनको नमस्कार और प्रार्थना नही होगी। आगे जो तीर्थंकर होगे उनके नाम बदलते रहेगे। आकार बदलता रहेगा। गौर वर्ण वाले को तीर्थंकर मानना, नील वर्ण या कचन वर्ण तथा लाल वर्ण या गौर वर्ण चन्द्रप्रभ की तरह वर्ण वाले को तीर्थंकर मानना, गौर वर्ण किसी को अच्छा लगता है किन्तु हमारे तीर्थंकर नील वर्ण वाले भी है।

हमारा जिनशासन बाहरी रग रूप से पहचान नही करता, वह गुणो से पहचान करता है। लेकिन अधिकाश बाहरी दृष्टि वाले लोग रग-रूप से पहचान करने को अधिक महत्व देते हैं। वे कहते है कि मैं तो महाराज की सूरत देखते ही मोहित हो जाऊं, ऐसी सूरत है। अरे भाई! बाहर की सूरत देखे या भीतर की देखे, कई लोग सूरत से मुग्ध मूरत हो जाते है।

सभी तीर्थंकरो का समुच्चय सबोधन—'जिन'

हमारे चौबीस तीर्थंकरो मे से १६ स्वर्ण रग वाले थे। इसी परम्परा मे चन्द्रप्रभजी चन्द्र जैसे श्रेष्ठ उजले वर्ण के थे। वासुपूज्य जी लाल रग के थे। इस तरह अलग-अलग ऐसे रगो पर जो ससारी लोग हमारी माताएँ-बहिने, भाई मुग्ध होते है। उनकी जगह मैं बता गया हूँ कि हमारे तीर्थंकर के लिए बाह्य नाम से, वर्ण से पहचानने की बात नही है। जिन्होंने राग-द्वेष को क्षय कर दिया है, वे चाहे ब्रह्मा हो, विष्णु हो, शिव हो, हर हो, चाहे जिन हो, सभी तीर्थंकर एक ही नाम से पहचाने जाते है। ऐसा कौन सा नाम है जिसमे सभी आ जावे? 'जिन' ऐसा नाम है जिसमे सारे तीर्थंकर समाविष्ट हो जाते है। चाहे वर्तमान चौबीसी के हो, चाहे विहरमान हो, चाहे वर्तमान मे विचरण करने वाले हो, चाहे भरतक्षेत्र के हो।

भरतक्षेत्र मे एक समय मे एक ही तीर्थंकर होते हैं और काल चक्र के एक भाग में कुल मिलाकर २४ तीर्थंकर होते है। असख्यात काल के

आन्तरिक रमणीकता

प्रार्थना

भवबीजांकुरजननाः रागाद्या' क्षयमुपागता यस्य ।
ब्रह्मा वा विष्णु र्वा, हरो जिनो वा नमस्तस्मै ।।

मुमुक्षु बन्धुओ !

ससार के पामर प्राणियो को भवबधन से मुक्त कराने वाले जिनेश्वर कहलाते है । कई लोग ऐसे होते है जो नाम से परिचय पाकर एक सीमा मे बँधे रहते है । लेकिन यहाँ एक परिभाषा बताई है कि जिन्होने भव-बीजाकुर—जन्म-मरण के वीज को अकुरित करने वाले, बढाने वाले ऐसे जो राग-द्वेष के वीज है उनको जिन्होने क्षय कर दिया वे जिनेश्वर देव है ।

उन जिनेश्वर को शायद कोई शकर के नाम से कह दे, "शंकल्याण करोति इति शकरम्" शकर शब्द का अर्थ है कल्याण करने वाला । 'श' का अर्थ होता है कल्याण और 'कर' का अर्थ होता है करने वाला । कल्याण का निर्माण करने वाला, जीव को कल्याण मार्ग पर पहुँचाने वाला ऐसा जो महापुरुष हैं उसका नाम है शकर । लोग वाहर से चिपके रहते हैं वहाँ हमारे वीतराग मार्ग के आचार्यों ने उनको सही शिक्षा और दिशा दी कि देखो तुम्हे वाहर के वजाय अपने अन्तर् से चिपके रहना है ।

वीतराग-मार्ग, गुणोपासक

वीतराग मार्ग गुणो का पुजारी है, केवल नाम का पुजारी नही । जो नाम से चिपका रहता है, जाति से चिपका रहता है वह वीतराग मार्ग

भीतर मे २४ तीर्थंकर होते है। लेकिन विदेहक्षेत्र ऐसा है कि वहाँ एक समय मे एक साथ कम से कम २० तीर्थंकर होते है। महाविदेह पाँच क्षेत्र होते है, प्रत्येक महाविदेह की ३२ विजये होती है। एक-एक महाविदेह मे कम से कम ४ तीर्थंकर होते है तो पाँचो विदेहो के कुल २० तीर्थंकर हो गये। एक महाविदेह मे ३२ विजये होती है उनमे से कम से कम चार विजयो के चार-चार तीर्थंकर होते है। हर विजय मे १ तीर्थंकर हों तो एक महाविदेह के ३२ और सब मे होने पर ३२ को ५ से गुणा करने से १६० तीर्थंकर हो गये। इसके अतिरिक्त यदि उस समय भरतक्षेत्र और ऐरावत क्षेत्र में भी तीर्थंकर विराजमान हो तो ५ भरत और ५ ऐरावत क्षेत्र होने से १० तीर्थंकर होते है। इस प्रकार महाविदेह क्षेत्र के १६० और भरत-ऐरावत क्षेत्र के १०, उत्कृष्ट १७० तीर्थंकर एक समय में हो सकते है।

अरिहंत वन्दन : शुभ से शुद्ध की ओर ले जाने वाली क्रिया

समवायाग सूत्र मे बताया जा रहा है कि संग्रह नय से वस्तुओं में भेद मिटाकर अभेद देखा जाता है। एक सूत्र आया "एगे लोए" "एगे अलोए" "एगे धम्मे" "एगे अधम्मे"। ये चार सूत्र एक साथ पढकर सुना गया। फिर धर्मशासन और धर्मशासन के सचालक जिनको हम तीर्थंकर कहते हैं, जिन कहते हैं, चाहे वे भरतक्षेत्र की अपेक्षा से २४ हो, महाविदेह के २० हो या विदेह के उत्कृष्ट १६० हो अथवा ढाई द्वीप के उत्कृष्ट १७० हो। इन सारे तीर्थंकरो का एक अरिहन्त के नाम से वन्दन हो जाता है। यह सारा वन्दन पहला कदम है, धर्ममार्ग के आचरण का और एक वह क्रिया है जिसको हम कल बता चुके है, शुभ से शुद्ध की तरफ बढती है तो तीर्थंकर को वन्दन करने से शुभ से शुद्ध की ओर बढने का भाव जगता है। जिनेन्द्र देव शुद्ध क्रिया के अधिकारी है किन्तु हम अभी शुभ क्रिया मे लगे हैं। अशुभ और शुभ ये दो क्रियाएँ पीछे लगी हुई है। हमको शुभ से शुद्ध की ओर जाना है तो हमारे आदरणीय उपास्य देव शुद्ध क्रिया के धनी अरिहन्त देव होने चाहिए इसलिए हमने प्रारम्भ मे राग-द्वेष को क्षय करने वाले अरिहन्त देव को वन्दन किया है। यह हमारी क्रिया हमे शुभ से शुद्ध की ओर ले जानी वाली है।

लेकिन सोचना यह है कि क्रियाएँ होती कहां है, क्रिया कौन करेगा ? दिखने में सैकडों समारात है, लेकिन बोलने मे समय का विचार है। इन क्रियाओ को करने वाला कर्ता होता है। कर्ता के बिना क्रिया होती नही है।

कर्त्ता दो प्रकार के : जड़ और चेतन

अब कर्त्ता भी दो होते है । जड क्रिया का कर्त्ता जड होता है, और चेतन क्रिया का कर्ता चेतन होता है । आप मिलावट का रूप ले लीजिए दूध मे एक चम्मच छाछ डाल दीजिए । १५, २० मिनट बाद आप दूध वाले बर्तन की तरफ नजर डालिए । आपको दिखायी देगा कि वहाँ पर कुछ क्रिया हो रही है । दूध के पुद्गलो मे हलचल मच गई और कुछ देर बाद आप देखेंगे कि दूध जमावट के रूप मे आ रहा है । चार-पाँच घंटो बाद देखेंगे कि दूध का दही बन गया । यह क्रिया दूध मे हुई लेकिन इस क्रिया का कर्ता कौन है ? आप के कपडे सफेद है, आपकी भावना उनको रगने की हुई तो या तो उस कपडे को किसी रग मे डालेंगे या रगने वाले के हाथ मे पहुँचायेंगे और वह रग मे डालेगा तब रग आयगा । लेकिन दूध मे छाछ गिरने के बाद क्यो रग बदल गया, स्वाद बदल गया, उसका स्पर्श बदल गया । इसमे जो परिवर्तन आये वह इस बात के सूचक है कि जड पदार्थ भी क्रिया करता है । लेकिन यह मत समझिये कि केवल जड पदार्थ ही क्रिया करता है, चेतन नही करता है ।

हम जो अशुभ क्रिया से शुभ मे और शुभ से शुद्ध क्रिया मे जाने की बात करते है, उसमे करने वाला कौन है ? चेतन है । क्योकि जड को यह ज्ञान नही है कि अशुभ क्या है, शुभ क्या है और शुद्ध क्या है ? इस चीज को समझने का माद्दा जिसमे है वह चेतन है । जड और चेतन का जहाँ सम्बन्ध होता है वहाँ क्रिया करने वाला जड नही होता, चेतन होता है । बिना कर्त्ता के क्रिया नही होती और कर्त्ता को क्रिया करने के लिए आधार भी चाहिए । बिना आधार के आधेय का सम्बन्ध नही रहता । आधार का मतलब है– बर्तन और आधेय उसमे रहने वाली चीज है तो उसको रखने वाला भी कोई भाजन चाहिए । क्योकि बिना भाजन के वस्तु नही रहेगी ।

संग्रहनय की अपेक्षा : लोक एक

करोडो प्रकार के जड और चेतन कहाँ रहते है ? लोक मे; अलोक मे नही । जहाँ कुछ भी पदार्थ देखने को, जानने को नही मिले, उसका नाम अलोक है । जहाँ जड और चेतन दोनो तरह की चीजे देखने को मिले, समझने को मिले, जानने को मिले ऐसी जगह का नाम लोक और शून्य जगह का नाम है अलोक । लोक मे अनन्त पदार्थ है । उसको संक्षेप

मे पाँच अस्तिकाय कहते है। "पचास्तिकायात्मको लोक"— जहाँ पाँच अस्तिकाय हो उसको लोक कहते हैं। पाच अस्तिकाय के नाम है -धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय और पुद्गलास्तिकाय तथा सबको जानने वाला, समझने वाला, वर्णन करने वाला है जीवास्तिकाय। इनमे चार जड है अथवा अजीव है और एक चेतन है। पाच अस्तिकाय जिस जगह मे मिलते है अथवा रहते है उसका नाम लोक है।

लोक एक है। यह बात शास्त्र कहता है सग्रह नय से। भेद से सभा मे लोग हजारो दिखते है, लेकिन हजारो नही है एक है। शास्त्र कहता है कि—तुम एक हो। एक नय की दृष्टि से समझ लीजिए तो तेरा-मेरापन खत्म हो जायगा। जब अनेक भेद होते है तब तेरा-मेरापना चलता है।

पारस्परिक अभेद का चिन्तन करिए

यदि आप जिनशासन की वस्तुस्थिति को समझने के लिए कभी बैठे और जब कभी राग-द्वेष-रोष सताने लगे तो सग्रह नय से विचार किया जाय, कि हम क्या है? क्या हम अलग-अलग है, अनेक है, क्या हमारा जीव अलग है और उसका स्वभाव अलग है? क्या हमारा जीव रग-रूप मे अलग है? तुम्हारा रग रूप नाम जाति अलग हो सकते है लेकिन तुम्हारे भीतर मे रहने वाली जो आत्मा है, उसका क्या रूप अलग है, नाम-धाम अलग है, गुण-धर्म अलग है? यदि अलग नही है तो फिर झगडा किस बात का है? लेकिन मानव अज्ञान मे चलता है। नाम के लिए धर्म सुनने के लिए धर्मस्थान मे या उपासरा मे जाता है, सब कुछ सुनता है लेकिन वही रहता है जहाँ पहले था। कहावत है कि—"वही रफ्तार बेढगी, जो पहले थी सो अब भी है।"

अभी-अभी मैं कह गया कि दूध मे एक चम्मच छाछ डालिए तो वह बदल जाता है, लेकिन मानव ने भलाई को बदलना सीखा है, बुराई को बदलना नही सीखा। घर मे माँ-बाप क्या करते है, क्या खाते है क्या पहनते है? पुराने जमाने मे वेश-भूषा कैसी सुसस्कृत थी? आप अपने पिता पितामह का आचार-व्यवहार देखेंगे तो वे अपने आप मे आदर्श रूप थे। आज आप कितने कदम आगे बढे या पीछे हटे, कितना परिवर्तन आया? सत्सग सभा मे आकर भी जैसा परिवर्तन आना चाहिए वैसा आया या नही। तब आश्चर्य के साथ खयाल आता है कि यहाँ परिवर्तन क्यो नही आ रहा है? क्या सामने वाले के उदय कर्म ज्यादा जोरदार है या सामने

चीजे यहाँ नही है, भोजन के पदार्थ आदि उनकी अपेक्षा हमारे यहाँ साधारण है। हमारे यहाँ एक रमणीकता है जो अकर्मण्यता को निर्मूल बनाती है। हमारे यहाँ विचारो की और आचार की सुन्दरता है। ये दो सुन्दरताये ऐसी है जिनके कारण स्वर्ग के देव यहाँ आकर असुन्दर रूप वाले मनुष्यो के चरणो मे गिरते है। हमारे पसीने की गध कुछ और तरह की है। जरा डकार आ गई कादा, लहसुन के बघार वाली चीज खाकर तो डकार की गध और तरह की होगी और इलायची खाकर आया है तो डकार और तरह की होगी और जो चटनी चूर्ण के मसालो मे यदि इलायची और कस्तूरी पडी है तो श्वास और डकार की गध कुछ और तरह की होगी। अशुभ गध से अडोस पडोस मे कोई बैठने नही देगा। ऐसे शरीर वाले मनुष्य के चरणो मे देव आकर झुकते हैं। यह कौन-सी खूबी है, कौन सा चमत्कार है, कौन-सी ताकत है, कौन-सी रमणीकता है ?

अपने आचार-विचार पर भरोसा रखिए

भाइयो ! यह मत समझना कि आपकी हवेली, कोठी, कार या सोना देखकर देव आते है। कोठी वाले तो बुलावे तो भी नही जायेगे। आपकी कोठियो मे तो आप अलग से माताजी, भेरूँजी और बालाजी की फोटो लटकती पायेगे। अच्छे धोरी श्रावक कहलाते है उनके यहाँ भी बालाजी आदि मिलेगे, गणपति जी अलग मिलेगे। यह है हमारी श्रद्धा का रूप। मैं आपकी सुन्दरता को चौडे मे नही लाना चाहता। आप जिनेन्द्र के उपासक है या इन देवी देवताओ के उपासक है यह तो भगवान समझ सकते है या आपका मन समझ सकता है। इसका मतलब यह है कि आपको अपनी सुन्दरता पर, आपके सुन्दर आचार-विचार पर भरोसा नही है, इसलिये आप इधर-उधर घूमते है, जाते है। भगवान की कृपा से, गुरुजनो की कृपा से हमे ऐसी निधि मिली है। यदि इस निधि का सरक्षण करें, इसकी आराधना करे तो हमारे चरणो मे देव आ सकते है।

अभी आपने उपासकदशाग मे सुना है कि कौन-सा श्रावक ऐसा है जिसके यहाँ देव नही आया हो। कामदेव से लगाकर सारे श्रावको के यहाँ देव आये है। आप कभी देव को बुलाना चाहेगे तो भी नही आयेंगे।

इधर-उधर भटकना अलाभकारी

अभी नवरात्रि के दिन चल रहे हैं। कई भाई-बहन ऐसे होगे जो नवरात्रि के एकासने करते होगे। माताजी की स्थापना करेगे और

अष्टमी के दिन उनकी पूजा करके पीछे खायेंगे। ऐसे घर आपके यहाँ भी कई मिलेंगे।

इस देवी पक्ष मे आपके वधन काटने के लिये, कर्मो को हल्का करने के लिये नवरात्रि की नवदुर्गा तुम्हारे पास मे है। नवपद की आराधना करो। फिर कहा कि अष्ट प्रवचन माता अलग है। इनका परिचय मैं अभी नही दूंगा। पाँच समिति और तीन गुप्ति आठ माताये भी आपके पास मे हैं। उनकी भक्ति, आराधना, पूजा करने का समय आपके पास नही है जवकि इनका स्थान आपके भीतर है। फिर भी आप टावर, टूवरो का झडोला करने के लिए मारवाड मे ओसियो की माताजी के यहाँ जायेंगे। कई भाई ऐमे भी मिलेंगे जो रामदेव जी के रूणीचा जायेगे। भोपालगढ के एक प्रमुख श्रावक ने ओसियाँ मे वलि चढते देख जाना वद कर दिया। जाना वद करने के वाद भी इतने वर्षो से उनका परिवार मन मजवूत होने के कारण उस निर्णय को निभा रहा है। उनका कोई विगाड नहीं हुआ। नही तो लोग कई एक ऐसा मानते है कि माताजी या देवता के यहाँ नही जायेंगे तो देवता दोष कर देंगे।

आत्म जागृति करिए

आठ माता जिसमें पाँच समिति और तीन गुप्ति है और नवरात्रि के गुणो मे पाँच इन्द्रियो को और चार कषायो को वश मे करने के लिए नवरत्ता है इन पर विजय करनी है। यह विजय किसकी होगी ? आचार्य भूधर जी की। उनका जन्म दिन विजयादशमी को है, वह दिन भी नजदीक आ रहा है। हम उनके उपकारो से उपकृत है। ये दोनो चीजें ध्यान मे रखने की है। आज चतुर्थी है, कल पञ्चमी और परसो छठ से नवपद आराधना का कार्यक्रम चालू होने वाला है और दशमी को परम उपकारी, परम श्रद्धेय भूधरजी का जन्म दिवस है। भक्त जनो को श्रद्धा-पूर्वक कृत उपकारो के प्रति वहुमान की भावना है तो अपने गुरु के प्रति श्रद्धा भक्ति के रूप मे त्याग, तप की साधना का वल लेकर आत्म जागृति करनी है। यदि ऐसी जागृति करोगे तो अरमणीक से रमणीक वन जाओगे। सच्चे रमणीक वन गये तो आप के चरणो मे देव आयेंगे। ऐसा नियम नही है कि साधु के ही चरणो मे देव आते है, श्रावक के चरणो मे भी देव आते है।

दिल्ली के एक प्रसिद्ध श्रावक दलपतराय थे। उनको एक रात्रि मे

किसी देव ने आकर कहा कि फला आचार्य का स्वर्गवास होने वाला है। उनको मालूम हो गया कि यह सूर्य अस्त होने वाला है।

कई हमारे छोटे-मोटे श्रावक अपने ग्रह-गोचर दिखाने के लिए इधर-उधर ज्योतिषियो के चक्कर मे घूमते रहते है। उनका दिमाग आकुल-व्याकुल रहता है, परेशान रहते है, बापजी ! हमारा क्या होने वाला है ? हमारे शरीर की चिन्ता है, लेन-देन की चिन्ता है, यह वर्ष कैसा बीतेगा, ज्योतिष जाणो तो बतादो। भाई धर्म की आराधना करो। जीवन रमणीक हो तो अन्त करण मे दैवी प्रकाश आ सकता है। आपने मनुष्य लोक मे जन्म पाया है। मोह ममता को छोडकर शुद्ध की साधना करेंगे तो लोक के अग्रभाग मे आरूढ हो सकते है। यह शक्ति आपके भीतर है। यदि आप साधनो का उपयोग करके चलेंगे तो कल्याण होगा।

जैन स्थानक, मिन्ट स्ट्रीट, मद्रास
(दि० १३-१०-८०, समय ९.५० प्रात)

२४

एक में अनेक, अनेक में एक

प्रार्थना

वीरः सर्व-सुरासुरेन्द्रमहितो, वीरं बुधा संश्रिता ।
वीरेणाभिहतः स्वकर्मनिचयो, वीराय नित्यं नमः ॥
वीरात्तीर्थमिदं प्रवृत्तमतुलं-वीरस्य घोरं तपो ।
वीरे श्री-धृति-कान्ति-कीर्ति-निचयो, हे वीर भद्रं दिश ॥

धर्मप्रेमी बन्धुओ

अभी वीर प्रभु का वदन किया गया है। सम्पूर्ण दुःखो से मुक्त और आत्मिक सम्पूर्ण सुखो के निधान ऐसे अरिहन्त देव जो वर्तमान मे शुद्ध बुद्ध और मुक्त हो चुके हैं उनका जब कभी भी हमारे अन्त करण में चिन्तन, मनन और ध्यान का अवसर आता है तब मानव अपने आत्मिक गुणो की ओर अभिमुख होता है और आत्म-गुणो की ओर मन का अभिमुख होना, यह भी परम लाभ का कारण है।

वीतराग भक्ति से लाभ

कोई यह न सोचे कि इस तरह जिन्होंने घाती कर्म क्षय कर अरिहन्त पद मिला लिया अथवा सम्पूर्ण सिद्ध पद मिला लिया, उनके वर्णन से हमे क्या लाभ है। यह तो केवल वाणी को शुभ योग में लगाने का ही काम है। ऐसा सोचना गलत होगा।

एक आचार्य ने बताया है—

"वीतरागं स्मरन् योगी, वीतरागत्वमाप्नुयात्'

साधक जैसा ध्यान करता है, जैसा चिन्तन करता है, जैसा मनन

करता है स्वय भी वैसा हो जाता है । यदि वीतराग का स्मरण करता है तो स्वय भी वीतरागता प्राप्त करता है ।

हमारे यहाँ विधान है कि हम भी वीतराग-भाव की ओर मन को अभिमुख करे, यह लक्ष्य लेकर चलना हर साधक का कर्तव्य होता है। विशुद्ध पद का ध्यान करके अपने आपको अशुद्ध दशा से अलग करने की कोशिश करे। अशुद्ध दशा से अलग करने की कोशिश करना, हम जो क्रिया के बारे मे विचार कर चुके हैं, उसको शुद्ध क्रिया का स्वरूप कहा जाता है।

क्रिया का आधार : लोक

अब ये जो क्रियाएँ की जाने वाली है, कर्ता, क्रिया और आचरण— ये सारे बिना आधार के नही होते, बिना साधन के नही होते। इसलिए समवायाग सूत्र मे अरिहन्त देव ने आधार के रूप का विचार किया। जीव के ठहराव का आधार क्या ? कर्ता के द्वारा क्रिया करने का आधार क्या ? वह कहाँ रहकर क्रिया करेगा ? तो कहा "एगे लोए"। पहले कहा कि क्रिया का आधार और द्रव्य का आधार जो है उसका नाम है 'लोक'। इसका परिचय सक्षेप मे आपको दिया जा चुका है। जो परिचय दिया जा चुका है उसकी पुनरावृत्ति करने की आवश्यकता नही।

जीवास्तिकाय के चार गुण

वह लोक है जिसमे पाँच अस्तिकाय है। इन पाँचो मे प्रधानता जीव की है और जीव के अलावा जो पॉच द्रव्य हैं, वे सब ज्ञातव्य हैं अर्थात् जानने लायक है, योग्य है अर्थात् भोगने लायक हैं। जीव ज्ञाता, द्रष्टा और भोक्ता है। एक शब्द और जोड दे तो कर्त्ता है। ये चार बातें जिसमे हैं वह जीव द्रव्य, सब द्रव्यो मे मुख्य जो है वह है जीवास्तिकाय। जीवास्तिकाय मे ज्ञातव्य गुण भी है और ज्ञाता अर्थात् जानने वाला भी हैं द्रष्टा है अर्थात् देखने वाला है, कर्त्ता भी है और भोक्ता भी है।

जीव ज्ञाता भी, ज्ञातव्य भी

अब कर्त्तापन को लेकर चलें तो कर्तृत्व कई प्रकार का है। मनन का भी है, चिन्तन का भी है, ज्ञान का भी है। इसके विस्तार मे न जाकर चार मुख्य समझिये। इन पाँच अस्तिकाय मे एक ही द्रव्य है जो ज्ञातव्य भी है और ज्ञाता भी है।

दुनिया के लोग बाहर के द्रव्यो को जानने की कोशिश करते है लेकिन जो स्वय के भीतर है उसको जानने का प्रयत्न नही करते। तो ज्ञाता होकर भी जो अपने आपका ज्ञान नही कर सकेगा वह ज्ञाता क्या ? जब स्वय का बोध नही कर पायगा तब ऐसी स्थिति मे वह कल्याण का अधिकारी कैसे होगा ?

क्रिया के साधन

इसलिए वीतराग भगवन्तो ने हमको समझाया है कि मानव ! खयाल कर कि तुझे स्थान मिला है, लोक का आधार है, क्रिया करने की उचित स्थिति लोक मे भी मध्य लोक मे और उसमे भी मनुष्य लोक और उसमे भी कर्मभूमि का क्षेत्र और मानव जन्म ये धर्मक्रिया करने के अधिकरण है, आधार है। इन साधनो को पाकर भी जो साधना करने से वचित रह जायगा वह प्राणी अपने आपकी साधना का लाभ खो देगा और उसे खो दिया तो शून्यता ही प्राप्त होगी और शून्यता का नाम है "एगे अलोए"।

अलोकाकाश भी आकाश के गुण सहित

लोक का विपरीत क्या है ? अलोक। अलोक जहाँ द्रव्य देखने मे न आवे, सोचने मे नही आवे, जहाँ अन्य द्रव्य का अस्तित्व नही, ऐसे स्थान का नाम अलोक है। आकाश द्रव्य के भी देश और प्रदेश है। अलोक आकाशास्तिकाय का एक खण्ड है, भाग है अथवा प्रदेश है इसलिए आकाशस्तिकाय के दो भाग होगे।

अजीव के यदि १४ भेद की अपेक्षा से कल्पना करे, विचार करे तो १४ भेद मे से एक अलोक है जो ऐसा शून्य नहीं है जैसा परम्परावादी मानते हैं। और कुछ भी नही है तो उसके देश है, प्रदेश है आकाश के गुण हैं और पर्याय भी है। आकाश का अवगाहन करना वहाँ भी है। यदि कोई जीव, यदि कोई पुद्‌गल वहाँ जा सके तो उसको वहाँ जगह मिल सकती है। लेकिन क्या कारण है कि कोई जीव या पुद्‌गल अलोक मे नही जा सकता ? इसलिए नही जा सकता कि अलोक मे धर्मास्तिकाय नही है। जीव या पुद्‌गल, जो गति करने वाला है उस जीव की गति लोक के अग्र भाग तक ही रुक जाती है।

सिद्ध जीवो की स्थिति

जब सिद्धो के लिए पूछा गया कि मुक्त आत्मा कहाँ ठहरता है तो कहा—

अलोए पडिहया सिद्धा, लोअग्गे य पइट्ठिया ।
इह वोन्दिय चइत्ताण, तत्थ गंतूण सिज्झई ॥

सिद्ध कहाँ है और शरीर को छोड़कर कहाँ जाकर रुके है, किसके कारण अटके है, उनको रोकने वाला कौन है ? इस प्रश्न का इस गाथा मे जवाव दिया है ।

"अलोके प्रतिहता सिद्धा" अपने हाथ को ऊपर उठायेंगे तो वह हाथ कहाँ तक पहुंचायेगा ? अगर उस हाथ मे बास लेकर ऊपर उठायेंगे तो वह छत तक पहुँचकर रुक जायगा । हाथ के आगे बढने की गुजायश है, आगे वढ सकता है लेकिन छत आडी आ गई इसलिए हाथ आगे वढ नही सकेगा । जैसे आपका हाथ और बास छत से अटक गये उसी तरह से सिद्धो के जीव अलोक से अटके है । लोक के जीव-पुद्गल आगे वढने से रुक जाते है, अलोक ,छत का काम करता है ।

लोक के लिए मान्यता है कि वह ४५ लाख योजन का है और सिद्धशिला भी ४५ लाख योजन की है दोनो मे समानता है । जैसे ही जीव सकल कर्मो का क्षय करता है वैसे ही मनुष्य लोक की इस काया को यही पर छोडकर ऊपर की ओर जाता है ।

कभी आपने मूँग मोठ की फली देखी होगी । फली जव सूख जाती है तव उसके वाद उसके ऊपर की परपटी या पपडी फट जाती है और वीज ऊपर उछलता है और ऊपर उछलकर फिर नीचे गिरता है, क्योकि वह सशरीर है इसलिए नीचे गिरता है । सिद्ध अशरीरी है इसलिए उनके नीचे गिरने की वात नही है । जिस तरह से जलती हुई लकडी का धूआँ ऊपर जाता है उसी तरह से इस शरीर से निकला हुआ मुक्त जीव ऊपर जाता है । उपर जाकर कहाँ रुक जाता है, और कहाँ ठहरता है—'लोअग्गे य पइट्ठिया—परम आत्मा, सिद्धो की आत्मा लोक के अग्र भाग पर जाकर प्रतिष्ठित हो जाती है ।

गति-सहायक, धर्म द्रव्य

वहाँ पर क्यो रुक गई ? इसलिए कि इसके आगे अलोक मे धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय नही है । गति देने का सहयोग धर्मास्तिकाय करता है । मछली को पानी मे से निकाल कर मैदान मे छोड़ दिया जाय और आप को भूमि से हटाकर पानी मे छोड दिया जाय तो आप की और मछली की दोनो की गति रुक जायगी । क्यो का क्या हो गया ? आपके लिए गतिकरने मे सहकारी कारण भूमि है और मछली के लिए गति करने का

सहकारी जल है। इसी तरह से जीव और पुद्गल के लिए सहकारी कारण धर्मास्तिकाय है।

अलोक मे धर्मास्तिकाय नही है और अधर्मास्तिकाय भी नही है, आकाशस्तिकाय है, लेकिन अन्य द्रव्य नही है। आकाशस्तिकाय के देश और प्रदेश है। काल भी नही है। सूर्य और चन्द्र की गति का सम्बन्ध नही है। जीवन पर असर करे ऐसा द्रव्य भी नही है जिनके पर्याय वदले। वहाँ पर पुद्गलास्तिकाय का अस्तित्व नही है, फिर भी आकाश पूरा शून्य नही है। आकाश मे देश है, प्रदेश है। उसमे अवगाहन का गुण भी है। गुण भी है पर्याय भी है मात्र अवकाश द्रव्य का। तो आकाश के देश-प्रदेश, गुण और पर्याय इनको छोडकर और कुछ भी नही है। इसलिए इसका नाम अलोक रखा गया है। वहाँ पर कर्ता और क्रिया नही है, वह उनसे रहित है।

अव लोक और अलोक के भाग को जानना किससे और किसने कहा है जिससे कि हम सही रूप को मान सके। आप और हम लोक की वात कर गये, अलोक की वात कर गये। लेकिन आप को साक्षात ज्ञान नही है। हमने कहा आपने सुन लिया और मान लिया कि अलोक मे देश है प्रदेश है, पर्याय-गुण है। आपने हमारे कहने से मान लिया और हमने शास्त्रो से मान लिया लेकिन साक्षात्कार हम मे से किसी ने नही किया है। साक्षात्कार करने वाले अरिहन्त देव है। उन्होने कैसे खुलासा किया ? उन्होने अपने आत्मधर्म से पाया और उन्होने आत्मा से साक्षात्कार किया। उनका अज्ञान दूर हो गया, मोह दूर हो गया तो सम्पूर्ण लोक और अलोक के पदार्थ सामने आ गये।

ज्ञेय बातें तीन

तीन चीजे जानने लायक है—द्रव्य, गुण और पर्याय। इन तीन चीजो के अलावा ससार मे और कुछ भी नही है। ये तीन चीजे सम्पूर्ण रूप से ज्ञात होने के वाद अज्ञान दूर हुआ। लेकिन अज्ञान दूर होने से पहले जव मोह दूर होगा तव अज्ञान दूर होगा। मोह और अज्ञान कैसे दूर हो, आत्मा का पर्दा कैसे हटे ? इसलिए आगे कहा कि 'एगे धम्मा'। लोक अलोक को साक्षात जानने वाला, अपने स्वरूप को मिलाने वाला, दिलाने वाला प्राप्त करने वाला 'एगे धम्मा'—धर्म एक है।

मैं पहले ही कह चुका हूँ कि पहला समवाय सग्रहनय से भाव को लेकर चल रहा है। अनन्त-अनन्त पदार्थो को समझ [illegible] है कि इनमे भेद नही है। अभेद दृष्टि से भी देखना-समझना [illegible] जावे तो

कल्याण है। धर्मस्थान मे आये हो, जिनवाणी सुनी है, अब तुम को देव भी उत्तम मिले हैं।

एक मे अनेक, अनेक मे एक

एक माँहि अनेक राजे, अनेक माँहि एकक।
एक अनेक की नहीं संख्या, नमो सिद्ध निरंजन ॥

जब तक अज्ञान होता है तब तक जीव अटकता है, भटकता है, विवाद मे पड जाता है। कुछ लोग कहते है कि भगवान् एक है, अनेक हो नही सकते। लेकिन जैन लोग कहते है कि नही-नही, यह क्या कह रहे हो, अनन्त सिद्ध है। दोनो आपस मे टकराये। एक कहता है—नही-नही गलत है, झूठा है, भगवान् अनेक हो ही नही सकते। दूसरा कहता है कि ऐसी कौनसी बात है कि आपका ही कहना ठीक है। हरेक बीज का उगना स्वभाव है अपनी-अपनी तरह से होता है। हरेक बीज के अलग-अलग वृक्ष उगते है इसलिए सब वृक्षो को एक मानना गलत है इसलिए भगवान् भी अनेक हैं। दोनो मे टकराहट हो गई। लेकिन नीतिकार कहते हैं कि महानुभावो ! जरा सोचो, ज्ञान की आँखे खोलो। वीतराग वाणी सत्य समझाती है "एक मांही अनेक विराजे"।

आप लोगो ने ९ तत्त्वो मे मोक्ष पद सीखा है, याद होगा या खाली पोथी ही पढते है। बडी छोटी-सी बात है। सबमे छोटा मोक्ष तत्त्व का वर्णन है। लेकिन हमारे बन्धु जिज्ञासा-भाव से याद रखे तो आनन्द आवे।

हमारे यहाँ एक कहावत है 'नाणा गाँठे विद्या कठे" ज्ञान जो कठ मे होगा वह काम आयगा और पैसा गाँठ मे होगा वह काम आयगा। बैंक मे दो लाख रुपया जमा हैं और बाजार मे खरीद करने के लिए अथवा सौदा करने के लिए गये उस समय पास मे पैसा नही है और उस व्यापारी से कहोगे कि मेरे बैंक के खाते मे २ लाख रुपये जमा है उसमे से दे दूँगा तुम माल अभी दे दो तो क्या वह आपको माल दे देगा ? नही देगा। पैसा गाँठ मे नही होगा तो आपका बैंक मे पडा हुआ पैसा सौदा या व्यापार करने के काम मे नही आयगा। उसी तरह से ज्ञान को कठस्थ नही करके पोथी मे, डायरी मे बन्द रखोगे, घर मे आलमारी मे ३२ शास्त्र सजे-सजाये पडे है तो वे कोई काम नही आयेगे ?

यहाँ ईश्वर का अस्तित्व बताने वालो मे मे एक ने कहा कि ईश्वर एक ही है और एक ने कहा—नही, अनन्त है। लेकिन मै इतनी ही बात बता रहा है कि एक और अनेक की बात का इतने प्रशस्त ढग से शास्त्र-

२५

दुःख-मुक्ति के छह आयतन

प्रार्थना

वीर सर्व-सुरासुरेन्द्रमहितो, वीर बुधा संश्रिता ।
वीरेणाभिहत स्वकर्मनिचयो, वीराय नित्यं नम. ।।
वीरात्तीर्थमिदं प्रवृत्तमतुल-वीरस्य घोर तपो ।
वीरे श्री-धृति-कान्ति-कीर्ति-निचयो, हे वीर भद्र दिश ।।

शासनप्रेमी वन्धुओ !

शासनपति श्रमण भगवान् महावीर को वदन किया गया है। प्रभु ने महती कृपा करके अनन्त अनन्त-जीवो के दु खमय जीवन और उसके कारणो को जाना। उनके अन्तर्मन मे एक विचारणा, एक भावना और अनन्त करुणा जागृत हुई।

दु ख यदि किसी निर्वल का हो तो होठो को दवाकर वह रह जाता है। लेकिन सवल के मन मे दया हो तो वह दूसरो के दु ख को देखकर होठ दवाकर नही रहता उसका प्रतिकार करता है। नीतिकारो ने कहा है कि "दयालोरसमर्थस्य, दु खायैव दयालुता।" दूसरो,के दु.ख से द्रवित होने वाला वह यदि अपने मे सामर्थ्य नही रखता है तो मित्रो का वल लेकर जवतक दु खी को मुक्त नही कर लेता तव तक वह स्वय आर्त रहता है, स्वय मन मे उदास रहता है और सोचता है कि किस तरह से दु ख दूर किया जाय। लेकिन सवल का दु-ख इस प्रकार मौन व्यक्त करके नही रहता। वह उसका उपाय सोचता है।

अनन्त करुणाधारी महावीर देव के मन मे, पामर प्राणियो के दु ख को देखकर करुणा पैदा हुई। उसका प्रतिकार करने के लिये उन्होंने ससार के जीवो को दु ख-मुक्ति का रास्ता वताया। उन्होने दूसरो के दुःख को

अनुभव किया और अपने पर प्रयोग किया, किसी दूसरे पर नही, और प्रयोग के बाद ससार के जीवो को आश्वस्त करते हुए कहा कि हे प्राणियो ! भय मत करो। दु ख-मुक्ति का रास्ता भी है। यदि दु.खी हो तो दु.ख मुक्ति का रास्ता भी है। तुम भी दु.ख-मुक्ति के रास्ते पर चलकर दु.ख से मुक्त हो सकते हो लेकिन मुक्त होने का सामर्थ्य भी चाहिये।

छह आयतन

उन्होने ६ आयतन बताये। सबसे पहला आयतन है श्रद्धान करो कि ससार मे जीव सत्य है। चेतना जीव का लक्षण है, जहाँ चेतना है उसे समझो, वह सत्य है। जीव चेतनावान है, उसमे उपयोग है, साकार उपयोग और अनाकार उपयोग, ज्ञान उपयोग, एव दर्शन उपयोग जिसमे हो, वह जीव है। तीसरा आयतन यह है कि वह शुभ-अशुभ का कर्ता है। एक छोटी-सी परिभाषा करते हुए कहा है—

य· कर्ता कर्म-भेदाना, भोक्ता कर्मफलस्य च।
ससर्ता परिनिर्वाता, सहि आत्मा नान्यलक्षण·॥

आत्मा किसको समझे—एक छोटे से श्लोक मे इसकी परिभाषा की है "य. कर्ता कर्म-भेदानाम् आदि— यह शुभाशुभ कर्म खुद करता है अर्थात् शुभाशुभ कर्म का कर्ता भी जीव है और भोक्ता भी जीव है। जिन्दगी मे सघर्ष करता हुआ एक जगह से दूसरी जगह घूमता है। एक जन्म से दूसरे जन्म मे आता है। इस तरह से जन्म-मरण के चक्कर मे दौडते हुए इस जीव को कर्मो का फल मिलता है। कर्मो के कारण यह ससार मे भ्रमण करता है और कर्मो के बन्ध को काटकर निर्वाण भी प्राप्त करता है। तो तीसरा आयतन हुआ जीव शुभाशुभ कर्मो का कर्ता है।

चौथा आयतन हुआ जीव पाप और पुण्य फल का भोक्ता भी है। पाँचवाँ आयतन है कि इस कर्मबध को काटने का रास्ता भी है। और छठा आयतन हुआ कि वह सम्यग् ज्ञानादि मार्ग-चतुष्टय कर्म काटने का रास्ता है। जैसा कि कहा है—

"नाण च दसण चेव, चरित्त च तवो तहा।

मुक्ति का कारण : सुविचार-सुआचार

सक्षेप मे कहूँ तो महावीर देव ने कहा कि मानव-जीवन को पार लगाने के दो मार्ग है—एक विचार और दूसरा आचार। यदि भवसागर से पार होना है तो इन दोनो को पवित्र बनाने की क्रिया करो। यदि तुमने

विचार को पवित्र बनाया तो मान लो, निश्चय कर लो कि बन्धन कटते देर नही लगेगी क्योकि बधन है भी विचार और आचारमूलक।

विचार भी दो प्रकार के है। एक सुविचार और दूसरा कुविचार। कुविचार और कदाचार बध का कारण है तथा सुविचार और सदाचार मोक्ष का कारण है, कर्म बध को काटने वाले है। सुविचार और सदाचार ही दु.ख छुडानेवाला है अथवा दु ख मे सुखानुभूति कराने वाला है।

अभी-अभी आपने मुनिश्री से एक छोटा-सा उदाहरण सुना। भूखा रहकर भी श्रावक सुखानुभूति मे रहा। आपको यदि भूखा रहना पडे तो सुखानुभूति मे रहेगे या दु खानुभूति मे रहेगे ?

अभी सवाई माधोपुर के भाई सुखानुभूति की बात प्रकट कर गये। उनके मन मे कुछ उमग आई और उसे उन्होने आपके सामने रखा। यदि उनको प्रतिकूल वस्तु से टकराने का मौका आता तो वे उसको उस प्रकार से रखते।

लेकिन जिनदास एक मेहमान के रूप मे अपनी ससुराल मे पहुंचता है। उस स्थान पर पहुँचकर भी, जहां पर उनको आतिथ्य पाने का अधिकार है, उस जगह वह आतिथ्य पाने के बजाय उपेक्षावृत्ति से देखा गया, तब भी अपने मन को उसने बिगाड़ा नही। यह क्या किया ? यह विचार-धर्म का उसने पालन किया। इधर-उधर, अगल-बगल. गली मे, मोहल्ले मे मिलने वालो मे उसने सेठ की और सेठ के व्यवहार की चर्चा नही की।

आप भी अपने साथियो के यहाँ या सबधियो के यहाँ जाते हो वहाँ यदि मेहमानगीरी मे आपके साथ भद्दा व्यवहार हो. अधूरे पेट उठना पड़ा हो या भोजन के लिए किसी ने कहा नही हो तो क्या आप चुप रह सकेगे जिनदास की तरह ? जिनदास ने क्या किया ? वह चुप रहा। वह धर्मी जीव था।

धर्म आचरण की वस्तु

धर्म केवल सुनने की चीज नही है। धर्म प्रदर्शन करने का या दिखावे का सामान नही है। धर्म हलवाई के दुकान की मिठाई नही है। दीवाली के दिन नजदीक आ रहे है। मद्रास मे भी कुछ रगीन मिठाइयो की दुकानें मिल सकती है। उधर जयपुर, दिल्ली में चातुर्मास करने का मौका मिला तो वहाँ देखा कि ५ रगो की अलग-अलग मिठाइयाँ बनाई

की भूमि ऋजुता के मल रहित जल से सिंचित होगी और वगिया हरी भरी होगी ।

निर्मल हृदय मे धर्म की अवस्थिति

शास्त्रो मे एक कहावत है,—"सारय सलिल व सुद्ध हियए" । तीर्थंकरो का, साधको का मन कैसा होता है—शरद काल के जल के समान निर्मल। आज से शरदकाल का शुभारभ माना गया है । वर्षा काल मे जो पानी की बूदे गिरती है उनका पानी निर्मल नही होता—समल होता है और शरद काल मे गिरने वाला पानी निर्मल होता है । रात्रि मे आकाश साफ होता है । यद्यपि यह दरिया का किनारा है । समुद्र की लहरे, उत्ताल तरगे उठती हैं, गिरती है । उत्ताल तरगो के कारण गगनमडल मे वादल तैयार होते रहते हैं । सुवह आकाश मे आपको कुछ दिखेगा, मध्यान्ह मे कुछ दिखेगा, रात्रि मे कुछ दिखेगा । कल सुवह और सायकाल की प्राकृतिक स्थिति को देखकर ऐसा ज्ञात हो रहा था कि आज चद्र अपनी पूर्ण कला मे खिल नही सकेगा । आश्विन शुक्ला पूर्णिमा को सीमन्धर स्वामी की प्रार्थना किया करते हैं । प्रतिक्रमण के अन्त तक चन्द्र मेघो से आच्छादित था । घडी डेढ घडी का समय वीता तो ऐसा मालूम हुआ कि इसमे शरदकाल का योग आ गया है । जो चन्द्र मेघो से आच्छादित था वह आवरणरहित होकर खिलने लगा और चार साढे चार वजे तक देखते रहे । गगन मे चन्द्र आवरण से मुक्त होकर अपनी मुक्त प्रभा फैला रहा है । शरदकाल आवरण रहित फैलने का कुदरती समय है ।

जव मेघाच्छादित चद्र आवरण रहित होकर प्रकाश फैला सकता है तो भगवान महावीर का उन्मुक्त साधना मार्ग हमे मिला है, उस साधना के गगन मे अपने मन-मस्तिष्क को उन्मुक्त करके निर्मलता के साथ हम भी निर्मलता का उपयोग करके अपनी आत्मा को निर्मल करने का प्रयास करेगे । इसके दो ही साधन है । हजारो वर्ष पहले भी दो ही साधन थे और आगे भी दो ही रहेगे और आज भी दो ही है । इनमे परिवर्तन नही होने वाला है । वाहरी तौर तरीके मे और कहने मे फर्क हो सकता है ।

लेकिन कल्याण का तरीका क्या है ? इस वारे मे छोटी-सी उक्ति कहकर अपनी वात समाप्त करूँ ।

तीन-चार दिन वाद फिर आपके सामने आ गया । मन मे सोच रहा था कि कोई सोचते होगे कि महाराज अस्वस्थ हैं, वीमार । हैय

२६

जैन संवत् का प्रथम दिन : एक संकल्प- उत्तराध्ययन का नित्य स्वाध्याय

प्रार्थना

वीर सर्व सुरासुरेन्द्रमहितो, वीर बुधा सश्रिता ।
वीरेणाभिहता स्वकर्म-निचयो, वीराय नित्य नम ॥
वीरात्तीर्थमिद प्रवृत्तमतुल, वीरस्य घोर तपो ।
वीरे श्री-धृति-कान्ति-कीर्ति निचयो, हे वीर भद्र दिश ॥

धर्मप्रेमी वन्धुओ !

उत्तराध्ययन सूत्र का मूल पाठ आपको सुनाया गया । वैसे तो सर्व साधारण के लिए शास्त्र एक नीरस विषय है । लेकिन जो भगवान की वाणी मे श्रद्धा रखने वाले भक्त है उनको इसमे रस आता है । साधारण जन सोचते है कि ससार मे वे प्राणी कैसे है जो इसमे रस लेने वाले होते है जिसेसे तन की हानि हो, धन की हानि हो, निद्रा की हानि हो । लेकिन जिसमे तन को आराम मिले, धन का बचाव हो, मन को शान्ति मिले, ऐसे सूत्र की वाणी मे जिनको रस नही आवे वैसे प्राणी को कैसे भव्य कहा जा सकता है ।

प्राचीन और आधुनिक स्थिति

आज हम नये वर्ष के प्रथम दिवस मे प्रवेश कर रहे है । जैन परम्परा, जिनशासन के प्रेमी आज के दिन को जेन सवत् कहते है, अत आज हमारे नये वर्ष का प्रारम्भ होता है । कार्तिक कृष्णा अमावस्या की अर्द्ध रात्रि के पश्चात अपुट्ठ वागरणा करते-करते भगवान मोक्ष पधारे ।

भव्य जीव इसका रुचि से अध्ययन करते है। समय-समय पर कुछ मिनटो के लिए भले ही दूसरे शास्त्र आदि वदलते रहे, लेकिन उत्तराध्ययन सूत्र का चाहे नित्य एक ही अध्याय पढे, लेकिन पढेगे जरूर। जैसे हिन्दू लोग गीता और रामायण पढते है।

स्वाध्याय मे रस लें

कई भाई-वहिन कुछ मूल पाठ पढकर सतोप कर लेते है लेकिन उनको ह्रस्व दीर्घ का भी पता नही रहता, इस तरह पढने से उनको रस नही आयेगा, एकाग्रता नही होगी, ज्ञान का प्रचार नही होगा। हम यह चाहेगे कि विना किसी भेदभाव के सव लोग मन मे निश्चय करके इसका स्वाध्याय करना शुरू करे। इसमे किसी का लगाव नही हो, मैं बोलता हूँ तो मेरा लगाव नही। पन्नालालजी महाराज साहव ने स्वाध्याय की वात कह दी या और सतो ने कह दी या और किसी ने कोई पुस्तक लिख दी उसका स्वाध्याय करेगे या दिवाकरजी महाराज ने निर्ग्रन्थ प्रवचन लिखी उसको पढेगे या जवाहरलाल जी महाराज साहव की जवाहर किरणावली पढेगे। तो अलग-अलग लोग अलग पुस्तकें पढते रहेगे तो इसमे स्वाध्याय मे एकरूपता नही आयेगी। घर-घर मे गीता की तरह एक ही सूत्र का नित्य पाठ हो उसके लिए उत्तराध्ययन सूत्र सवको मान्य होना चाहिए। चाहे हस्तीमलजी कहे चाहे और कोई कहे अच्छी वात को तेरा मेरा कहकर स्वीकार नही करेंगे, तो आप ज्ञान से वचित रह जायेगे, माल नही ले सकेगे। अच्छी वात को तेरे-मेरे का ख्याल छोडकर जीवन मे उतारना चाहिए।

आज के नये दिन मे यदि आप इस प्रकार का सकल्प स्वीकार करके शुभारभ कर दे तो मैं समझता हूँ कि घर-घर मे जैन समाज के लोग उत्तराध्ययन सूत्र का नियमित पारायण करने लग जायेगे और एक दिन आप इसकी परीक्षा देने को भी तैयार हो सकेगे।

उत्तराध्ययन सूत्र का हिन्दी मे प्रकाशन आचार्य श्री अमोलक ऋषि जी महाराज साहव ने करवाया। इधर सेठिया जी के यहाँ से भी प्रकाशन हुआ है। आप लोगो मे से शायद बहुतो को पता नही होगा, इसलिए मैंने जानकारी दे दी।

भगवान महावीर की अन्तिम वाणी

यह सूत्र उत्तर याने प्रधान भी है और अन्तिम भी है। पिता-पुत्र

का जीवन निर्माण करने के लिए जन्मभर तक शिक्षा देता है कदाचित लड़का बाप की उन शिक्षाओं को भूल सकता है लेकिन एक दिन बाप जब संसार से विदा होने लगता है तब बेटे से कहता है कि मेरी ये दो बातें हैं इनको तुम याद रखना। सपूत बेटा है तो पिता की अन्तिम दो बातों को सदा याद रखता है। इसी तरह से भगवान महावीर की अन्तिम वाणी यह उत्तराध्ययन सूत्र है इसको भुलाना नहीं चाहिए।

इसको धारण करके आप और हम इसकी आराधना करेंगे तो जीवन में कल्याण प्राप्त होगा।

जैन स्थानक, मिन्ट स्ट्रीट, मद्रास
(दिनांक ८-११-८०; समय ८.३० प्रात.)

२७

आवरण हटाइये

।

वीर सर्व-सुरासुरेन्द्र महितो, वीरं बुधा सश्रिताः ।
वीरेणाभिहत स्वकर्म-निचयो, वीराय नित्यं नम ॥
वीरात्तीर्थमिद प्रवृत्तमतुल वीरस्य घोर तपो ।
वीरे श्री-धृति-कान्ति-कीर्ति-निचयो, हे वीर भद्रं विश ॥

धर्मप्रेमी बन्धुओ !

आज निर्वाण पर्व के बाद दूसरा दिवस है—वर्ष के प्रारम्भिक मगल प्रभात के बाद का दूसरा दिन है। पक्ष का भी दूसरा दिन है और नये वर्ष का भी दूसरा दिन है। सयोगवश दूसरा दिन ऐसा है कि जब चन्द्रोदय होता है, यह वर्द्धमान प्रकाश का दिन है। दूज कृष्णपक्ष की भी होती है और दूज शुक्लपक्ष की भी होती है। शुक्लपक्ष की दूज गगन मडल मे चन्द्र का प्रारम्भिक दर्शन करने का निमित्त बनती है। द्वितीया के दिन गगन-मडल मे चन्द्र छोटी-सी रेखा के रूप मे दिखाई देता है लेकिन वह वर्द्धमान है।

भव्य प्राणी स्वयं शुक्लपक्षी चन्द्र

इसी प्रकार भव्य प्राणी के लिए जीव स्वय चन्द्र है। आपने कभी २५ बोल मे पढा होगा, सुना होगा, वहाँ जीव के लिए कहा कि जीव का गुण क्या है? आत्म द्रव्य का गुण क्या है? "उपयोगलक्षणो जीव" जीव उपयोग लक्षण वाला है।

समझाने के लिए कहा कि चन्द्र कला जैसे समय को पाकर घटती है और आवरण हटने से बढती है उसी तरह से जीव का उपयोग गुण भी बढता एव घटता है।

एक समय आप हम एकेन्द्रिय अवस्था मे थे। आप की हमारी चेतना-कला दूज के चन्द्र से भी कम थी। दूज का चन्द्र जरा दर्शनीय

सोचने का, समझने का, चिन्तन करने का ख्याल उसका बढता-गया। यह लौकिक ज्ञान है।

कितनी उन्नति की ?

लेकिन एक होता है आध्यात्मिक ज्ञान। यदि आपसे पूछ लूँ कि क्या आपकी ५० वर्ष की जिन्दगी वोध दशा मे वीती ? लौकिक ज्ञान मे आपने काफी विकास कर लिया लेकिन आध्यात्मिक ज्ञान मे कितना विकास किया ? आपने जैन श्रावक कुल मे जन्म लिया। उसके वाद किसी के ३० साल वीते, किसी के ४० साल वीते और किसी के ५० वर्ष वीते। सामायिक करते-करते भी आपके कई वर्ष वीत गये। मै उन भाइयो से पूछूँ कि आपने सामायिक करते-करते धार्मिक ज्ञान कितना मिलाया, शायद जबाब देने के लिए सबके पास सामग्री नही है। जवाब देने के लिए आप तैयार नही होगे, क्योकि जवाव क्या दे ?

लडका दुकान पर बैठता है लेकिन व्यवसाय मे उसने तरक्की नही की। उससे उसका बाप पूछे कि दस वर्ष हो गये मद्रास मे दुकान करते हुए अव तक तूने कितना धन उपार्जित किया ? लेकिन जो बच्चा दुकान लेकर तो बैठा है लेकिन दस वर्षो मे भी उसकी इन्कम नही बढी, जैसा आया वैसा खर्च होगया। वह अपते पिता को क्या वतावे कि उसने कितना कमाया। अरे भाई, दस वर्ष हो गये मद्रास जैसे नगर मे आये हुए। इतने वडे समाज मे, करोडपतियो के वीच मे बैठा है, तेरे भाई लाखो मिला रहे है, तू नही कमा रहा है, तो वह वच्चा वाप को प्यारा लगेगा क्या ? यह तो एक को सम्बोधन करके कह दिया, वैसे ही आप सव अपने-अपने मन मे समझ सकते हैं। दस वर्ष वीत जाने पर भी नही कमा सका है तो उस वच्चे के मन मे प्रसन्नता होगी क्या ? वह प्रसन्न मुद्रा से पिताजी से आँख मिला सकेगा क्या ? वह प्रसन्न मन से बात नही करेगा। यह तो हुई ससार की वात।

इसी तरह से हम आध्यात्मिक चेतना के विकास की दृष्टि से भगवान के चरणो मे क्या उत्तर देगे, गुरु के चरणो मे क्या उत्तर देगे, यदि हमने ज्ञान का विकास नही किया है तो ? इसलिए हमको, आपको इस दिशा मे सोचना है।

आज शुक्ल पक्ष की दूज है। गगन मडल मे चन्द्र आज आवरण हटाकर उदित होगा। आज उदित होगा उससे कल किरणे कुछ और विकास करेगी। अब हम भी इस आकाश मे खड़े हैं और हमको भी

जैन परम्परा—आत्मवादी, पुरुषार्थवादी

जैन परम्परा नियतिवादी नही है, कर्मवादी नही है, भाग्यवादी नही है। जैन परम्परा भगवतवादी भी नही है। वह आत्मवादी है, पुरुषार्थ वादी है। इसलिए भगवान कहते है कि मानव ! यदि तेरे को कर्मो के बधन काटने है तो अपने आप पुरुषार्थ करता जा। यदि तू अपने आप जगकर चला तो आवरण दूर हो जायगा। लेकिन जगकर नही चला तो आवरण दूर होने वाला नहीं है। जैसा कि मैने पहले कहा था, समवायाग सूत्र का पहला समवाय कहता है कि जो साधक साधना मे लगा है, साधु वन गया है या श्रावक व्रत अगीकार कर लिया है वह अपने व्रत की आराधना करता है, नियम की आराधना करता है।

व्रत भी हमारे यहाँ दो तरह के वताये है। कौन-कौन से, कोई महानुभाव वोलेंगे ?

दो प्रकार के व्रत

एक मूलव्रत और एक उत्तरव्रत—ऐसे दो प्रकार के व्रत होते हैं। जिसको हम मूलगुण और उत्तरगुण कहते है। श्रावक के भी दो प्रकार के व्रत है और साधु के भी दो प्रकार के व्रत है। एक साधु ने नवकारसी की और एक साधु ने एकान्तरे का व्रत किया। दूसरे ने एकान्तरे का व्रत स्वीकार नही किया लेकिन फिर भी वह सर्वव्रती कहलाता है। इसका क्या कारण है ? इसका कारण यह है कि वह मूलव्रत के पाये को पकड करके चल रहा है। मूलव्रत कपलसरी (Compulsory) या अनिवार्य है और उत्तरव्रत ऐच्छिक (Optional) है। अत मूलव्रत के विना नहीं चलता और उत्तरव्रत कम करना या ज्यादा करना अथवा नही कर सके तो नहीं करना, यह अपनी-अपनी स्थिति और अनुकूलता पर निर्भर करता है।

१० प्रकार के जो पच्चक्खाण है वे उत्तरव्रत है।

अहिंसा, साधु-श्रावक दोनो के लिए मूल व्रत

श्रावको के लिए अहिंसा अणुव्रत है वह मूलव्रत है। हम साधुओ की अहिंसा महाव्रत है लेकिन यह श्रावक और साधु दोनो के लिए मूलव्रत में आती है। हमारी अहिंसा क्या है ? छोटे से लेकर वडे जीव तक की हिंसा करनी नही, करानी नही और हिंसा करने वाले का अनुमोदन करना नही, मन से, वाणी से और काया से। हम साधु तीन करण और तीन योग से इसका पालन करते है।

आपकी अहिंसा भी मूलव्रत है। चाहे आपने कोई व्रत धारण किया है तब भी ठीक और यदि व्रत धारण नहीं किया है तब भी व्यवहार में दूसरे लोगों मे जैन नाम से क्या समझा जाता है ? दूसरे लोग यह समझते है कि जैन है तो ये हिंसा के त्यागी होने चाहिए। कितने त्यागी है यह कौन समझेगा ? यह तो हमारे जैसे साधु समझेंगे कि यहाँ पर ५०० आदमी बैठे है उनमे से पाँच भी व्रतधारी है या नही। लेकिन दुनिया के दूसरे लोग समझेंगे कि ये जैन लोग है, हिंसा नही करने वाले है। हिंसा का धन्धा नहीं करने वाले हैं। खाने-पीने के लिए जो आरम्भ होता है उसमे भी मजबूरी समझते है, लेकिन करना पड़ता है।

लेकिन खाने-पीने के अलावा प्रदर्शन आदि दिखावे का काम है, ठाठ-बाट दिखाने का है वह किसी के घर पर, कोठी के दरवाजे पर दूसरे लोग देखेंगे तो समझेंगे कि ये तो हमारी ही तरह हिंसा को छोडने वाले है। छोटी-मोटी हिंसा ये भी करते है, लेकिन ये चलते जीव को नही मारते है। बकरा, घेरा, मच्छी, अण्डा आदि को नही मारते है लेकिन वनस्पति को काटकर, झाड की डाली उखाड़ कर ये भी दीपावली के दिन शो करने के रूप मे हजारो दीपक लगाते है। यह देखकर अजैन लोग सोचेंगे कि जैन श्रावक के मकान पर चारो ओर हरी पत्तियो की वन्दनवार लगी हुई हैं तो हम प्रवृत्तिवादी हिन्दू लगावे उसमे क्या हर्ज है।

प्रवृत्तिवादी और निवृत्तिवादी

हिन्दू प्रवृत्तिवादी है और जैन निवृत्तिवादी है। आप कौन है ? निवृत्तिवादी। कहने मे या चलने में ? बात को समझिये चाहे आप कर सकते हैं या नही कर सकते है लेकिन भावो को पकडिये। वास्तव मे आप निवृत्तिवादी है, क्योंकि जो निर्वाणवादी है वह निवृत्तिवादी है। आप स्वर्ग चाहते है, देव बनना चाहते है या मुक्त होना चाहते है ? एक भाई कह रहे हैं कि मुक्त होना चाहते है लेकिन कहीं ऐसा न हो कि सोने की जगह हीरे-जवाहरात की लड़ियाँ लटकाना चाहते है। देवो की ऋद्धि पाना चाहते हो, स्वर्ग का इन्द्रासन पावे, इस प्रकार की मनोभावना तो नहीं है। सभी सोच लेना मन मे। अभी जल्दबाजी करने की आवश्यकता नही है।

तो इसके लिए क्या करना ? हम निवृत्तिवादी है क्योंकि हम निर्वाणवादी है। स्वर्गवादी आरम्भ करे, यज्ञ करे, फूल-पत्ते वृक्षो को काटकर शोभा बढावें तो उनके लिए चल सकता है। लेकिन जो अपने

आप को निर्वाणवादी कहते है, मोक्षवादी या निवृत्तिवादी कहलाते है वे आँख मीचकर आरम्भ करेंगे तो आप ईमानदारी से सोचना कि वे श्रावक कहलाने लायक, जैन कहलाने लायक ओर जैन धर्म को शोभा वढाने वाले होगे क्या ? इसका फैसला आप स्वय करिए ।

उत्तरव्रत सरल

मै कह रहा था कि व्रत दो तरह के है—मूलव्रत और उत्तरव्रत । आज उत्तरव्रत करना सहज है । आप मे से १०० भाई-वहिन उत्तरव्रत मे नवकारसी करने वाले मिल जायेगे । हर रोज नवकारसी करने वाले मिल जायेगे । दो-चार हरी वस्तु छोडने वाले मिल जायेगे । समूची हरी वस्तु छोडने वाले भी मिल जायेगे । दो दिन रात्रि मे खाणो नही या और किसी तरह का व्रत लेना है, तो पहले से ही छूट ले लेते है । गाँव पर-गाँव जावणो पडे या वीमारी होवे तो छूट है. आ तो आपारी भाषा है । बाहर जावो तो शायद नही पाल सके इण वास्ते छूट राखणी पडे । यह तो आड है । इस भाषा के साथ हम धर्म के मैदान मे खेल रहे है ।

उत्तरव्रत का महत्त्व, मूलव्रत के बाद

उत्तरव्रत के साथ हमको इस महावीर निर्वाण वर्ष के प्रारम्भिक मगल दिन मे थोडा-सा मूलव्रत को पकडना है । उत्तरव्रत करते हैं, अच्छा है, करते जाइये, उसके लिए निषेध की वात नही है, मना करने की वात नही है । लेकिन उत्तरव्रत को पकडकर मूलव्रत को भुलाकर सतोष करेंगे तो धोखे मे रहेगे । ऐसा मत कहना कि म्हाने तो महाराज कहे ज्यो करा हा । मैं तो अज्ञानी हा लेकिन महाराज ने तो देखणो चाहिए । लेकिन महाराज भी आ बात नही कही । आप ऐसी वात नही कहे, इण वास्ते आपरो पर्दो दूर करके बता दूँ आप यह मत समझे कि सदा से कर रहे हैं, वही ठीक है । आप यह खयाल रखे कि सारे उत्तरव्रत को कीमत, उत्तरव्रत का मूल्य, उसका महत्त्व मूलव्रत के पीछे है ।

सुर और असुरकुमार देव

मूलव्रत के भी दो रूप हैं । एक वाहरी रूप है और एक भीतरी रूप है । हमारे समवायाग सूत्र मे जो पीछे का सूत्र चला उसमे बताया गया कि विराधना के रास्ते पर चलने वाले लोग श्रावक और श्रमणपद से जीवन समाप्त करके भी असुरयोनि मे चले जाते है । असुर योनि, देव योनि से हल्की मानी जाती है । इसका नाम भी असुर है । सुर और असुर

आम लोक-परम्परा मे कहते है देव और दानव। हमारा शास्त्रीय शब्द है सुर और असुर। भवनपति जाति के देव असुरकुमार गिने जाते है।

असुरकुमार भी दो प्रकार के है। उनका निवासस्थल है दक्षिण-उत्तर अधोलोक मे। उत्तर और दक्षिण के इन्द्र भी अलग है। वलि उत्तर क्षेत्र का अधिपति है और चमरेन्द्र का काम दक्षिण दिशा के क्षेत्र का सरक्षण करना, सभाल करना, उसके प्रति नजर रखना आदि है। इन असुरकुमारो मे कुछ ऐसी जाति के देव हैं जिनको नरक भूमि या नरकावास के निकट रहना पडता है। वे आकार से, कर्म से, प्रकार से, वाणी से, लेश्या से—सव तरह से हीन दशा का अनुभव करते है।

शास्त्रो मे कहा है कि यदि तुम्हारा उत्तरव्रत चल रहा है, उपवास किया जा रहा है, उपवास के साथ पौपध भी किया जा रहा है, जैसा कि नन्दनमणिहार ने किया। वह किस जमाने का श्रावक था? आज के जमाने का नही और उसका गुरु कोई उपदेश देने वाला आज के जमाने जैसा सामान्यसाधु-साध्वी नही था। गुरु वनने वाला भी ऊँचे से ऊँचा था और चेला वनने वाला नन्दन भी उच्च आत्मा था। उसने सकल्प कर लिया कि जितनी पूँजी मेरे पास है उससे आगे वढाऊँगा नही। आप मे से शायद किसी की ऐसी नीयत नही होगी कि चाहे उसके पास भरपूर खाने जितना हो लेकिन उससे यदि कहा जाय कि भाई ठीक है, घटा नही सकता, छोड नही सकता तो यह सकल्प कर ले कि जितना अपने पास है उससे अधिक नही वढाऊँगा। नयी आय होगी उसका वितरण करने जाना है, नया सग्रह करके तेरी पूँजी को नही वढाना है। ऐसा कोई कर सकता है क्या आप मे से? लेकिन नन्दन ने पहले ही उपदेश मे कहा कि भगवन्! मै अपने धन को नही वढाऊँगा। धन्धा चल रहा है तो इनकम भी होगी। पूरा खर्चा करूँ तो भी कुछ न कुछ वढने की सम्भावना है।

श्रावक के मूलगुण तो हुए पाँच—वडी हिंसा, वडा झूठ, चोरी, कुशील-त्याग-स्वदार सतोप और पाँचवाँ है इच्छा का परिमाण।

परिग्रह-परिमाण सच्चे श्रावक का गुण

तुम्हारी कमाई तो हो रही है लेकिन सग्रह नही करने का मन मे संकल्प है, इच्छा है, ख्याल है, उसका एक लिमिट कर लो कि कितना कमाना है। मद्रास की सारी इन्कम अथवा पूँजी अपने घर मे ले आयेंगे

ऐसा तो कही होना सम्भव नही है। तव भी यदि दस आदमी जो बाजार मे रहने वाले है उन सव की कमाई आप अपनी तरफ खीच ले तो उन दस आदमियो मे असतोष बढेगा या नही? आपको वे आराम से रहने देगे? उनकी कमाई बन्द हो रही है और आप आराम से अपनी हवेलियो मे बैठे हैं। जव उनको नही मिलेगा और भूखे रहेगे और आप के यहाँ हलवा वन रहा है तो क्या वे आँख मीच कर देखते रहेगे? आप पर हमला तो नही करेंगे? सोच लेना, बोलने की जरूरत नही है। इसलिए सच्चा श्रावक वह है जो अपने परिग्रह का परिमाण करता है इच्छा पर रोक लगाता है, जैसा आता है वैसा ही उसको सघ की सेवा मे, समाज की सेवा मे, ज्ञान, दर्शन चारित्र की अभिवृद्धि मे लगाता है और अच्छे कामो मे भी अपनी सम्पत्ति को त्यागता रहे ।

बाह्य शब्दो पर आधारित प्रवृत्ति : श्रद्धा का वि रूप

नन्दनमणिहार ने भी सोचा कि अपनी सम्पत्ति का सदुपयोग इस तरह से करना चाहिए। उसने धर्मशालाओं का निर्माण कराया, बगीचे लगवाये, छायादार वृक्ष लगवाये, गरीबो के लिए भोजन आदि की व्यवस्था करता रहा। चारो ओर उसकी वाह वाही होने लगी। चारो ओर से 'वाह वाही' की आवाज, 'धन्य हो नन्दन !' की आवाज उसके कानो मे आने लगी । नतीजा यह हुआ कि अहकार जग गया। आध्यात्मिक रस को लोकैषणा मे भूल गया, वीतराग वाणी को भूल गया। यह सुनकर कि धन्य हो नन्दन, कितना बड़ा धर्मी है, बाग-बगीचे हमारे लिए लगवा दिये, हमारे लिए धर्मशालाये खुलवा दी। धन्य धन्य की आवाज सुनता हुआ वह सोचता है इतने दिन तक मैंने नवकारसी, पोरसी की, उपवास किये, धर्म तो यह है कितने लोग वाह-वाही कर रहे है। श्रद्धा का रूप विगडा ।

वाहरी शब्दो पर टिकने वाली प्रवृत्ति की जाय तो आर्तध्यान आना जरूरी है। उसको आर्तध्यान सताने लगा। आयु बध किया। जो दोष लगा, चचलता आई उसकी आलोचना नही की। चचलता आ सकती है, चूक हो सकती है, विराधना भी हो सकती है। विराधना हो सकती है तो उसकी सफाई भी हो सकती है। चलते-चलते कपडे पर धूलि या मैला लग सकता है तो कपडे को धोकर उजला भी किया जा सकता है। दीपावली की प्रभात है और मगल दिन है लेकिन मगल दिन में कोई रामा-सामा करने आवे और इधर-उधर की पुरानी वात याद कर ले तो

मेढक मे हो गयी । वह अपनी तरह आदमी नही था, लाखो करोडो का मालिक नही था । था तो मेढक ही लेकिन सच्ची भक्ति वाला था । उसने दबजाने की चिन्ता नही की । मन मे किसी प्रकार का आर्त ध्यान नही । उसने कहा कि हे भगवन् ! मैं आपके चरणो मे हिंसा, चोरी, झूठ, कुशील आदि सम्पूर्ण पापो का त्याग करता हूँ । आहार-विहार का त्याग करता हूँ, ऐसी प्रार्थना करता हुआ वह भगवान् के चरणो मे उनको याद करता हुआ अनशन स्वीकार कर लेता है । उत्तरगुण से वह मूलगुण मे पहुँचा और आत्मा मे पहुँचा ।

बाहरी रूप मे व्रत रहेगा, लेकिन भीतरी रूप मे मूलगुण, समता-भाव, कषाय का उपशम, वीर-वाणी का स्मरण यह हमारे मूलव्रत के प्राण है । यदि यह प्राण रहता है तो मूलव्रत की पूर्ण कीमत है । वह मेढक सतोष के साथ मरा । नतीजा यह हुआ कि वहाँ से मरकर वह वैमानिक जाति का देव बनता है—बडी ऋद्धि वाला मडूक देव बनता है और देव रूप मे वह भगवान् के चरणो मे वदन करने के लिए आया । श्रोताओ के लिए वह आकर्षण का विषय बन गया । इन्द्रभूति गौतम ने भगवान् से पूछ ही लिया कि भगवन् ! यह देव कौन है ? भगवान ने उनको उस देव का सारा वृत्तान्त सुनाया ।

मेरे कहने का मतलब यह है कि मूलगुण को सुधार करके प्राणी निर्मल रूप बनाता है तो पशु योनि मे भी देव योनि मे सीधा जा सकता है । मनुष्य योनि पाकर भी बारहव्रत धारी श्रावक हो गया या सर्वव्रती साधु हो गया । साधु या श्रावक का नाम धराया लेकिन निर्मलता से पालन नही किया, जैसे चन्द्र का आवरण हटने से उजाला होता है लेकिन गगन मे आवरण रहता है तो उजाला नही होता । उसी तरह से, हमारी आत्मा पर भी आवरण लगा है, उसको हटाकर ज्ञान की विमल ज्योति प्रकट करेंगे, तब अँधेरा दूर होगा, प्रकाश आयगा । मार्ग-कुमार्ग का ज्ञान होगा और कुमार्ग को छोडकर सुमार्ग को अगीकार करेंगे तो भटकेंगे नही, अटकेंगे नही ।

आप भी यदि ऐसा करेंगे तो आनन्द, शान्ति प्राप्त करेंगे और परम पद के अधिकारी बन सकेंगे ।

जैन स्थानक, मिन्ट स्ट्रीट, मद्रास
(दि० ६-११-८०, समय ६ ५० प्रात)

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
115	2	पखी	पक्खी
117	15	तो इस प्रकार	इस पर
125	23	पट् कर्मों की करो कमाई	(यहां नहीं होना चाहिए)
134	1	450	980
138		मैल	मल
158	12	एक न दिन	एक न एक दिन
159	1	जग नर नारी	जन के नर नारी
163	21	प्रकट करदे	प्रकट करते
178	13	समय चला	समय से चला
180	1	किसी द्वारा	किसी के द्वारा
184	30	सकन है	सकता है
194	1	को	का
200	5	यह छोटा सा	छोटा सा
200	8	एकता	एक तो
200	10	53 दो जगह अशुद्ध है	5 दो जगह ठीक होना है
201	24	लोगस्स उज्जोअगरे न	लोगस्सउज्जअगरे
201	27	है	हो
203	20	व	न
205	20	सयम	सयम
206	14	चक्षदान	चक्षु दान
206	28	नेत्र दे दिये	नेत्र दिये
207	26	अर्ण	अणव
207	27	के	से
208	25	था कर्मबन्ध	थाकि कर्मबन्ध
209	25	काम राग एव	कामराग एव स्नेहराग दृष्टिराग
213	16	ने	से
230	4	देवजी	देवजि
240	8	(6)	(3)
242	24	विउट्ट	विअट्ट

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
242	24	विउट्टछउमेण	विअट्टछउमेण
242	27	विउट्ट	विअट्ट
242	29	,, ,,	,, ,, ,,
243-244	2-3		
244	4	निकल है	निकल चुका है
244	16	हरकत करी	हरकत री
244	22	ही बनकर	बनकर ही
245	4	पकटना	पकडनो
245	20	लेकिर	लेकिन
246	28	ससझिय	समझिये
245	17	साधना	साधना के
248	31	निगमे	जिसने
250	5	वाम	कम
253	18	विट्टट	विअट्ट
256	4	भी टिक	भी नही टिक
256	20	ब्रेमीन	ब्रेमोन
258	10	अनर्थ दण्ड कृत	अनथ दण्ड चिरमण कृत
258	11	कम्मोवगे	कम्मोचयमे
264	19	एग किरिया	एगा किरिया
264	20	एगे	एगा
270	4	जाने जग्गन्न	जाने की जग्गद
270	20	हमारे	अन्कों के
270	21	खुद	खुद
274	18	हिन्दुओं की	हिन्दुओ
274	3	विणिणाभिहन्ना.	वीणिणाभिहत.
276	16	एगे किरिया	एगा किरिया
276	16	एगे अकिरिया	एगा अकिरिया
286	26	उपा	उप

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
286	27	4—5	45
289	6	ओर	और
290	20	आचरण का ओर	आचरण की
290	28	जानी	जाने
294	29	मुलाना	बुलाना
301	28	एगे धम्मा	एगे धम्मे
301	30	एगे धम्मा	एगे धम्मे
305	8	जीव सत्य हैं	जीव शाश्वत है
306	1	विचार को	विचार एव आचार को
308	20	रहित फैलने	रहित प्रकाश फैलने
311	26	अनुमोनित	अनुमोदित
317	16	अज्ञान, मोह	अज्ञान और मोह
317	28	मैं भी उदेश दे दूंगा	मैं भी उपदेश दे दूंगा
322	11	त्यागता रहे	त्यागता रहता है।

पाण्डुलिपि की अस्पष्ट टाइप प्रति तथा प्रूफ सशोधन
के प्रमादवश जो भूले रह गई हैं, उसके लिए
हमे खेद है, कृपया पाठक अपनी
प्रति शुद्ध कर पढने का
कष्ट करे।

गुरु हस्ती का यह आव्हान।
सामायिक, स्वाध्याय महान् ॥

युग प्रवर्तक महान् अध्यात्मयोगी आचार्यदेव के अमोघ उपदेशो से उद्भूत एवं अनुप्राणित हमारी संस्था जो घर-घर प्रभु महावीर की अमृतवाणी की गगा प्रवाहित कर जन-जन को अभ्युदय, उत्थान, उत्कर्प एव अपवर्ग के पथ पर अग्रसर करने मे अहर्निश प्रयत्नशील है—

—दूगड प्रतिष्ठान, मद्रास